· प्रकाशक ·
श्रीमती श्यामारानी
सोहम्-प्रकाशन
२३२, हॉर्नबी रोड,
बम्बई १.

: शाखा :
एफ. ९५, एवेन्यू रोड, बैंगलोर
थैरेसा विला, ओरलेम, मलाड,
बम्बई.

[मुखपृष्ठ के चित्रकार : श्री रामकुमार]

प्रथम-संस्करण
सितम्बर १९५७

मूल्य : तीन रुपये

राज-संस्करण [आर्ट पेपर पर] ग्यारह रुपये

मुद्रक · श्री नथमल दमाणी, ट्रेड एण्ड टूर प्रेस, २३२, हार्नबी रोड, बम्बई १

समर्पण :

बंधुश्रेष्ठ निरंजनलाल पोद्दार

को

सत्य के प्रणाम

चैरेमा विला, ओरलेम,
मलाड, बम्बई

स्पष्टीकरण :

उपन्यास की कथा-वस्तु द्वारा जिस उद्देश्य-विशेष की पुष्टि करने की चेष्टा की गयी है, वह अंतिम अध्याय में केन्द्रित नहीं है। वह प्रकारान्तर से सारी पुस्तक मे विभक्त है। इसलिए इस पुस्तक को पूरी इकाई माननेवालों के प्रति कृतज्ञ रहूंगा।

पुस्तक की विस्तृत भूमिका अत्यन्त जटिल और विवादास्पद होने कारण प्रकाशकीय समर्थन प्राप्त नहीं कर सकी। इसलिए उसे यहा प्रकाशित नहीं किया जा रहा है। लिहाजा, फैसला यह किया गया है, कि किसी अन्य उपयुक्त सज्जन द्वारा लिखी हुई भूमिका ही आगामी सस्करण मे दी जाय। चूंकि लेखक उससे सहमत है, इसलिए वह अपनी ओर से योग्य व्यक्तियों तक यह निमन्त्रण भेज रहा है।

राजस्थान की पृष्ठभूमि होने पर भी यह आञ्चलिक उपन्यास नहीं है। इसलिए राजस्थानी शब्दो का जहा कही प्रयोग हुआ है, वह वक्तव्य की पुष्टि और स्पष्टीकरण के लिए ही। प्रान्तीय भाषाओं के शब्द-प्रयोग, आशा है, इससे लाभदायक ही सिद्ध होंगे।

*

इस कथा-वस्तु की सत्यता के बारे मे लेखक का मौन यदि स्वीकार कर लिया जाय, तो शेष प्रेरणात्मक तत्वों के प्रति कृतज्ञता प्रगट करना सरल और सभव हो जायगा।

—श्रीसत्य

एक :

मुंह-अंधेरे उठ कर, मीरांवाई के सुप्रसिद्ध भजन 'मने चाकर राखो जी' गाती हुई पारो घर-गृहस्थी के काम धंधे में लग गयी। भगवान श्रीकृष्णचन्द्र ने मीरांवाई की चाकरी की कितनी कद्र की, सो तो वे ही जानें; लेकिन इस समय अखण्ड सौभाग्यवती श्रीमती पारो का यह एकान्त निवेदन, उसके पति श्रीमान राधामाधव को अत्यन्त संतोष प्रदान कर रहा था। ठंड काफी थी। लिहाजा उसके विपुल आतंक से व्याकुल राधामाधव तीन-चार रजाइयों की सुखद गर्मी में, जागते हुए भी सोने का वहाना किये, चुपचाप पड़े थे।

इस समय सुवह के सात वजे होंगे। ठंड के कारण ओस कुछ घनी हो गयी है, इसलिए स्पष्ट कुछ भी दिखाई नहीं देता। फिर भी लालटेन के मध्यम पीले प्रकाश मे पारो का उत्साह रंजित रूप राधामाधव को वहुत ही भला लग रहा था। इतने वड़े मकान में गूंज रहा पारो का मधुर कंठ, निरंतर दही विलौने से झंकृत होती हुई एक-ध्वनि और वीच-वीच में वाहर गलियों में गूजरनियों द्वारा 'दूध लो' के आह्वाहन का स्वर, कुत्तों के व्यर्थ प्रलाप में डूव-सा जाता।

पारो ने दही की विलौनी एक ओर रखते हुए, सिर उंचा उठाकर, पति की ओर देखते हुए हौले से पूछा - अजी सुनते हो ?

–सुन रहा हूं।

–अव उठ जाओ, महाराज! दिन निकल आया है।

–सच कह रही हो ?

–हां जी, मेरे मालिक।

–ऐसा ही होगा। अच्छी वात है। तुम यहां तो आओ।

–जो हुक्म।

मक्खन के चिकने हाथ राख से मांज कर, पारो पति के पास उपस्थित हो गयी। पत्नी के आगमन की सभावना के कारण राधामाधव ने रजाइयों को सिर तक तान कर करवट वदल ली। पारो ने जवर्दस्ती रजाई हटाते हुए कहा –अजी, अब उठ भी जाइये। पानी गर्म हो गया है। मेहरवानी करके स्नान कर डालिये।

–बहुत ठड पड रही है, भगवती!' कहते हुए राधामाधव ने पारो का साग्रह निमत्रण अस्वीकार कर दिया, और उसका हाथ वगल में दवा कर, आंखे वन्द करके, छाती के वल लेट कर, फिर–से सोने का उपक्रम करने लगे। पति के इस अभद्र व्यवहार की मीमासा करती हुई पारो पलग पर वैठ गयी। उनके म थे पर अपना वायां हाथ फेरते हुए, वडे दुलार से मनुहार करते हुए उसने कहा – अव अधिक नहीं। सच, हाथ दर्द कर रहा है। छोड दो न ? देखते हो, पानी विलकुल ठडा हो गया है।

गर्म पानी के ठडे हो जाने से कितना आर्थिक अपव्यय होगा, विना इस वात पर गभीरतापूर्वक विचार किये, राधामाधव ने सिर हिला कर उत्तर दे दिया – होने दो। वापस गर्म हो जायगा।

पति पत्नी के वीच का यह नित्य–व्यवहार है। पति को सुवह उठा कर तैयार करने का कठिन काम रोज इसी तरह चलता है। लिहाजा आज भी वह उसी तरह उन्हें राजी करने मे व्यस्त थी, और पति महोदय पत्नी के आग्रह, झुझलाहट और स्नेह का आनन्द लेते हुए "ना–ना" करने में लगे हुए थे।

इसी समय वाहर दरवाजे के पास से किसी परिचित वालक की करुण कठस्वर से निकलनेवाली भयाक्रांत चीत्कार 'ओय मां ए' सुन कर दोनों चौंक–से उठे। रजाई दूर हटा कर, पत्नी की चुहलवाजी के आनन्द का परित्याग कर, ठड की विपुलता को भूलकर, राधामाधव फुर्ति से उठ खडे हुए। आंगन पार करके, दरवाजा खोल कर वाहर निकल आये।

सामने वारह वर्षीय गोपाल अपने एक पाव पर हाथ रखे, डर के मारे काप रहा था। राधामाधव को देखकर कुछ आश्वस्त–सा होकर वह उठ खडा हुआ, और दौडकर उनसे लिपट गया।

–क्या हुआ रे ?' पूछते हुए भी राधामाधव वस्तुस्थिति समझ गये। गोपाल के ठीक सामने इस समय भी गली का कुत्ता शेर–वव्वर पूछ तान कर खडा था।

राधामाधव ने कुत्ते को डाटते हुए कहा·– अरे वब्बर ! यह तो अपना गोपाल है। चुप।

कुत्ता उनकी भाषा समझ गया। वल्कि कुछ लज्जित–सा हो पूंछ हिला कर, भूल के लिए कूं–कूं के स्वर में क्षमायाचना भी करने लगा।

राधामाधव नीचे झुक कर देखने लगे कि कुत्ते ने कहा आक्रमण किया है ?'दुश्चिन्ता के मारे उनके माथे पर वल पड़ गये। डर लगा—कहीं कुत्ता पागल तो नहीं हो गया ?

इसी समय पारो वाहर चली आयी। गोपाल के सद्यघाव की ओर देख कर करुण सहानुभूति के स्वर में वोलीः– स्सिस, देखो तो !

लेकिन पारो को देखकर राधामाधव इस चोट की तुच्छता.प्रमाणित करने के लिए प्रस्तुत हो गये। वोले·– अजी, अपना गोपाल मर्द आदमी है। ऊहं ! दो दात ही तो गड़े हैं। जरा–सी ही तो लगी है। थोड़ा–सा मलहम लगाते ही सव साफ हो जायगा।

कहते हुए राधामाधव उठ खड़े हुए। गोपाल का हाथ पकड़ कर अन्दर लाते हुए पूछा – आज तो तूं वड़ी जल्दी आ गया रे गोपाल ?

पारो ने चिन्तित होकर पूछा – कुत्ता पागल तो नहीं हो गया ?

राधामाधव का सन्देह फिर उठ खड़ा हुआ। अनिश्चित स्वर में वोले – अरे, अपना शेरवव्वर ही तो था।

–लेकिन कौन जाने क्या हो गया हो ? उसके मुंहसे लार तो नहीं टपक रही थी ?

–कहा, मैने देखी तो नहीं।

–लेकिन एक वार अस्पताल तक जाकर वड़े डाक्टर को जरूर दिखा लाओ। पागल कुत्ते के काटने से आदमी पागल नहीं हो जाता ?

–हां, हां दिखा लाऊंगा। लेकिन, भगवती, डाक्टर से वढिया इलाज तो मैं कर सकता हूं। एक ला नींवू और दो ले आ मिर्चे, घर के दरवाजे पर सुई से छेद कर धागे में लटका दे। सव अला–वला नींवू और मिर्चों में चली जायगी दो दिन में सड़ कर अलग हो जायगा। फिर इसे कुछ भी नहीं होनेवाला।

पारो इस टोटके को तुरन्त कर डालने में व्यस्त हो गयी।

इतनी देर वाद राधामाधव को फिर ख्याल आया, कि ठंड कितनी भयंकर है। इसलिए गोपाल के साथ अगीठी के पास वैठते हुए, पारो को लक्ष्य करके

कहने लगे – अभी तक तो सूरजनारायण नहीं निकले। आ गोपाल, थोड़ा ताप लें। और सुनो, धणियाणी, अन्दर से जरा मलहम तो ले आना।

सूई से नींबू और मिर्चें पिरोती हुई पारो मलहम ले आई। पति के हाथ में देती हुई बोली – अभी तक दिन नहीं निकला ? एक इस गोपाल को देखो, सुबह–सुबह नहा–धोकर चला आया है। क्यों गोपाल, स्नान की या नहीं तूने ?

गोपाल ने सिर हिला कर जवाब दे दिया – कर ली।

उसके स्वर से प्रकट उदासी को लक्ष्य करके पारो ने हंसकर कहा – गोपाल बाबू, इतने सवेरे आते हो, तो साथ में एक लकड़ी भी रख लिया करो। ये गली के कुत्ते तो आजकल ऐसे पागल हुए हैं, कि अपना–पराया कुछ भी नहीं समझते।

राधामाधव अग्नि प्रज्वलित करने में लगे हुए थे। गोपाल ने पारो की बात का जवाब नहीं दिया। इतना ही कहा – मुझे छाछ दे दो, काकी!

गोपाल के हाथ से तपेली लेकर उसमें छाछ भरते हुए पारो ने फिर–से गोपाल की मनुहार की – गोपाल बाबू, आपासा की तबीयत कैसी है ?

राधामाधव ने पूछा – तेरे इम्तिहान कब से हैं गोपाल ?

गोपाल ने दोनों की किसी भी बात का जवाब नहीं दिया। मुह लटकाये छाछ की भरी तपेली लेकर लंगड़ाता हुआ चुपचाप जाने लगा। सचमुच मन–ही–मन वह काका और काकी से आज बेहद नाराज था। इन्होंने ही तो इस शेरबब्बर को पाल रखा है कि जो आये–जाये उसे काटता फिरे।

राधामाधव ने गोपाल को खींचकर वापस अपने पास बिठाकर हसते हुए पूछा – अपनी काकी पर नाराज है क्या गोपाल ? सच बताना बेटा।

गोपाल ने भागने की जिद्द नहीं की। वहीं बैठ गया। काकी की ओर उसने देखा अवश्य, लेकिन बोला कुछ नहीं। उसे अपनी गोद में भरते हुए राधामाधव ने कहा – कोई बात नहीं। नाराज होना बिल्कुल वाजबी है। मैं भी हू। लेकिन गोपाल, तुम हो मेरे बेटे। फिर किस बात की परवाह ? तुम बैठो यहां आराम से। मक्खन मिलेगा, खाजे मिलेंगे, दही मिलेगा। सब कुछ मिलेगा। बैठ जाओ। बैठ जाओ भाई। आराम से बैठ जाओ। ले आओ भगवती, जो कुछ तुम्हारे घर में हो।

गोपाल मुन-मुन करते हुए विरोध करने लगा। लेकिन राधामाधव ने उस ओर ध्यान ही नहीं दिया। पारो को लक्ष्य करके कुछ उच्च स्वर में कहते रहे:-मेरा गोपाल है राजा बेटा। अपने काका के कहने से तो जान दे दे। हा।

--अभी आई।' कहती हुई पारो घर के मुख्य दरवाजे पर कुत्ते के काटने से बचनेवाले मंत्रपूत टोटके को लटका आई। वापस आकर गोपाल के माथे पर हाथ फेरते हुए बोली -अजी, जाओ भी। गोपाल नाश्ता करेगा तो मेरे कहने से। अच्छा गोपाल, एक बात बताओ, खाजे मै बनाती हूं या तुम्हारे काका? दही मै जमाती हूं, कि तुम्हारे ये महा-आलसी काकाजी? छोड़ो इन्हे, आओ, मैं तुम्हें परोसती हूं।

--ना गोपाल, कहीं जाना मत। स्त्रियों की माया बड़ी विचित्र होती है। अभी से उसमें मत फंस।

राधामाधव की इस अभद्र मजाक का पारो ने कोई जवाब नहीं दिया।

गोपाल ने दोनों की बात अनसुनी करके कहा -मुझे नाश्ता करना ही नहीं है। मै कोई मोदी के हाथ की खाता हूं? कभ्भी नहीं।

पारो ने हंस कर गोपाल की बात को दुहराते हुए कहा - कभ्भी नहीं? और उस दिन जो खा गया था सो?

बिना प्रतिवाद किये, उसी तरह रुठे हुए स्वर में गोपाल ने जवाब दिया - मोदी होते हैं, कंजूस। मक्खी-चूस। जरा-सी छाछ देते हैं, तो इतना बड़ा कुत्ता पाल कर रखते हैं, कि कहीं कोई आकर माग न ले जाय।

पारो ने बुरा नहीं माना। वह हंसती ही रही। राधामाधव निर्लिप्त भाव से यह सब सुन रहे थे। सिर उठा कर गोपाल की ओर देखकर कहने लगे - हा बेटा, तूं इससे नाराज है न? ठीक है, मै भी हूं। बेहद हूं।

--अच्छी बात है।' पारो ने कहा - अच्छा गोपाल, तो फिर मैं भी तुम्हारे यहां आकर कभी कुछ खाऊंगी-पीऊंगी नहीं।

--लेकिन गोपाल, तूं मेरे कहने से कुछ खा-पी ले भइया। नहीं तो यह अकेली ही सारा हजम कर जायगी!

पारो अब अधिक जब्त नहीं कर सकी। बोली:- हां जी, तुम्हारे यहा ही पहली बार दही खाजे देखे! पीहर में तो जैसे हम घास-फूस ही खाते हो। हमारे यहां तो इतना सब नौकर-चाकर खा जाते हैं। कोई गिनती ही नहीं।

इतनी दांत-पीसी रोटी से तो पीहर की घास-फूस ही भली। सुन रे गोपाल, एक चिट्ठी लिख दे मेरे सुजानदेसर। मैं अब यहां नहीं रहूंगी।' कहते-कहते हमेशा की तरह पारो की आंखें छलछला आईं। आंचल से आंसू पोंछते हुए, अन्दर जाकर दही-खाजे ले आई। परोस कर गोपाल के सामने रख दिये।

राधामाधव ने इस ओर देखा तक नहीं। अग्नि में ईंधन डालते हुए धीरे से बोले – दुर्गा घट में है। कुछ बोल मत। चुपचाप खा ले भइया। इस गुस्से को देखकर तो मेरे प्राण कांपने लगे हैं।

इतना कह कर भयाक्रांत दुखी व्यक्ति के अभिनय से उन्होंने पारो को हंसा ही दिया। बोली – अब बस रहने भी दो। बहुत हो गया।

–और नहीं तो क्या? अच्छा गोपाल सुन, मां से जाकर कुत्ते के काटने की बात मत कहना। सब ठीक हो जायगा। डरने की कोई बात नहीं। टोटका तो कर ही दिया है।

गोपाल का गुस्सा अब तक कुछ कम हो गया था। इसलिए पारो काकी को चिढ़ाने के लिहाज से बोला – नहीं। नहीं कहूंगा। मां ने पूछा भी, तो बता दूंगा काकी के दांतों के निशान हैं।

पारो अग्नि के पास बैठ गयी। राधामाधव की ओर देखकर बोली –वाह, वाह। शाबास! क्या मीठी बात कही है! बाबू, कुछ दिनों तक इनके साथ और रह लो। गाली-गलौज भी सीख जाओगे।

गोपाल को चुप देखकर राधामाधव ने उसकी ओर से जवाब दिया – वाह, बुरी बात को बुरी कहने से ही कोई गाली-गलौज हो गयी? बिलकुल नहीं।

गोपाल ने समर्थन किया – हां, बिलकुल नहीं।

थोड़ी देर तक निस्तब्धता-सी छा गयी। राधामाधव और पारो दोनों मन ही मन इस छोटी-सी तिक्तता को हटाने का उपाय सोच रहे थे। राधामाधव ने पारो की ओर देखकर हौले से पूछा –बड़ी देर हो गयी, चुप हो? कुछ बोली नहीं?

पारो ने सहज स्वर में जवाब दिया – इस शेरबब्बर को यहां से निकाल दो। जान बचे। यह तो खैर हुई, कि ऐन वक्त पर हम पहुंच गये, नहीं तो देख लेना, तुम्हारा यह शेरबब्बर किसी न किसी दिन किसी के प्राण ही लेकर रहेगा। जिस दिन सिर पर बदनामी आयेगी, तब याद आयेगी कि मैं क्या कहती थी।

गोपाल ने बीच में बात काटते हुए पूछा.– काकी, सुजानदेसर चिठ्ठी भी तो लिखनी है। तुम्हें पीहर जाना है न? लाओ लिख दूं। सच कहता हूं काकी, तुम चली जाओ पीहर। और काका, काकी को भेज दो पीहर। बाद में बैठे-बैठे कुत्तों को जमा करके पालते रहिये। काकी, सुजानदेसर जाने की चिठ्ठी मैं लिख दूंगा।

इस काकी के नाना प्रकार के प्रलोभनो में आकर गोपाल ने अनेक वार सुजानदेसर चिठ्ठी लिख कर, पारो-काकी के रवाना होने की वार-तिथि तक लिख दी है। लेकिन लगता है, पीहरवालों ने उन तमाम चिठ्ठियों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। इसलिए कि आज तक गोपाल को प्रत्युत्तर पढने के लिए कभी बुलाया ही नहीं गया। फिर भी समय असमय पर अचानक आदेश मिलता है – लिख दे रे गोपाल, चिठ्ठी मेरे सुजानदेसर। अब मेरा यहा जी बिलकुल नहीं लगता। मै अगली ही चौथ को यहा से रवाना हो जाऊंगी।

लेकिन ये तमाम चिठ्ठिया आज तक डाक के बम्बे में डाली ही नहीं गयी लिहाजा पारो काकी यहीं पर विद्यमान हैं, और जी लगाने का अभ्यास कर रही हैं।

पारो की सुजानदेसर-यात्रा की बात सुनकर राधामाधव हो-हो करके जोर से हंस पड़े। कहने लगे – ना, देवी, ना। कोई कहीं नहीं जायगा। न शेरबब्बर, न धणियाणी तुम। उस शेरबब्बर से नाराज तो तू रोज ही होती है, लेकिन जिसे दोनों वख्त आराम से रोटी मिल जाय, वह यहा से क्यों जाने लगा? शेरबब्बर समझदार है। रही शेठाणी, तुम्हारे पीहर जाने की बात, सो तो तुम जा ही नही सकतीं। बडी जोर-जबरदस्ती करके तो तुम्हें घर लाया हूं। अपनी मर्जी से तुम थोड़े ही आ जातीं? सो कोई कहीं नहीं जायगा।

गोपाल कुछ कहना ही चाहता था, लेकिन इससे पहले पारो पति के सामने, घुटनों के बल बैठकर मुग्धभाव से उनकी ओर देखती हुई बोली – वाह जी! जाने नहीं देंगे? क्यों? चार साल हो गये तुम्हारे घर आये। एक दिन के लिये भी तुमने पीहर जाने की छुट्टी दी है? सावन के महीने में भी कोई लडकी ससुराल रहती होगी? लेकिन यह है बीकानेर, यहा के कायदे ही जगत से निराले हैं! संग-सहेलिया जहा भी कहीं मिल जाती हैं, तुम्हारी इतनी मजाक उड़ातीं हैं, कि मैं मारे लाज के मर-सी जाती हूं। अरे गोपाल, मेरा मुंह क्या देख रहा है, खा न?

राधामाधव ने ठंडी सास लेकर कहा –अच्छी बात है। जो जाना ही चाहता हो, उसे बाध कर तो रखा नही जा सकता। अपना-अपना भाग्य। सोचता

था। अब जिन्दगी आराम से कट जायगी। लेकिन लगता है, विधि को यह मंजूर नहीं। अच्छा गोपाल, जब तू परोपकार ही करता फिरता है, तो मेरा भी एक काम कर दे।

—काका, मेरा पेट भर गया।

पारो ने कृत्रिम नाराजगी के स्वर में गोपाल को डांटते हुए कहा – पेट भर गया? अरे, लड़कियां भी इससे ज्यादा खा लें। तुम कहते हो गोपाल मर्द आदमी है! ऐसे ही मर्द होते होंगे? देख लेना गोपाल के कभी मूछें नहीं निकलेंगी।

इस अवश्यम्भावी विपत्ति से भतीजे की रक्षा करने के लिहाज से राधामाधव ने बड़े आराम से जवाब दे दिया – अजी महारानीजी, यह चाहे, तो तुम्हारे सारे खाजे खत्म कर दे। क्या कहते हो, गोपाल! हो जाय, यह भी याद रखेगी।

गोपाल ने सिर हिला कर उत्तर दिया —ना काका। पेट भर गया। अब बस।

पारो ने थाली में कुछ खाजे और रखते हुए कहा – झूठे छोड़ दिये तो आज से तुम्हारा नाम 'गोपी' रख दूगी।

इस खतरे से बचने के लिए गोपाल चुपचाप खाने बैठ गया।

राधामाधव अपनी पुरानी बात का सिलसिला जोड़ते हुए कहने लगे – हां तो गोपाल, तेरी काकी चली जायगी पीहर, और तू लिख देना एक चिठ्ठी मेरे औघड़–बाबा को, कि अब घर–जजाल से पेट भर गया। बाबा। तृप्ति मिल गयी। बहुत सुख पाया। अब वापस शरण में ले लो।

समझदार आदमी की तरह सिर हिला कर गोपाल ने प्रसन्नचित्त से जवाब दिया – चिठ्ठिया तो मै दोनों की लिख दूगा, आप दोनों अपने–अपने घर चले भी जाय। लेकिन इस शेरबब्बर का क्या होगा? बस यही यहां रहेगा क्या?

लेकिन गोपाल की बात सुनने का धीरज पारो में नहीं रहा। दुखी होकर तीखे स्वर में पति को सम्बोधित करके कहने लगी – यह रहा रास्ता। कल जाते हो तो आज ही चले जाओ। मेरे लिए चाहे औघड़–बाबा के यहां पधारो, चाहे किसी और लुच्चे लफंगे के पास। अभी तक इन सबसे मन नहीं भरा? बच्चों के सामने ऐसी बातें करते कुछ तो लाज शर्म रखा करो।

सम्भवत राधामाधव कुछ इसी तरह के जवाब की आशा करते थे। इस लिए उनकी मुक्त हसी से सारा मकान एक बार फिर से गूज उठा। जरा दम लेकर बोले – बस हो गयी बात। न मै औघड़बाबा के यहां जाऊंगा, और न तुम

सुजानदेसर। कुत्ते को भी इस गली के सिवाय और कोई ठौर नहीं। सो वह भी यहीं रहेगा। अंजल-दाने की बात है, लक्ष्मी, अंजल दाने की। तभी तो संयोग कहां-कहां से किस-किस को मिला देता है, यह किसी को मालूम थोड़े ही हो सकता है?

गोपाल ने थाली के तमाम खाजे उदरस्थ करके कहा — अब बस काका, पेट भर गया। बिलकुल जगह नहीं रही। देखो।' कहते हुए उसने कुर्त्ता उठा कर, पेट को कड़ा करके प्रमाण प्रस्तुत कर दिया।

—चल, सास छोड़। देख तो बिलकुल गीला पड़ा है। अभी तो बहुत-सारी जगह है। बातें करते हो, इतनी लम्बी-लम्बी, और खाया नहीं जाता जरा-सा। खा चुपचाप। इतना-सा खाया कि पेट भर गया? गोपाल बाबू खाओगे-पीओगे नहीं, तो इसी तरह सूखे हुए रह जाओगे। कोई अपनी लड़की नहीं देगा।

राधामाधव अपनी बात कहते रहे — वाह! सेठाणी, वे भी दिन थे। तुम्हारा यह राधामाधव, औघड़बाबा के सत्संग में संसार के तमाम छल-प्रपंचों से दूर बैठा भगवत्भजन किया करता। एक दिन—

गत इतिहास के इस सुरुचिपूर्ण प्रकरण को वे अनेक बार अनेक प्रकार से समय असमय पर दुहरा चुके हैं। उन्हें मालूम है, कि इन सारी बातों से पारो का जी ही जलता है। उनकी अपनी मान्यता यह है कि गृहलक्ष्मी का इसी तरह जी जलाते-जलाते ही शादी के पिछले साल उन्होंने बड़े आराम से गुजार दिये। यदि पारो राधामाधव की ओर से निश्चिन्त हो जाय, तो बस घर-गृहस्थी के इस खेल को समाप्त होने मे देर न लगे।

यहा उनके गत इतिहास का संक्षेप में सिंहावलोकन कर लेना होगा।

विवाह से कुछ ही अर्से पहले तक वे औघड़बाबा नामक एक सिद्ध-वैरागी के सत्संग में मुग्धभाव से जमे हुए थे। भभूत मलने से आरंभ कर, भांग पीने तक के सारे योगाभ्यासों में वे अपने गुरुदेव के कर्म-काण्डों का मन लगाकर अनुगमन करने का सफल सर्टिफिकेट हासिल कर चुके थे। लोगों की मान्यता है, कि उसी औघड़बाबा की कृपा के कारण राधामाधव आंक-फरक के सौदे में पैसेवाले बन गये। पर वास्तव मे यह एक अत्यन्त जटिल और संदिग्ध विषय है, कि सट्टे

मे राधामाधव ने जो कुछ कमाया, वह औघड़बाबा के आशीर्वाद से, या अपने भाग्य के जोर से, किंवा सट्टे में रुपये कमाने के लोभ मे पैसे लगानेवाले बेवकूफों की वजह से। जो हो, यह अभ्रभेदी सत्य है कि विवाह के पश्चात सट्टे मे रुपये खाने का उनका वह काम बिलकुल बन्द हो गया। अचानक काम बन्द कर देने के कारणों का पता लगाने की बहुतों ने कोशिश की है। लेकिन सब मिलकर किसी एक निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सके। साथ ही औघड़बाबा का सत्संग भी हाथ से जाता रहा। फिर भी यदाकदा आज भी उन्हें अपने उस भूतकालीन सुनहले कर्मक्षेत्र की याद आ ही जाती है। लिहाजा यह सारा चर्वित-चर्वण पारो के सामने मधुर कलह से आरम्भ होकर, समझौते की कुछ छोटी-मोटी शर्तों के साथ समाप्त भी हो जाता।

गोपाल ने राधामाधव की बात काटते हुए कहा – अच्छा काका, तुम्हारे औघड़बाबा को यहां नहीं बुलाया जा सकता? यह शेरबब्बर उनका मन लगाकर खूब स्वागत करेगा।' इतना कह कर मारे हंसी के वह लोटपोट-सा हो गया।

राधामाधव का चेहरा क्षण भर के लिए उतर गया। गृहस्वामिनी गोपाल के इस बुद्धिमत्तापूर्ण प्रस्ताव से सचमुच बहुत ही प्रसन्न हुई। बोली – हां जी, बुला लो उन्हें यहां। मै भी ऐसा पाठ पढ़ाऊंगी, कि वे भी याद रखेंगे कि इस तरह हमेशा सबको नहीं ठगा जा सकता।

पारो की बात को दबाने के लिए राधामाधव कुछ ऊंचे स्वर मे कहते रहे – हां सेठाणी, बस इसी तरह आराम से बैठे-बैठे बाबा के पास धूनी तपा करता, और हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता, हे बाबा मुझे—

पारो ने मुंह बिगाड़ कर पति की अधूरी बात को काट कर पूरी करते हुए कहा – मुझे साधु भिखारी कर दे।

—नहीं। कहता था, बाबा, मुझे पारो जैसी लुगाई दे दे।

—हां जी, उसी लफंगे के कहने से ही तो मैं यहां आयी हूं।

—वे तो अन्तर्यामी हैं भगवती, घट-घट की जानते हैं। तुम मानो चाहे मत मानो, आना तो तुम्हें यहीं पड़ा।

—हां जी, गवर पूजने में मैंने ही गलती की थी। हाथ जोड़े। अब माफ कर दो।

–पूजा में कोई गलती नहीं हुई, तभी तो पार्वती ने प्रसन्न होकर पारो को मेरे पास भेज दिया। औघड़-बाबा कहा करते थे, कि सुन रे राधामाधव, कन्हैयालालजी की लड़की पारो औंधे झोटे खा-खा कर तपस्या कर रही है। कह रही है, 'मुझे राधामाधव मिले, मुझे राधामाधव मिले।' मैने हाथ जोड़ कर कहा – 'महाराज, आप हुकम कर दें। जाकर ब्याह लाऊं।' सच तो है, तेरा तप फल गया धणियाणी।

–हा जी, तपस्या का फल ही तो भुगत रही हूं।' ठंडी सांस लेकर पारो ने कहा – गवर के डंके* मै ही तो दिया करती थी।

–यही बात होगी लक्ष्मी। यही बात। डंका देनेवाली हमेशा जीत मे रहती है। तेज सुर भगवान को भी जरा जल्दी सुनाई दे देता है।

गोपाल उठ खड़ा हुआ। पूछा, हाथ कहां धोऊं काका?

गोपाल की उपस्थिति मे पारो को चिढाने का आनन्द कुछ और ही किस्म का होता है। लेकिन अब उस बिचारे का पेट सचमुच भर गया था।

–तकलीफ न हो तो जरा पानी लाकर इस बिचारे के हाथ धुला दो। देखा गोपाल, तेरी काकी को मेरी बात का कोई जवाब ही नहीं मिला।

हाथ धोते हुए प्रसन्न चित्त से अपने काका-साहब की विजय घोषणा करते हुए गोपाल ने हाथ पर गिरनेवाले पानी को काकी पर उछालते हुए कहा.– काकी हार गयी, काकी हार गयी।

–अरे, यह क्या कर रहा है? देख तो सारे कपड़े भींग गये।

–होली आ रही है, काकी। बच कर रहना। माधव काका, मुझे बहुत सारे रग ला दो।

–आने तो दे होली को। कहेगा उतने रग ला दूंगा। तेरी इस काकी को ऐसी तर कर देना, कि यह भी याद रखे।

–क्यों जी, काकी-भतीजे की होली की रीत तुम्हारे यहा होती होगी?

–हां, होती है, जी होती है। हम छोटे बाप के बेटे ही सही। लेकिन हमारे यहा, गोपाल अपनी काकी पर रग डाल सकता है, और खूब डाल सकता है।

–हां कांकी, जब तक रो नहीं दोगी, तब तक नहीं छोडूंगा।

---

* कुंवारी कन्याओं द्वारा योग्य वर प्राप्ति के लिए की जानेवाली गौरीपूजन गीतों की टेक।

गोपाल के उत्साह को देखकर पारो ने पूछा – इस ठंड में बूढ़ी काकी को दुख देगा गोपाल ?

–कह दे गोपाल, होली आते-आते ठंड नहीं रहेगी।

–नहीं रहेगी।

–कह दे गोपाल, अभी तक तुम बूढ़ी नहीं हुई ! बूढ़े हुए हैं माधवकाका !

–बिलकुल बूढ़ी नहीं हुई। एक भी दात नहीं टूटा। एक भी बाल नहीं पका !

–अच्छा मेरे दिये हुए खाजे लौटा दे।' पारो-काकी ने भोलेपन से कहा।

–कजूस। मक्खीचूस। खाजे गये मेरे पेट में। अब मिलेंगे ये !' कह कर गोपाल ने मुट्ठी बन्द करके अगूठा दिखा दिया।

राधामाधव पुलकित होकर फिर अट्टहास कर उठे।

पारो इस पराजय से अत्यन्त लज्जित और नाराज होकर बोली – अब तो तेरे पाव में दर्द नहीं होता रे ? थोड़ी देर पहले रो-चिल्लाकर गली सिर पर उठा रहा था।

राधामाधव सिगड़ी के पास से उठ कर खड़े हुए। गोपाल का हाथ पकड़ कर बोले – अब बस। भाग चलो। देख नहीं रहे हो, दुर्गा गुस्से में है। प्रलय हो जायगा। चल, जल्दी चल।

फिर पत्नी को सफाई देते हुए बोले – गोपाल को घर तक पहुंचा आता हू। पाच मिनट की छुट्टी दे दो।

–जाने दो काका। मैं अपने आप चला जाऊगा। मैं कोई कुत्ते से डरता हू ? जरा-सी लगी है। मर्द बच्चे इससे डरते थोड़े ही हैं ? शाम तक सब ठीक हो जायगा।

पारो गोपाल की पुस्तकें और पति के लिए शाल लेकर फिर सामने उपस्थित हो गयी। कहा – आज स्कूल नहीं जाना है क्या, गोपाल बाबू ? बिना किताबों के ही स्कूल जाओगे क्या ?' फिर पति की ओर देखकर बोली – यह लो शाल। कितनी ठंड पड़ रही है ? सर्दी लग गयी तो ? क्योंजी, गोपाल बाबू, आपके इम्तिहान हो गये ?

–कभी के हो गये।

–तुम पास हुए न ?' राधामाधव ने पूछा।

–नहीं तो क्या फेल होऊगा ? फर्स्ट क्लास आया हूं काकी, फर्स्टक्लास।

–फस्ट क्लास क्या होता है जी ?

–तुम नहीं समझोगी देवी, यह तुम्हारे वस की वात नहीं। मैं समझ गया गोपाल। अव चल। फस्स क्लास का मतलव होता है सवसे ऊंचे दर्जे में पास होना। फस्स क्लास आने वाला लड़का अंग्रेजी ऐसी फटाफट वोलता है, कि देख लो तो दंग रह जाओ! क्यों गोपाल ?

गोपाल इस स्तुति से कुछ घवरा-सा गया। वोला.– फटाफट तो नहीं काकी, लेकिन अंग्रेजी वोल वहुत लेता हूं।

–आज नहीं तो कल वोलने लगेगा। देख लेना फिर खुद पसन्द करके व्याह करेगा। न फेरे न चंवरी, न जान न मान। वहू फूलों की माला डाल देगी इसके गले में, और चार आने खर्च करके मेरा गोपाल भी एक फूलों की माला डाल देगा उसके गले में। और वस, हो गया व्याह। तुम और हम भी लक्ष्मी, थोड़े जल्दी आ गये इस दुनिया में।

–वाह, वाह, वाह! वहुत हो गया। न कोई लाज, न शर्म।

गोपाल को अचानक एक वात याद आ गयी। माधवकाका का, हाथ पकड़ कर कुछ चिन्तित स्वर मे वोला – काका, आपासा को कल दवा देने पर भी नींद नहीं आई।

–अच्छा ?

–मा ने कहा था, आप उठ गये हों, तो वुला लाऊं।

–चलो चलें।

–जरा वच कर जाना, गोपाल वावू। वो इनका शेर-वब्बर यहीं कहीं खड़ा होगा।

चूंकि गोपाल कुत्ते से डर रहा है, यदि इस लिए राधामाधव उसे पहुंचाने आ रहे हों, तो गोपाल के अभिमान को इससे चोट पहुंचती है। इसलिए उसने हिम्मत वांध कर कहा – मैं कोई कुत्ते से डरता हूं! मैं अकेले ही चला जाऊंगा।

यह अहंकार अत्यन्त मिथ्या है, इस वात को जानते हुए भी राधामाधव ने गोपाल का वचाव करते हुए कहा – मुझे भी तो भौजाई मे मिलना है। आओ, गोपाल, चलें। भगवती, मैं अभी आया।

पारो ने विनीत भाव से धीमे स्वर मे कहा – जरा जल्दी ही वापस लौट आइयेगा, महाराज। पानी विलकुल ठंडा हो गया है। दुवारा चढ़ा रही हूं।

अपनी गली में डेरा जमाये बैठे हैं। स्वभाव के कुछ-कुछ दुर्वासा हैं। मैंने तुम्हारी बहू से कहा – भगवती, इनकी अधिक मात्रा में भक्ति अच्छी नहीं। लेकिन मेरी बात सुनता ही कौन है? दोनों वक्त उन्हें पेट भर कर खाना मिल जाता है। लिहाजा वे भी जाने का नाम नहीं लेते। मैंने तो समझाया, कि इतनी बेहयाई ठीक नहीं लेकिन

राधामाधव की पूरी बात सुनने का धीरज यशोदा में नहीं रहा। व्याकुल होकर बोल उठी – कुत्ता पागल तो नहीं था?

–नहीं जी, ऐसी कोई बात नहीं। फिर मैंने टोटका तो कर ही दिया है। जोगमाया सबकी रक्षा करें। डरने की कोई बात नहीं। तुम्हारी बहू मेरी बात सुनकर कहती है, 'अच्छा है घर में आलतू फालतू के लोग नहीं आयेंगे।' अच्छी बात है। मेरे यहां आनेवाले फिजूल के लोगों के लिए, मान लिया जाय, कि एक कुत्ता पाल रखना जरूरी भी हो। लेकिन कुत्तों में तो अक्ल हो नहीं सकती, कि वे अपना-पराया समझ सकें। सो मैं तो कल ही म्युनिसिपेल्टी वालों को बुला कर उसे उसकी न्यात-गंगा में भिजवा देता हूं।

गोपाल पोथी-पत्रे लेकर स्कूल जाने के लिए तैयार हो गया।

–अच्छा मां, मैं चलूं?' कहते हुए वह जाने लगा। लेकिन यशोदा ने उसका हाथ पकड़ कर रोक लिया। पूछा – कहां लगी, बता तो?

नीचे झुक कर वह घाव की ओर देखने लगी। देवर के मधुर हास्य और विस्तृत व्याख्यान का आनन्द आज वह नहीं उठा सकी। घाव के आसपास हाथ फेर कर दवा कर पूछा – सूजन तो नहीं आ गयी? दुखता है क्या?

गोपाल ने राधामाधव की ओर अर्थभरी दृष्टि से देखते हुए कहा – नहीं मां, नहीं दुखता। बिल्कुल नहीं।

इतना कह कर मां से अपने आप को छुड़ा कर वह भाग गया।

उसे इस तरह भागते देखकर राधामाधव की हंसी और चौगुना हो गयी। बोले – वाह भाभी, जरा-सी बात से तुम्हारी आंखों में पानी छलक आया। देखो तो, मेरा गोपाल कितना बहादुर है! अरे, तुम्हारी आंखें कितनी लाल हो आई हैं? गोपाल कह रहा था, भईजी को रात भर नींद नहीं आई। लेकिन लगता है, आप भी शायद सो नहीं सकीं है?

इसी समय घर के अन्तर्भाग से सुनाई देनेवाली भयंकर गुर्राहट ने उपस्थित दोनों व्यक्तियों का ध्यान उस ओर आकर्षित कर लिया। एक ऐसी भयंकर विकृत आवाज, एक इस तरह की व्याकुल पुकार कि जैसे अनेक भूतों का थोथा गला काप कर चीत्कार कर रहा हो।

एक पल के लिए राधामाधव निःस्तब्ध चुपचाप खड़े रहे। इसके बाद भौजाई की ओर देखकर शात, संयत स्वर में इतना ही बोल सके – चलो भौजाई, आज लक्षण अच्छे नहीं दिखाई देते।

राधामाधव के साथ यशोदा ने आगन में कदम रखते ही देखा, गोपाल के पिता क्रोधाग्नि बरसाते हुए, अत्यन्त उग्रभाव से हुंकार रहे हैं। उनके हाथ में एक लम्बा वास है, और वे उसे वारम्बार धरती पर पीटते हुए "आओ, आओ" का आह्वाहन कर रहे हैं। बढी हुई दाढी, बेढंगे कपड़े, वीभत्स आवाज और इस मुक्त-बल प्रदर्शन को देखकर अच्छा-खासा आदमी एकबारगी भयभीत हो जाय। फिर यशोदा तो आखिर स्त्री ही थी। वह डरी जरूर, लेकिन अपने किसी अहित की सभावना से नहीं, बल्कि पति कहीं अपने प्रति ही कोई अत्याचार न कर बैठें, इस आशंका से!

राधामाधव दूर से ही चिल्लाये – भईजी। बास नीचे रख दो। वापस ऊपर चलो। चलो ऊपर।

लेकिन भीखमचंदजी चुप नहीं हुए। वे उसी तरह प्रलाप करते रहे – आओ, आओ, एक एक को देख लूंगा। जय महावीर। जय बजरग बली। है कोई माई का लाल, जो सामने आये!

अपने आदेशों का इस पागल पर कोई प्रभाव न देखकर राधामाधव आगे बढ आये। यशोदा ने व्याकुल होकर उनका हाथ पकड़ते हुए कहा – जरा ठहर जाओ। देखते नहीं, उनके हाथ में वास है।

राधामाधव ने अपनी भाभी की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। इस पागल व्यक्ति को सभालने का उन्हें काफी अभ्यास हो गया है। कभी-कभी उनके उपद्रव पर क्रोध भी आता है, वे क्षुब्ध भी हो जाते है लेकिन फिर उनकी निरीहता याद आ जाती है; और तब इस पागल व्यक्ति के प्रति उनके मन में कोई शिकायत नहीं रह जाती। राधामाधव फुर्ति से भीखमचंदजी की पीठ के पीछे पहुंच गये। हजार बचाव करने की कोशिश करने के बावजूद भी भीखमचंदजी ने उनके बायें कंधे पर बांस का एक हाथ जमा ही दिया।

पीड़ा के कारण एक सीत्कार राधामाधव के मुह से अवश्य निकल गयी, लेकिन सुरक्षा के लिए उन्हें वहीं छोड़कर वे भाग नहीं आये। आगे बढ़कर उन्हे अपनी गोद में भरकर उन्होंने अधर का अधर उठा लिया। वे झटपटाते रहे, चीखते रहे, राधामाधव की भुजाओं को अपने दांतों से काटने का प्रयत्न करते रहे। लेकिन राधामाधव ने मानो इस ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया। उन्हे उसी तरह गोद में उठा कर वे उनके ऊपरवाले कमरे तक ले आये। पुकारा – भौजाई, रस्सी ले आओ।

यशोदा दिग्विमूढ़-सी चुपचाप खड़ी इस प्रलय-कांड को देखती रही राधामाधव की तकलीफ देखती रही उनका धीरज देखती रही पति की अनचाही बर्बरता देखती रही। मन ही मन सोचती रही – इस अनजाने पाप का प्रायश्चित पता नहीं कितने दिनों में होगा?

इसी समय ऊपर से राधामाधव की आवाज फिर सुनाई दी – भौजाई रस्सी लाओ।

वह रस्सी लेकर चुपचाप ऊपर पहुंच गयी।

राधामाधव के कंधे पर बांस की चोट के कारण खून उभर आया था। लेकिन सम्भवतः उनका ध्यान उस ओर नहीं था। वे उस पागल को नियंत्रण में रखने के प्रयत्नों में व्यस्त थे। बिना भौजाई की ओर देखे, उन्होंने रस्सी ले ली। भीखमचंदजी की बातों पर बिना ध्यान दिये, उनके मुक्त होने की परवाह न करते हुए उन्होंने जबर्दस्ती उनके हाथ-पांव रस्सी से बांध दिये।

यशोदा ने धीमे से कहा – जरा ढीले बांधिये। नहीं तो हाथों पर निशान उभर आयेंगे।

–नहीं भौजाई, ढीले बांधूगा तो फिर खोल लेंगे।' कह कर भीखमचंदजी की ओर देखकर वे बोले – भईजी, इसी तरह चुपचाप बैठे रहो। अब अधिक नहीं। बहुत हो गया।

धूप आंगन तक आ गयी थी। नीचे उतरते समय राधामाधव के कुर्ते की बांह पर फैला हुआ रक्त स्पष्ट दिखाई दे रहा था। जगह-जगह पागल भीखमचंदजी के दांतों के निशान भी छिपे नहीं रहे।

अभी-अभी एक निर्दोष बालक की पिंडलियों पर किसी कुत्ते ने इसी तरह काट खाया था। और ठीक इसी तरह ! खैर, जाने दो। इस उपमा के साथ विचार करना राधामाधव को अच्छा नहीं लगेगा।

राधामाधव के पीछे-पीछे यशोदा भी नीचे उतर आई। बोली - बहुत लगी है, देवर!

क्षमा-याचना की इस स्पष्ट भीख के अतिरिक्त, अभिव्यक्ति की भाषा आज तक सबल नहीं हो पायी। भौजाई का दुखित चेहरा देखकर, राधामाधव मानों सब कुछ भूल कर हसते हुए कहने लगे - हा भाभी, लग तो बहुत गयी। अब दवा-दारु का इन्तजाम करो। आज्ञा दो, तो पलंग पर भी जाकर लेट जाऊं। ६ महीने से पहले उठने की शपथ मेरी रही।

-ऐसा क्यों कहते हो ?' कहते कहते उसके शब्द समाप्त हो गये। आखों से आसू बहने लगे। उसने आचल में अपना मुह छिपा लिया। दुख के इन दिनों के एकमात्र सहायक इस देवर के एहसानों से वह कैसे उऋण हो सकेगी, यह वह आज तक नहीं समझ पाई।

-ऐसे तुम्हें सतोष नहीं होगा। घर में जो दवा-दारू है, वह सब यहा लाकर लीप-पोत दो।' कहते हुए उन्होंने अपनी बाह नंगी करके सामने कर दी। भाभी के सामने आत्मसमर्पण करते हुए, वहीं बैठ गये।

यशोदा अन्दर से मलहम ले आई। किसी पुरानी धोती को फाड कर पट्टी बाधते हुए, नीची नजर किये, धीरे से कहा - और तो तुम्हें क्या दूं देवर, यही आशीस देती हूं, कि तुम लाख बरस जीओ। जोगमाया तुम्हारी रक्षा करें।

अपनी आदत के अनुसार हंसते हुए राधामाधव ने जबाब दिया - भाभी, ऐसा दान मत दो जिसका पुण्य न सभले।

पीड़ा के कारण एक सीत्कार राधामाधव के मुंह से अवश्य निकल गयी, लेकिन सुरक्षा के लिए उन्हें वहीं छोड़कर वे भाग नहीं आये। आगे बढ़कर उन्हें अपनी गोद में भरकर उन्होंने अधर का अधर उठा लिया। वे झटपटाते रहे, चीखते रहे, राधामाधव की भुजाओं को अपने दांतों से काटने का प्रयत्न करते रहे। लेकिन राधामाधव ने मानो इस ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया। उन्हें इसी तरह गोद में उठा कर वे उनके ऊपरवाले कमरे तक ले आये। पुकारा - भौजाई, रस्सी ले आओ।

यशोदा दिग्विमूढ़-सी चुपचाप खड़ी इस प्रलय-काट को देखती रही राधामाधव की तकलीफ देखती रही उनका धीरज देखती रही पति की अनचानी वर्बरता देखती रही। मन ही मन सोचती रही - इस अनजाने पाप का प्रायश्चित पता नहीं कितने दिनों में होगा?

इसी समय ऊपर से राधामाधव की आवाज फिर सुनाई दी - भौजाई रस्सी लाओ।

वह रस्सी लेकर चुपचाप ऊपर पहुच गयी।

राधामाधव के कधे पर वांस की चोट के कारण खून उभर आया था। लेकिन सम्भवतः उनका ध्यान उस ओर नहीं था। वे उस पागल को नियत्रण में रखने के प्रयत्नों में व्यस्त थे। बिना भौजाई की ओर देखे, उन्होंने रस्सी ले ली। भीखमचंदजी की वातों पर बिना ध्यान दिये, उनके मुक्त होने की परवाह न करते हुए उन्होंने जबर्दस्ती उनके हाथ-पाव रस्सी से वाध दिये।

यशोदा ने धीमे से कहा - जरा ढीले वाधिये। नहीं तो हाथों पर निशान उभर आयेंगे।

–नहीं भौजाई, ढीले वाधूगा तो फिर खोल लगे।' कह कर भीखमचदजी की ओर देखकर वे बोले - भईजी, इसी तरह चुपचाप बैठे रहो। अब अधिक नहीं। वहुत हो गया।

धूप आंगन तक आ गयी थी। नीचे उतरते समय राधामाधव के कुर्ते की वांह पर फैला हुआ रक्त स्पष्ट दिखाई दे रहा था। जगह-जगह पागल भीखमचदजी के दांतों के निशान भी छिपे नहीं रहे।

चौदह वर्ष की अल्प आयु में ही उन्होंने औघड़बाबा से योग-दीक्षा ले ली। भोग से आरम्भ करके चरम तक वे पहुंच गये। पिताश्री विरासत में जो धनसम्पत्ति छोड़ गये थे, उसे उन्होंने मा के मरते ही औघड़बाबा के श्रीचरणों में सहर्ष समर्पित कर दी। कोई कहनेवाला, न सुननेवाला। लोगों ने निन्दा की। आकाश की ओर मुंह करके, सिर हिला-हिला कर ठंडी सांसें भर कर उनके पिताश्री की यशोगाथा और धन सञ्चय के विराट उद्योगों की चर्चा करके, राधामाधव के कुपुत्र होने की घोषणा करते हुए समाज के सरपंचों ने अति दुख का अनुभव किया। बाद में असहाय विवशता के मारे, सकल सूक्तियों में श्रेष्ठ 'सब सीर-सस्कार की बात है' कह कर अपने काम धन्धे में लग गये।

चार-पांच साल बाद एक दिन भीखमचंदजी रास्ते में मिल गये। पकड़ कर ले आये। कहा – अब कहीं जाने की छुट्टी नहीं मिलेगी। घर चलो। वहीं रहना होगा। खाने-पीने को मिल जायगा। तेरी भौजाई तेरी नौकरी से सतुष्ट हो गयी तो तनख्वाह का प्रबन्ध भी हो जायगा।

बाल्यसखा और उम्र में बड़े भीखमचंदजी के इस अधिकारपूर्ण आग्रह का विरोध उस समय राधामाधव नहीं कर सके। इतने दिनों से इधर-उधर भटकते रहकर, स्नेह के अभाव को वे भूल ही गये थे, वह स्रोत एकबारगी फिर से उमड़ पड़ा। मन ही मन सोचा – अरे, मा मर गयी, पिता मर गये—तो क्या हुआ? मेरा भीखमचंद तो है! इनका इतना प्रेम है। फिर मुझे क्या चाहिए? मुझे क्या जरूरत है जोग लेने की?

भीखमचंदजी के इस अधिकारपूर्ण आग्रह का विरोध वे नहीं कर सके। उन्होंने हिताहित का कोई उपदेश नहीं दिया। भले-बुरे की कोई बात नहीं कही। एक आवारागर्द आदमी को घर बुलाकर रख लिया और हुक्म दे दिया कि यहीं रहना होगा।

यशोदा अपने इन देवर की कीर्त्ति से परिचित थी। हंसकर बोली –आज से मैं ही तुम्हें योग सिखाऊंगी।

राधामाधव ने भौजाई को तो कोई जवाब नहीं दिया। लेकिन गुप्त रूप से अपने गुरु की सेवा में हाजिर होकर हाथ जोड़ कर निवेदन अवश्य कर आये –भाई का हुक्म है, घर रहूं। मतिभ्रष्ट हो रही है। सही रास्ता दिखाइये'

दो ·

यहा भीखमचदजी तथा राधामाधव का सक्षेप में परिचय दे दे।

दोनों बाल्य-सखा है। साथ ही पढे। साथ ही खेले-कूदे। बचपन के तमाम उपद्रवों में एक साथ शरीक हुए। प्राइमरी शिक्षा प्राप्त करके, यह मान लेने पर कि 'पढाई बहुत हो गयी,' दोनो का विद्यार्थी-जीवन भी एक साथ समाप्त हो गया। भीखमचदजी उस समय चौदह वर्ष के थे और राधामाधव ग्यारह के। इस कच्ची उम्र मे दोनो की जीवन-धाराए विभिन्न दिशाओं की ओर उन्मुख हो गयीं। दिशाओं का अन्तर चाहे जितना विस्तार लेता गया हो, लेकिन आत्मीयता का सम्बन्ध समय की तमाम दलीलो को चीर कर आज तक बना हुआ है। जीवन मे आने वाले अनेक आंधी-तूफानों के बावजूद भी वह क्षुद्र त्रणों की तरह झुका नहीं। बल्कि समय ने इस वृक्ष की जड़ो को इतना मजबूत बना दिया, कि जमा हुआ यह पौधा आज तक लहरा रहा है।

जिस समय राधामाधव तीसरी कक्षा की सफल परीक्षा देकर घर आये, उस समय उनके पिता ने बड़े परिश्रम से कमाई हुई धन-सम्पति का विपुल भार अपने एकमात्र, अति-लाड़ले पुत्र और उसकी मां के कधो पर लाद कर, थोड़ी-सी बीमारी भुगत कर, इस दुनिया का मोह छोड़कर, स्वर्ग-प्रयाण किया। अन्त्येष्टि क्रिया सम्पादित करके राधामाधव ने भी अपनी शिक्षा को जलांजलि दे दी। इस तरह, अध्यापकों की घुड़कियों, डडे की मारों और मुर्गा बनने के अभ्यास से उन्हें छुट्टी मिल गयी। अध्ययन की परिसमाप्ति में उनकी मातुश्री की यह मान्यता भी थी, कि 'राधामाधव को कोई नौकरी-चाकरी तो करनी है नहीं।' लिहाजा, सर्वबन्धन मुक्त आवारागर्दी मे ही उनकी किशोरावस्था बीती। उनका अपना ऐसा अखण्ड विश्वास है, कि जो दुर्लभ अनुभव उन्हें स्कूल में न पढने की वजह से सुलभ हो गये हैं, वे सात जनम तक पाठशाला में सीखने और रटने पर भी प्राप्त नहीं हो सकते।

चौदह वर्ष की अल्प आयु में ही उन्होंने औघड़बाबा से योग-दीक्षा ले ली। भांग से आरम्भ करके चरस तक वे पहुंच गये। पिताश्री विरासत में जो धनसम्पत्ति छोड़ गये थे, उसे उन्होंने मा के मरते ही औघड़बाबा के श्रीचरणों में सहर्ष समर्पित कर दी। कोई कहनेवाला, न सुननेवाला। लोगों ने निन्दा की। आकाश की ओर मुंह करके, सिर हिला-हिला कर ठंडी सांसें भर कर उनके पिताश्री की यशोगाथा और धन सचय के विराट उद्योगों की चर्चा करके, राधामाधव के कुपुत्र होने की घोषणा करते हुए समाज के सरपंचों ने अति दुख का अनुभव किया। बाद में असहाय विवशता के मारे, सकल सूक्तियों में श्रेष्ठ 'सब सीर-सस्कार की बात है' कह कर अपने काम धन्धे में लग गये।

चार-पांच साल बाद एक दिन भीखमचंदजी रास्ते में मिल गये। पकड़ कर ले आये। कहा – अब कहीं जाने की छुट्टी नहीं मिलेगी। घर चलो। वहीं रहना होगा। खाने-पीने को मिल जायगा। तेरी भौजाई तेरी नौकरी से सतुष्ट हो गयी तो तनख्वाह का प्रबन्ध भी हो जायगा।

बाल्यसखा और उम्र में बड़े भीखमचंदजी के इस अधिकारपूर्ण आग्रह का विरोध उस समय राधामाधव नहीं कर सके। इतने दिनों से इधर-उधर भटकते रहकर, स्नेह के अभाव को वे भूल ही गये थे, वह स्रोत एकबारगी फिर से उमड़ पड़ा। मन ही मन सोचा – अरे, मा मर गयी, पिता मर गये—तो क्या हुआ? मेरा भीखमचंद तो है! इनका इतना प्रेम है। फिर मुझे क्या चाहिए? मुझे क्या जरूरत है जोग लेने की?

भीखमचंदजी के इस अधिकारपूर्ण आग्रह का विरोध वे नहीं कर सके। उन्होंने हिताहित का कोई उपदेश नहीं दिया। भले-बुरे की कोई बात नहीं कही। एक आवारागर्द आदमी को घर बुलाकर रख लिया और हुक्म दे दिया कि यहीं रहना होगा।

यशोदा अपने इस देवर की कीर्त्ति से परिचित थी। हसकर बोली –आज से मैं ही तुम्हें योग सिखाऊंगी।

राधामाधव ने भौजाई को तो कोई जवाब नहीं दिया। लेकिन गुप्त रूप से अपने गुरु की सेवा में हाजिर होकर हाथ जोड़ कर निवेदन अवश्य कर आये –भाई का हुक्म है, घर रहूं। मतिभ्रष्ट हो रही है। सही रास्ता दिखाइये!

औघडबाबा ने प्राचीन ऋषियों की तरह गभीर स्वर में कहा —तेरी प्रारम्भिक शिक्षा पूरी हो गयी। अब जा। घर गृहस्थी का पालन कर। 'चौके पर छक्का, काम हो तेरा पक्का।'—इतना कह कर धूनी में से राख की एक चुटकी राधामाधव के सिर पर डालते हुए उन्होंने अन्त करण से सुखी होने का आशीर्वाद दे दिया।

भीखमचदजी स्वभाव से ही अल्पभाषी थे। राधामाधव मन ही मन उनसे कुछ-कुछ डरते भी थे। इसलिए "चौके पर छक्का" लगाकर कुर्ते के आचल में रुपयों की गड्डी लिए जब वे घर आये, तो अपनी भौजाई के चरणों में सब कुछ रख कर बोले – भौजाई, यह कमा कर लाया हू। लो।

भीखमचदजी उस समय दूकान से काम करके लौटे ही थे। हंसकर बोले – अच्छा। देखता हू, कमाई तो बहुत सारी कर लाया। यशोदा, अब इसके ब्याह की तैयारी कर दे। काफी बड़ा हो गया है।

और सचमुच एक दिन राधामाधव को मालम हुआ कि पड़ोसके गाव सुजानदेसर के कन्हैयालालजी की सर्वगुण सम्पन्न, सकल सुन्दरियों मे श्रेष्ठ, एक मात्र कन्या पारो उर्फ पार्वती के साथ उनके विवाह की बात पक्की हो गयी। इसके बाद ब्याह हुआ। वर पक्ष की ओर थे भीखमचदजी और यशोदा। अति धूमधाम से ब्याह कर पारो को लेकर वे घर आये। यशोदा के आग्रह से पैतृक घर की पुनर्प्रतिष्ठा हुई।

बीकानेर के इतिहास में मोदी और ब्राह्मण सन्तान के ऐसे सम्बन्ध सुदुर्लभ, लिहाजा तकरीबन निषिद्ध से हैं, पर श्रीसम्पन्न लोगों की बातो मे साधारण रुरपच पचायती करके अपना सर खराब नहीं किया करते। इसलिए ब्याह के अवसर पर समाज के कई नियमों में जो अस्थायी रूप से परिवर्तन सशोधन हुए, उनकी ओर किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया। कभी कहीं इस विषय को लेकर धीमी सुरसुराहट चली भी, तो भविष्य के फलाफल और लोगों की समाज के प्रति अपेक्षा की चर्चा करके उसका समाधान कर लिया गया।

उस समय गोपाल सात वर्ष का था। इस ब्याह के कुछ ही दिनों बाद भीखमचदजी पागल हो गये।

इसका दुखद इतिहास यों है –

पितृहीन भीखमचदजी की मा ने पापड़ बेल कर, सीना-पिरोना करके उन्हें किसी प्रकार चौथी क्लास तक शिक्षा दिला देने की व्यवस्था कर दी। इसके बाद कुछ लोगों के कहने-सुनने पर उन्हें एक सेठ की पेढी में बिना वेतन नौकरी

मिल गयी। ब्याह भी हो गया। ज्योंहि उन्हे ६ सौ रुपये साल के मिलने शुरू हुए, मा ने सुपुत्र की उन्नति से अत्यन्त सन्तुष्ट होकर आखें मूद लीं। पचास रुपये महावार पाने वाले भीखमचदजी ने किस तरह अपनी मां के मृत्यु-संस्कार किये, सो रहस्य तो उनकी पत्नी—गोपाल की यह मा—ही जानती है। गहने बेच कर, मकान गिरवी रख कर, भीखमचंदजी अपनी मा के असीम ऋणों से उऋण हो गये। समाज के सिर-मौर सर्दारो ने तव पाटे पर बैठकर, जर्दा फाकते हुए, हरि-स्मरण करके सिर हिला-हिला कर घोषित किया – हा! बेटा हो, तो ऐसा! घर तक गिरवी रख दिया, लेकिन औसर-मोसर मे किसी तरह की कमी नहीं आने दी।

कर्ज से लदे हुए मितभाषी भीखमचदजी नित्य नियमपूर्वक अपनी दूकान जाते। रात को लगभग दस बजे लौटते। यशोदा जो कुछ परोस देती, खा-पीकर सो जाते। यशोदा हर महीने दस रुपये किसी न किसी तरह बचा कर कर्जदारों को लौटा देती। इसी उद्यम मे दोनो एक दूसरे की मौन विवशताओं को बिना कहे समझ जाते। खामोश चली जा रही इस जिन्दगी को एक अभिशाप और मिल गया। यशोदा ने चार बच्चो को जन्म दिया। उनमे से तीन आठ साल के करीब पहुंचते-पहुचते मा-बाप को रुला कर चल बसे। बच्चों के इस तरह चले जाने पर दोनों रोये। फिर अपने आप खामोश भी हो गये। एक दूसरे को धीरज बंधाने के लिए मानो दोनो के पास कुछ भी बाकी न रहा।

तीसरे बालक की अन्त्येष्टी क्रिया करके जब वे खाली हाथो घर लौट आये, तो उनकी आखो मे एक भी आसू नहीं था। मानों भाग्य के विधान के खिलाफ अब उन्हे कहीं किसी तरह की शिकायत न रह गयी हो। दुख घुट कर जम गया था। घर आने पर रोती हुई यशोदा को देखकर भीखमचंदजी ने दबी हुई सास लेकर सिर्फ इतना ही कहा.– हे प्रभु! तेरी लीला बड़ी विचित्र है।

गोपाल उस समय सात साल का था। अपने भाइयों की मृत्यु का अर्थ वह कुछ-कुछ समझने लगा था। मा के विलाप को सुन कर वह भी जोर-जोर से रोने लगा।

भीखमचंदजी से बालक का यह रोना सहा नहीं गया। एकाएक कस कर दो थप्पड़ उन्होंने गोपाल के गालो पर जड दिये। बोले – एक दिन तूं भी ऐसे ही चला जायगा। जाना ही है, तो तुम सब यहा आते ही क्यों हो!

पति की इस अप्रत्याशित हरकत को देखकर यशोदा हतप्रभ-सी खड़ी रह गयी। गोपाल और अधिक जोर से रोने लगा। उसे अपनी छाती से लगा कर, दिवगत बच्चों को याद करके, मुंह लपेटे वह दीवार से सिर लगाए पड़ी रही।

यद्यपि कर्जदारों के यहा हर महीने दस रुपये नियमित रूप से पहुंच जाते, लेकिन इस कतर-ब्योंत मे यशोदा ने कभी अजुलि भर कर पति की रोटी पर घी तक नहीं चुपड़ा था। ऊपर से बच्चों की मौत का दुख उसके शरीर को और छीजता गया।

राधामाधव का ब्याह हो चुका था। गोपाल ने आठवा साल पार किया। दुश्चिन्ता से भयाक्रान्त पति-पत्नी दोनो विधि के आगामी विधान को धड़कते दिल से देख रहे थे। जानते थे, बच्चों के लिए यह आठवां वर्ष ही काल है।

उन दिनों चारो ओर टाइफाइड का प्रकोप ज़ोरो पर था। गोपाल पर भी बुखार का आक्रमण हुआ। भीखमचदजी के हाथ पाव फूल गये। 'अब यह भी हाथ से गया।' इस तरह की भविष्यवाणी मानो कोई बारम्बार उनके कान के पास आकर कह जाता। खाने-पीने में उनका जी नहीं लगता। नौकरी करने मे उत्साह नहीं रहा। गोपाल की अवश्यम्भावी मृत्यु का दृश्य उन्हें बारम्बार दिखाई दे जाता। अपनी असहाय विवशता से बारम्बार व्याकुल हो उठते।

एक दिन दूकान पर कपड़ों के थान बेचकर उन्होंने रसीद ग्राहक को दे दी। लेकिन रुपये लेना भूल गये। शाम को रोकड़ मिलाते समय ७ सौ रुपये कम पड़े। याद आया, कितनी बड़ी भूल हो गयी।

उसी समय सेठ लालचद के पास पहुचे। पहले तो उसने मिलने से ही इनकार करते हुए कहलवा दिया — अभी फ़ुर्सत नहीं है। सबेरे आना।'

बहुत आरजू-मिन्नत करने पर वे नीचे उतर आयें। पूछा — क्या बात है जी? आराम से सोने भी नहीं दोगे क्या? देखते नहीं, दस बजने आये हैं!

—साहबजी, सबेरे आप हमारी दूकान से कपड़ों के थान ले गयें थे। मैंने रसीद दे दी। लेकिन आप रुपयें देना भूल गये।

—मै रुपये देना भूल गया? कहते क्या हो भीखमचद? और रसीद दे दी तुमने परोपकार करने के लिए?

—मुझसे भूल हो गयी सेठजी। आपके लिए पांच-सात सौ रुपये कुछ भी नहीं है। मैं बर्बाद हो जाऊगा। घर पर गोपाल बीमार है। मेरा माथा इसी-

लिए ठीक-से काम नहीं करता। एक-एक करके तीन हंसते-खेलते बच्चे चले गये, सेठजी! अब यह चौथा किसी तरह बच जाय। मेरी लाज रख लो सेठजी।

कहते-कहते उन्होंने सेठजी के पांव पकड़ लिये।

लेकिन व्यवसाय चतुर सेठ लालचन्दजी टस से मस नहीं हुए। कहने लगे—तूं कहता क्या है भीखमचंद! मै कोई नया दुकानदार तो हूं नहीं। दस बरसों से तुम्हारी दूकान से मेरा सम्बन्ध है। लेना-देना, भूल-चूक तो चलती ही रहती है। लेकिन रुपये दिये बिना मैं रसीदें लेता फिरूंगा तो, धंधा करूंगा कैसे? माना, कि तेरा दिमाग खराब है, लेकिन मेरा तो नहीं। तुझे भरोसा नहीं है, तो आकर बहिया देख ले।

भीखमचंदजी समझ गये कि ग्राहक की नीयत खराब हो गयी है। गरीबों का अन्तिम सहारा लेकर उन्होंने रोते हुए कहा — साहेबजी, सच झूठ की साक्षी चोपड़े नहीं, वह ऊपरवाला है। वह सब कुछ देखता है। एक दिन वहा जाकर सबको जवाब देना है। ऐसा अनाचार मत करो। ब्राह्मण की आशीस ले लो। ये रुपये पचेंगे नहीं सेठजी, ब्रह्महत्या का पाप लग जायगा। त्रिलोक में क्षमा नहीं मिलेगी।

नागपुरिया सेठ लालचन्दजी को ब्राह्मण की आशीस पर सम्भवतः कोई खास विश्वास नहीं था। बोले - अरे, तूं तो धरम की भी बातें करने लगा! बड़ा धरम का पुतळा बनता है। मै इन सारी पंचायतों मे नहीं पड़ता बाबा। फिर भी तेरा जी नहीं पतियाता तो जा, यह रहा कोर्ट, यह रही कचहरी। जो कुछ तुझसे हो सके: कर ले।

—सो मुझसे कुछ भी नहीं होगा सेठजी। आपके दरवाजे पर पड़ा-पड़ा मर जाऊंगा। ये रुपये धर्म के नहीं हैं। हाथ जोड़ कर कहता हूं सेठजी, दे दो।

—मेरे पास तुझसे माथा लगाने को फुर्सत नहीं है भइया रे। अब तूं जा।' कह कर सेठजी आराम करने के लिए चले गये।

मुंह लटकाये भीखमचंदजी रात के बारह बजे अपने सेठ के दरवाजे पर हाजिर हुए। चारों ओर फैले हुए सन्नाटे मे कुत्ते भौंक रहे थे और सुनाई दे रही थी उनकी फटी हुई चप्पल की फटाफट् की आवाज। आज उन्हें जितना दुख, जितनी कातरता, जितनी लाचारी महसूस हो रही थी, उतनी अपने तीन बच्चों को अग्निदाह देते हुए भी नहीं हुई होगी। 'लो अब सब कुछ गया। कल से

–सेठजी मेरी इज्जत आपके हाथ है। मेरा गोपाल टाइफाइड में पड़ा है। घर में एक पैसा नहीं है। फिर भी मुझ पर भरोसा कीजिए, मै आपका पाई-पाई हिसाब कर-दूंगा।

सेठजी एक मिनट तक चुपचाप बैठे सोचते रहे। फिर भारी-स्वर मे बोले — तूं भरोसे का आदमी है भीखमचंद। गैर नहीं। सच-सच बता दे, रुपये तूने रख लिये? अभी तक कुछ नहीं हुआ। इस नाटक को भी मैं भूल जाऊंगा। लालचंदजी अपने आदमी हैं। पाच-सात सौ के लिए वे झूठ नहीं बोल सकते।

जो झूठ बोल सकता है, बोला है; उस पर इतना विश्वास! और जो सत्य को साक्षी देकर अपना दुखड़ा रो रहा है, उस पर इतना अविश्वास! उसका इतना तिरस्कार। अभिमान के मारे भीखमचंदजी ने आसू पोछ लिये। उठ कर खड़े हो गये। सीधे तन कर बोले — सेठजी, मैंने सब कुछ सच ही कहा है। मैं अपनी जनेऊ हाथ में लेकर सौगन्ध खाता हूं, कि मेरे पास हराम का एक भी पैसा हो, तो मेरा गोपाल उठ जाय।

–वह तो यों ही उठ जायगा, भीखमचंद। हराम का पैसा जनेऊ हाथ में लेने से पच नहीं जाता।

–ऐसी जबान निकाली तो सेठ, तेरा सत्यानाश हो जायगा। मैं ब्राह्मण हूं। ब्राह्मण के श्राप से डरते रहना।

–निकल यहा से। जिस पत्तल में खाता है, उसी मे छेद करता है!' सेठजी का कठिन स्वर कुत्तों के भैरवनाद को चीरता हुआ विशालकाय कोठी को प्रकम्पित करने लगा। वे चिल्लाते रहे — दरबान! ओ रग्घु! निकाल इसे यहा से। इसी दम। कल से मेरी दुकान में पात्र रखने की जरूरत नहीं। जो कुछ हुआ सो हुआ। चाहता, तो तुझे पुलिस मे भी दे सकता था। लेकिन कोट-कचहरी करने से दूकान की साख जाती है। इसलिए यह घाटा मै सह लूंगा। लेकिन याद रखना भीखमचंद, पाप का पैसा पचेगा नहीं, वह फूट-फूट कर निकलेगा।

क्रोध, तिरस्कार और विवशता से कातर भीखमचंदजी व्यर्थ प्रलाप करते रहे और रग्घू दरबान ने उनकी बाह पकड़ कर बड़े दरवाजे से बाहर ले जाते हुए कहा — भीखमचंदजी, अभी घर जाओ। आराम करो। कल मिलना। सेठ का गुस्सा अधिक टिकता नहीं।

लोग यही कहेंगे भीखमचंद ने रुपयों पर नीयत खराब कर ली। हे सांवरिया सेठजी को सुबुद्धि दे दे। वे मेरी बात मान लें।' राम-राम करते सेठ के घर पहुचे। सोते हुए दरबान को उठाया। कहा — सेठजी से बहुत जरूरी काम है। अभी ही मिलना है।

दरबान उसी समय सेठजी को उठाने चला गया। नींद से उठकर घबराये हुए सेठजी नीचे आये। भीखमचदजी की पीठ पर हाथ रखकर उन्हें अन्दर ले जाते हुए बोले —भीखमचंद, क्या हुआ ? बच्चे की तबीयत कैसी है ?

ब्राह्मणपुत्र अपनी समस्त मर्यादा को भूल कर वणिक्पुत्र लक्ष्मीपति सेठ के पांवों पर लौट गया। जोर-जोर से चिल्ला-चिल्ला कर रोते हुए भीखमचदजी कहने लगे —मैं लुट गया, सेठजी। मैं लुट गया।

–अरे क्या हुआ ? बात तो पूरी बता ? गोपाल कैसा है ?

–मैं लुट गया, सेठजी। बर्बाद हो गया।

सेठने समझा, चौथे बच्चे की मौत ने इसे विक्षिप्त कर दिया है। उसे प्यार से उठाते हुए सहानुभूति के स्वर में बोले — उठ भीखमचद, उठ। उस ऊपरवाले पर किसी का कोई बस नहीं। यह पिछले जनम का लेना-देना है, और क्या ? करम लिखी किसी से नहीं मिटती। हिम्मत कर। हिम्मत।

भीखमचदजी की आंखों से लगातार आसू बहते रहे। बोले — सेठजी, गोपाल तो जैसा है, वैसा ही है। लेकिन मुझसे आज बहुत बडा अकारथ हो गया।

माजरा कुछ और ही है, यह समझ कर सेठजी पास की कुर्सी पर बैठकर गंभीर स्वर में बोले —रोना-धोना पीछे। पहले यह बता, हुआ क्या ?

–आज सवेरे लालचन्द पूरणमल के यहां थान गये थे। मैंने उन्हें रसीद दे दी। लेकिन रुपये लेना भूल गया।

–कितने रुपये थे।

–सात सौ !

–लालचन्दजी से तू मिला ?

–मिला। सेठजी मिला। लेकिन वे तो साफ मुकर गये !

–अच्छा।

–सेठजी मेरी इज्जत आपके हाथ है। मेरा गोपाल टाइफाइड में पड़ा है। घर में एक पैसा नहीं है। फिर भी मुझ पर भरोसा कीजिए, मै आपका पाई-पाई हिसाब कर-दूंगा।

सेठजी एक मिनट तक चुपचाप बैठे सोचते रहे। फिर भारी-स्वर मे बोले — तूं भरोसे का आदमी है भीखमचंद। गैर नहीं। सच-सच बता दे, रुपये तूने रख लिये? अभी तक कुछ नहीं हुआ। इस नाटक को भी मैं भूल जाऊंगा। लालचंदजी अपने आदमी हैं। पाच-सात सौ के लिए वे झूठ नहीं बोल सकते।

जो झूठ बोल सकता है, बोला है, उस पर इतना विश्वास! और जो सत्य को साक्षी देकर अपना दुखड़ा रो रहा है, उस पर इतना अविश्वास! उसका इतना तिरस्कार। अभिमान के मारे भीखमचंदजी ने आसू पोंछ लिये। उठ कर खड़े हो गये। सीधे तन कर बोले — सेठजी, मैंने सब कुछ सच ही कहा है। मैं अपनी जनेऊ हाथ में लेकर सौगन्ध खाता हू, कि मेरे पास हराम का एक भी पैसा हो, तो मेरा गोपाल उठ जाय।

–वह तो यों ही उठ जायगा, भीखमचंद। हराम का पैसा जनेऊ हाथ मे लेने से पच नहीं जाता।

–ऐसी जबान निकाली तो सेठ, तेरा सत्यानाश हो जायगा। मै ब्राह्मण हूं। ब्राह्मण के श्राप से डरते रहना।

–निकल यहा से। जिस पत्तल मे खाता है, उसी में छेद करता है!' सेठजी का कठिन स्वर कुत्तों के भैरवनाद को चीरता हुआ विशालकाय कोठी को प्रकम्पित करने लगा। वे चिल्लाते रहे — दरबान! ओ रघ्घु! निकाल इसे यहा से। इसी दम। कल से मेरी दुकान में पाव रखने की जरूरत नहीं। जो कुछ हुआ सो हुआ। चाहता, तो तुझे पुलिस मे भी दे सकता था। लेकिन कोट-कचहरी करने से दूकान की साख जाती है। इसलिए यह घाटा मै सह लूंगा। लेकिन याद रखना भीखमचंद, पाप का पैसा पचेगा नहीं, वह फूट-फूट कर निकलेगा।

क्रोध, तिरस्कार और विवशता से कातर भीखमचंदजी व्यर्थ प्रलाप करते रहे और रघ्घू दरबान ने उनकी बाह पकड़ कर बड़े दरवाजे से बाहर ले जाते हुए कहा — भीखमचदजी, अभी घर जाओ। आराम करो। कल मिलना। सेठ का गुस्सा अधिक टिकता नहीं।

दरवान के इस आश्वासन से भीखमचन्दजी को सभवत कुछ धुंधली-सी आशा बंधी। आंसू पोंछकर लड़खड़ाते कदमों से वे घर लौट आये।

घर में लालटेन का पीला प्रकाश फैला हुआ था। गोपाल बीमार है, उसकी क्या हालत हुई होगी, इसकी कल्पना करके उनका दुख चौगना हो गया।

दरवाजा अन्दर से खुला ही था। धक्का देकर घुसते ही उन्होंने देखा — यशोदा गोपाल की लाश को पलग से उतार कर नीचे रख रही है।

भीखमचदजी इस दृश्य को एक पल तक चुपचाप देखते रहे। घर मे पति-पत्नी के अतिरिक्त और कोई नहीं था। गोपाल जा रहा था मृत्यु-मुख मे। महावली महादेव के विभ्रम-विधान में किसी तरह का अन्तर नहीं पड़नेवाला, यह निश्चित था। सारा विरोध, सारा विलाप व्यर्थ है। है, बस एक ही दुखदायी भावना दुर्भाग्य की मजबूरी।

एकाएक उनके मुंह से चीख निकल गयी — हे लक्ष्मीनाथ। मुझे अपनी शरण मे ले ले।

और कहते हैं, इसके बाद भीखमचंदजी पागल हो गये।

अनन्त समस्याओं से पराजित, निरुपाय भीखमचदजी अपने मस्तिष्क का सतुलन खो बैठे। नौकरी छूट ही चुकी थी। कुछ दिनों तक तो वे चुपचाप कमरे के एक कोने में बैठे सिर हिला-हिला कर कुछ सोचते रहे। बाद में मन-ही-मन बड़बड़ाने लगे। फिर जो उनका प्रलाप शुरु हुआ, तो आज तक नहीं रुका।

गोपाल बच गया। लेकिन भीखमचदजी हाथ से चले गये। इतिहास में ऐसी कथा आती है, कि एक राजा ने अपने पुत्र के बचाव के लिए अपने प्राण देना स्वीकार किया था। कहते है उसकी प्रार्थना मजूर भी हो गयी। परिणाम स्वरूप पुत्र जीवित हो उठा और पिता की मृत्यु हो गयी। इसी तरह यदि आज पिता की बलि लेकर गोपाल बच गया हो, तो यशोदा के लिए विषम समस्या ही है, कि वह किसे स्वीकार करे, किसे अस्वीकार करे। भगवान की इस विचित्र कृपा पर सिवाय आसू बहाने के वह कुछ भी तो नहीं कर सकती। दुर्भाग्य के इस वक्र कोण को यशोदा पत्थर-सा कड़ा दिल करके चुपचाप देखती रही।

घर में पागल पति, बीमार बच्चे और खाली हाथ लिये, किस तरह वह दिन काट रही थी, इसका साक्षी है सिर्फ वही, जिसके लिए ऋषियों ने सकल उपमाओं को व्यर्थ और अपूर्ण घोषित कर दिया है।

उन दिनों राधामाधव अपनी ससुराल गये हुए थे। समाचार सुनते ही दौड़े आये। भौजाई से मिलते ही पूछा — यह सर्वनाश कैसे हो गया ?

प्रत्युत्तर में यशोदा आंचल से आंसू पोंछती रही। कपार पर हाथ रखकर इतना ही कह सकी — भाग्य की बात है, देवर ! भाग्य की !

राधामाधव एक पल के लिए चुपचाप बैठे रहे। भाभी की इस बात का कोई जवाब देते उनसे नहीं बना। सिर उठाकर गोपाल को पुकारने लगे। जवाब न मिलने पर पूछा — वह कहां गया ?

गोपाल उस समय सो रहा था। राधामाधव की आवाज सुनकर आंखें मलता हुआ, आकर उपस्थित हो गया। उसे अपनी गोद में भरते हुए राधामाधव कहने लगे — भौजाई, यह गोपाल तो आज से मेरा बेटा हो गया।' फिर गोपाल की ओर देखकर, स्नेह से उसके माथे पर हाथ फेरते हुए उन्होंने पूछा — क्यों रे, मेरा बेटा बनेगा न ?

गोपाल ने हामी भरते हुए सिर हिला दिया।

–तुम्हारा ही है, देवर।' यशोदा ने कहा:— तुम्हारे आशीष से पार लगा दे, तो लगा दे। मेरी तो तकदीर ही फूटी हुई है।

–भाईजी कहां है ?

–ऊपर !

राधामाधव गोपाल को गोद में लिये ऊपर गये। रस्सी में बंधे हुए भीखमचंदजी बांह पर सिर रखे सो रहे थे। कांतिमान गोरा चेहरा बढ़ी हुई दाढ़ी के तीखे बालों से अत्यन्त विकराल दिखाई दे रहा था। बलिष्ठ शरीर पर अस्त-व्यस्त फटे-पुराने कपड़े चिथड़े-से लटक रहे थे। थोड़ी देर तक तो गोपाल और राधामाधव उन्हें देखते रहे। इसके बाद गोपाल को गोद से उतार कर भाई के चरण छूकर राधामाधव ने प्रणाम निवेदन किये। उनकी आंखें खुल गयीं। लेकिन वे बोले नहीं। सम्भवत पहचान नहीं सके।

राधामाधव ने स्वत परिचय दिया — मैं हूं राधामाधव !

भीखमचंदजी ने फिर भी जवाब नहीं दिया। टकटकी लगाकर चुपचाप उनकी ओर देखते ही रहे।

–उसकी फिक्र किसे है? अपना पेट तो पहले भर लें। बस।

–तो कह क्यों नहीं देते, गहने नहीं बिकेंगे!

–कह तो दूंगा। लेकिन फिर बस, हो गयी बात। सोचा है, खायेंगे क्या? भौजाई का स्वभाव तुम्हें मालूम नहीं। मैं जानता हूं। उपासी पड़ी रहेगी, लेकिन किसी का दिया हुआ एक पैसा नहीं लेगी।

–अच्छी बात है, हम खरीदते हैं ये सारे गहने। मैं गोपाल का ब्याह उसकी मा के गहनों के बिना थोड़े ही करूंगी!

अस्तु, राधामाधव के क्रोध की मीमांसा बड़ी आसानी से हो गयी।

सोने के भाव अचानक कितने ऊंचे चढ़ गये और सिर्फ कुछ चूड़ियां और चांदी की एक पायल बेच देने से ही सात सौ रुपये कितनी आसानी से मिल गये, इसका लुप्त इतिहास आजतक कोई नहीं जान सका। यशोदा ने देवर पर कभी अविश्वास नहीं किया। और इस तरह कुछ दिनों के लिए गाड़ी चर-चूं-चूं करती हुई फिर चलने लगी।

भीखमचंदजी का देशी इलाज चलता जरूर था, लेकिन उनके ठीक होने के कोई लक्षण नहीं दिखाई दे रहे थे। रस्सी से बांध कर न रखें, तो किसी भी समय बाहर भाग जाय कि ढूंढ निकालना मुश्किल हो जाय। साथ ही रस्सी तोड़ डालने की उनकी धुन निरन्तर गतिशील ही रही। सो महीने में एकाध-बार रस्सी पत्थर से घिस कर टूट ही जाती और परिणाम स्वरूप भीखमचंदजी कोई न कोई उपद्रव खड़ा कर ही देते।

यशोदा कुछ दिनों तक तो भाग्य को कोस कर आंसू बहाती रही, लेकिन अब उसने यह भी छोड़ दिया। जैसे कुछ भी होना शेष न रह गया हो, इसलिए आगत आपद को भुगतने के खिलाफ उसकी कहीं कोई अर्जी नहीं थी।

एक दिन रस्सी तुड़ाकर भीखमचंदजी पता नहीं कैसे, घर से बाहर निकल आये। संसार का वह मुक्त मनोरम वातावरण, लोगों का चक्रवत, कर्मरत जीवन, संसार की अद्भुत रंगीन झांकी, यह सब देखकर वे पुलकित होकर बीच सड़क पर नाचने लगे। वहीं एक छ-सात साल की बच्ची खेल रही थी। भीखमचंदजी उसके पास जाकर बोले—बेटा, बड़ी प्यास लगी है, पानी पिलाओगी?

–थोड़ा-सा पिलाऊंगी।

–अच्छी बात है, थोड़ा-सा ही पिला दो।

वालिका एक छोटी-सी लुटिया भर लायी। भीखमचंदजी ने वडी तृप्ति से पानी पिया। तत्पश्चात उस वच्ची को गोद में उठाकर नाचने लगे। वाद में उसे कंधे पर चढा कर इधर से उधर दौड़ने लगे। थोड़ी देर तक तो वच्ची के लिए यह वड़ा सुखद कौतुक रहा। इसके वाद वह घवरा कर, नीचे उतर आने के लिए झटपटाने लगी। उसकी भयाक्रांत आवाज को भरे दोपहर में सुननेवाला आस-पास में कोई नहीं था। औरतें अन्दर घर के काम-धंधे मे लगी हुई थीं। मर्द सव वाहर गये हुए थे। किमी ने उस पागल व्यक्ति के इस कार्यक्रम मे कोई विघ्न नही डाला। लेकिन नागपुरिया सेठ के यहा चिट्ठी लानेवाला डाकिया पागल के पास प्रमुदित कन्या की सकटावस्था को देखकर विचलित हो उठा। उसने जाकर सेठ को इत्तला कर दी। सारा कुनवा वालिका की मुक्ति के लिए भीखमचंदजी की ओर भागा। आसन्न-सकट से भयभीत भीखमचंदजी जी छोड़कर दौड़ने लगे। लड़की मारे डर के रोती रही। दूसरी गली में आते-आते लोगों ने उन्हें पकड़ लिया। रोते-कलपते भीखमचंदजी के हाथों से वच्ची को छीन लिया गया। एक महाशय ने उनकी वाहें कस कर पकड़ीं, और किसी तरह यशोदा को पुकार कर, उसके साथ घर तक पहुंचा आये।

इस छोटी-सी घटना का अत यों ही नहीं हो गया। इसका वहुत वड़ा कारण यह था कि वह कन्या थी सेठ धनपत उर्फ नागपुरिया सेठ की। वे पड़ौस मे ही रहते थे। भीखमचंदजी के प्रलाप और उपद्रव से उनकी तवीयत वेहद परेशान थी। इस दुर्घटना के कारण उनकी सहने की क्षमता का अत आ गया। भीखमचंदजी के वरावर न दौड़ मकने पर भी उनकी सास फूल गयी थी, फिर भी उन्होंने भीखमचंदजी के घर आकर ही दम लिया।

घर में घुसते ही उन्होंने चिल्ला कर पूछा — कहा है भीखमचंद ?

यशोदा ने किसी तरह उनके हाथ-पाव वाधे ही थे। सिर उठा कर उसने सेठ धनपत की ओर देखा। घूंघट निकाल लिया।

सभवत सेठजी ने यशोदा से किसी प्रत्युत्तर की आशा न की हो। ऊंचे स्वर में वोले — इसे छोड़ दो, वहू। इधर आओ, भीखमचंद। आज तुम्हारा पागलपन ठीक करके ही रहूगा।

यशोदा ने स्तव्ध होकर देखा, अमानुषिक वल-प्रयोग के परिणाम-स्वरूप भीखमचंदजी ने अपने वंधन खोल डाले है और वे चिल्ला-चिल्ला कर अपने

नाना प्रकार के दुखों का जिक्र करके भगवान को कोस रहे हैं। आस-पड़ोस के तमाम कदाचारियों की दुष्टता का इतिहास प्रस्तुत कर रहे हैं जिसका वर्णन करना सभ्य समाज मे वर्जित है। धनपत के पास आकर कहने लगे — मुझे बुलाया ? मुझे बुलाया ? लो, मैं आ गया। विष्णुकांतम्, कमलनयनम्'

भीखमचदजी को इस तरह मुक्त होते देखकर सेठ धनपत का गुस्सा और प्रज्वलित हो उठा। उन्होंने हाथ का बेंत उठाकर उस निरीह पागल को धुनना शुरू किया तो उनके हाथ लाल हो आये।

भीखमचदजी सेठ धनपत के चरणों मे लोट गये। चिल्लाते रहे — मारो, मुझे मारो। सब मिलकर मुझे मार डालो।—त्वमेव शरणम् मम देव देव! मैंने बहुत से पाप किये हैं, प्रभु। अब क्षमा कर दो। आज तुम्हारे दर्शन हो गये, मुझे मोक्ष मिल गया।

लगातार मारते-मारते धनपत सेठ का क्रोध अधिकाधिक बढ़ता ही गया। लिहाजा जो काम बेंत से नहीं कर सके, उसे जबान से पूरा करने लगे। थूक उछालते हुए जोर-जोर से जो गालिया वे निकाल रहे थे, उन्हें सुनकर बाहर का कोई आदमी, चाहता, तो उनके भी हाथ-पाव बाध कर बिठा देता।

इसी समय यशोदा पति के सामने हाथ फैला कर क्रुद्ध विवश शेरनी की तरह आकर खड़ी हो गयी। आज तक उसने इस बुजुर्ग, न्यात-गगा के सरपच के सामने जरा-सा पल्ला इधर से उधर नहीं होने दिया। उनके सामने चप्पल पहन कर रास्ता पार करने में सकोच महसूस करती रही। मुह से एक शब्द तक नहीं बोली। लेकिन सकोच के तमाम विधि-विधानों की मर्यादा आज समाप्त हो गयी। आज घूघट का पता नहीं था। वस्त्र अस्त-व्यस्त हो गये थे।

यशोदा के बीच में आ जाने से ही धनपत का गुस्सा समाप्त नहीं हुआ। वे चिल्लाते रहे — बहू, तुम बीच मे मत आओ। मैं कहता हू, तुम हट जाओ। तग कर रखा है, इस हरामजादे ने। आज इसका पागलपन ठीक करके ही रहूगा!

सेठ धनपत से पति की रक्षा के लिए यशोदा स्वय मार सहन करती रही।

पीटते-पीटते बेंत टूट गयी। भीखमचदजी जोर-जोर से हाय-हाय करते रहे।' धनपत ने बेंत का अतिम हाथ जमाते हुए कहा — याद रखना!

सिसकती हुई यशोदा ने भर्राए हुए कंठ से कहा — ये तो पागल हैं.. यह बात सारी दुनिया जानती है। लेकिन इतना जंगलीपन करके, हत्तीवासा करके तुम भी सुखी नहीं रहोगे, सेठजी!

यशोदा की बात का जवाब दिये बिना, अनर्गल बकता हुआ धनपत सेठ वापस जाने के लिए ज्योंहि मुड़ा, उसने देखा, दरवाजे पर तमाशा देखने के लिए खड़ी भीड़ को चीरता हुआ एक बलिष्ट व्यक्ति ठीक उनके सामने आकर खड़ा हो गया है।

वे थे राधामाधव। उनकी आखों से चिनगारियां निकल रही थीं। सेठ धनपत दो कदम पीछे हटे। राधामाधव ने एक जोर से धक्का दिया और वे अर-र-र-धम से मोरी के पास आकर गिर पड़े। उनकी मलमल की धोती और ऊनी कुर्ता खराब हो गया। सेठ का हाथ मरोड़कर राधामाधव ने बेंत छीन लीं। एक हल्की-सी आवाज के साथ सेठ के हाथ की हड्डी हिल गयी। राधामाधव जोर से चिल्लाये —नालायक, औरत पर हाथ उठाया तूं ने!

उठने की कोशिश करने पर उसके गालों पर एक दुहत्थड़ मारते हुए राधामाधव चीख उठे — हरामजादे! पैसे का इतना घमण्ड है तुझे? आज तूने औरत पर हाथ उठाया! तू समझता है, पागल-आदमी की औरत है, कोई आगे-पीछे नहीं है। लेकिन याद रख, राधामाधव तुझे खोद कर जिन्दा गाड़ देगा!

सेठ बिलबिलाया — उसने जरा-सी बच्ची का गला घोट कर मार दिया होता तो? यह तुममें से कोई देखने नहीं आता। मुहल्ले भर का सोना-उठना हराम कर रखा है, यह सब तुम कोई नहीं देखते। ऊपर से झगड़ा करते हो!

यशोदा बीच में पड़ी। राधामाधव का हाथ पकड़ कर बोली — अब बस। बहुत हो गया। जाने दो।' फिर सेठ धनपत की ओर देखकर कहा — जाइये सेठजी, कहा-सुना माफ करना। जो होना था वह हो चुका।

इतना कह कर इस अचिन्त्य दुखद काण्ड से लज्जित होकर वह वहीं बैठ गयी।

भीखमचंदजी ने रास्ता साफ देखकर बाहर भाग जाना चाहा। लेकिन राधामाधव ने उन्हें पकड़ लिया। कहा — चलो ऊपर।

सेठ धनपत जाते-जाते कहता गया — अन्नदाता का राज है। कोई अंधेर है! मैं सब समझ लूगा। सेठ धनपत से वैर लेने का मजा देख लेना। सात पुश्त तक नहीं छोड़ूगा।

मीसमचदजी के हाथ-पांव बांधते हुए राधामाधव ने पीछे मुड़ कर देखा, कहा — तेरी तकदीर है, धनपत। भौजाई ने मना कर दिया है। नहीं तो एक पुश्त तो तेरी आज यहीं खत्म हो जाती। चुपचाप चला जा। ये सेठाई की आखें किसी और को दिखाना। राधामाधव मट्टे की कमाई पर जीता-मरता है। वह किसी आदमी के जाये की परवाह नहीं करता।

सेठ धनपत उस समय तो लगड़ाता हुआ, अपना टूटा हुआ हाथ सहलाता हुआ चला गया। लेकिन मुकद्दमे की धमकी इधर-उधर से बीच-बीच मे कभी-कभी सुनाई दे जाती।

लेकिन धनपत सेठ को जब राधामाधव के भैरू-सम्प्रदाय के चेलों का बल-विक्रम मालूम हुआ तो मुकद्दमे की बात छोड़कर नागपुर जाने का ही उन्होंने निश्चय कर लिया। वे रवाना होने की सारी तैयारी कर चुके थे, कि एक दिन राधामाधव हाथ में लट्ठ लिये उनके घर आ धमके!

कपार पर आंखें चढाकर अप्रसन्न मुद्रा से, साक्षात यमरूपी राधामाधव को सामने उपस्थित देखकर अपने भय को दबाते हुए उन्होंने पूछा — अब क्या चाहते हो?

–मिलने आया हू।

–लट्ठ लेकर?

–हा। इसलिए कि शायद इसकी भी जरूरत पड़ जाय।

–तुम मारपीट करना चाहते हो? मै अभी पुलिस को बुलाता हूं। मोहनसिंह!

–यह सब व्यर्थ है। मै बाहर का दरवाजा बन्द करके आया हू। रही पुलिस को बुलाने की बात। सो उससे भी कोई लाभ नहीं। मैंने जितना पैसा उन्हें खिलाया है, उतना तेरा सारा घर नीलाम करने पर भी उनके हाथ नहीं लगेगा। खैर, जाने दो, कड़वी बातें करने से क्या लाभ? मैं एक जरूरी काम से आया हू।

सेठ ने व्यवहारिक बुद्धि से काम लेकर पूछा।— क्या काम है ?

–पहले तो एक बात पूछनी है।

–क्या है ?

–तूं मेरा एहसान मानता है कि नहीं ?

–जरूर मानता हूं। दस दिन से भुगत रहा हूं।' इतना कह कर उन्होंने कुर्ते की बाह उठा कर टूटे हुए हाथ पर बंधा हुआ प्लास्टर बता दिया।

–झगड़े की बात मत कर। मेरा गुस्सा बहुत बुरा होता है। यह बीकानेर के किसी भी आदमी से पूछ ले। उस दिन गम खा गया था, वर्ना यहां आज ब्राह्मण जीमते होते। मैं कहता हूं, उस दिन के बाद तेरे साथ कोई छेड़खानी नहीं की, इसका एहसान मानता है कि नहीं ?

–अच्छा सो ही सही। अब क्या चाहते हो ?

–चोहट्टे में तेरी दो दूकानें हैं ?

–हां है। सो ?

–वे कितने में खरीदी थीं ?

–ठीक याद नहीं। शायद—

–मुझे मालूम है। कालू संथार से डेढ़ सौ में ली थी।

–बहुत पुरानी बात है।

–इसीलिए तो याद दिला रहा हूं।

–इतना ही दिया होगा। लेकिन कालू ने अपनी मर्जी से दी थी।

–मुझे इससे मतलब नहीं, कि उसने क्यों और कैसे दी। मुझे ये दोनों दूकानें चाहिए। समझा ? ये रहे डेढ़-सौ रुपये। यह रहा स्टाम्प पेपर। लिखकर दस्तखत कर दे।

सेठ धनपत की व्यवसायिक बुद्धि उदित हुई। बोले — वाह, अब यह डेढ़ सौ में कैसे दे सकता हूं ? जमाना कितना बदल गया ! कम से कम दो हजार होने चाहिए। दोनों का ४० रुपया तो किराया ही आता है।

–इसीलिए तो मुझे इसकी जरूरत है। हजार-बजार की बात मत कर। चाहूं तो मुफ्त में भी ले सकता हूं। पर गुरू का हुक्म है, कि तेरे पापकी कमाई की ये दूकानें मुफ्त में लेने पर बरकत नहीं करेंगी। सो मूल कीमत दे रहा हूं। फिर भी अपने लिए जरूरत होती, तो मुफ्त में ही लेता, लेकिन ये दूकानें

चाहिए भाभी के लिए। वे तो मुफ्त मे कोई चीज लेनी नहीं। उन्होंने जेवर बेचे हैं, वही रुपये तुझे दे रहा हू।

–और यदि मै नहीं दूं तो ?

–तो फिर मुश्किल ही है। तुम देख तो रहे ही हो, कि मैं कोई भला आदमी तो हूं नहीं। लट्ठ लेकर मिलने आया हू। तूने भाई-भौजाई की जो हालत की है, उसका बदला लिए विना नागपुर तक पहुचने नहीं दूंगा।

इतना कह कर राधामाधव ने रुपये गिनकर सेठ धनपत के सामने रख दिये। कहने लगे — गुरु का हुक्म है, कि दोनो दुकानें भीखमचदजी की बहू और गोपाल के नाम से होनी चाहिए। गुरु हैं सन आदमी। वे किसी को नाहक परेशान थोड़े ही करते हैं ? वे तो घट-घट की जानते है। तेरे सारे पाप-कर्म उन्हें मालूम है। यह तो प्रायश्चित है। थोड़े मे छुटाकारा हो रहा है। गगा नहा ले। ब्राह्मण की आशीस मुफ्त में मिल जायगी। ले ले।

–अजी, भीखमचदजी की मदद करनी है, तो मैं ही आपको मिला ? सब लोग मिल कर चन्दा कर लो, तो मैं भी अपने हिस्से का दे दूगा। लेकिन यह जोर जबर्दस्ती की बात—

–जोर जबरर्दस्ती ? ठीक, वही सही। चन्दा तू क्या देगा, धनपत ?— और सुन, मेरे रहते भीखमचदजी तो भूखों मरेंगे नहीं ! लेकिन बात निमित्त की है। तूं निमित्त बन जा। आज मौका मिला है। तू भी सेठ रामरतन* बन जा। ये ले रुपये, यह रहा स्टाम्प पेपर। लिख कर दस्तखत कर दे।

और कोई उपाय न देखकर सेठ धनपत ने फाउन्टेनपेन निकाल कर स्टाम्प पेपर पर दूकान बेचे जाने की बात लिख कर दस्तखत कर दिये। लेकिन मन-ही-मन इस व्यक्ति के प्रति उनकी विरक्ति की सीमा नहीं रही। ऊपर से जबान रगीन करके बोले — चलो, अच्छा ही है। किसी गरीब के काम आयेगा। मेरे लिए ४० रुपये आये तो क्या ? और न आये तो क्या ! और राधामाधव, ये रुपये भी अपने ही पास रख लो। यहां कुछ दिन के लिए आया था, किसी से वैर-दुश्मनी क्यों मोल लूं ? आखिर मुझे रहना तो तुम सब लोगों के बीच ही है कि नहीं ? दुख किसमें नहीं पड़ता बताओ तो, राजा रामचन्द्रजी भी इससे नहीं बच सके,

* रामरतन डागा। राजस्थान की एक प्रचलित कहावत के शिरोनायक परमदानी सेठ

थे, तो गुरु ने आदेश दे दिया — पच्चीस साल तक गृहस्थ-सुख का भोग कर राधामाधव, इसके बाद सत्गुरु शरण में आ जाना।

गुरु के आदेश से राधामाधव घर-गृहस्थी के चक्कर में सम्पूर्ण रूप से आबद्ध हो गये, और पच्चीस साल की अवधि को पूरा करने में लगे हुए हैं। अब पत्नी का मोह और शासन कितना प्रबुद्ध हो उठा है, इसका सांकेतिक जिक्र पर्याप्त माना जाना चाहिये।

चौहट्टे की दो दुकानों के किराये से भीखमचंदजी के घर का गुजारा किसी न किसी तरह चलता रहता है। राधामाधव ने प्रत्यक्ष रूप से भौजाई को रुपये-पैसे देने की हिम्मत आज तक नहीं की।

इसी तरह इन दो गृहस्थों का संसार चल रहा है।

तीन :

तो फिर हमारी तुम्हारी तो बिसात ही क्या ? ऐसी मुसीबत के वक्त आदमी आदमी के काम नही आयेगा तो आयेगा कौन ? .अच्छा राधामाधव, तुम इनका कही अच्छी जगह इलाज क्यों नहीं करवाते ?

राधामाधव ने इस गिरगिट की बात का जवाब नही दिया। वे चुपचाप सेठ की लिखावट को देखते रहे। फिर बोले — देख, धनपत। मै पढा-लिखा नही हूं। इसमे कोई जालसाजी तो नही है ?

-नहीं जी। जब दे ही रहा हूं, तो जालसाजी क्यों करूंगा ?

—याद रखना, कुछ गड़बड़ हुई तो तेरे घर मे प्रलय आ जायगा।

-किसी वकील से पढवा लो पहले। रुपये ले जाओ। विश्वास हो तो दे जाना।

-नहीं, सो बात नही। रुपये रख लो।

राधामाधव अपना लट्ठ उठाकर, कागज कुर्ते की जेब मे रख कर चलने लगे। जाते जाते कहते गये —धनपत, आज तुझे एक बात कहता हूं, मेरे भीखमचंद ने उस दिन तेरी लड़की को प्यार ही किया था। लेकिन हम ठहरे पागल आदमी, हमने समझा, कि लो लड़की को मार ही तो डालेगा। मेरी तो आज तक समझ मे नही आया कि दरअसल मे पागल कौन है ? अच्छा, ब्राह्मण हो, इसलिए प्रणाम करता हूं। नागपुर तक आराम से जाओगे।

इसी समय वही कन्या इधर आ निकली। अपने पिता के गले मे बाहे डाल कर उसने पूछा — बाबूजी, ये कौन हैं ?

गुप्त क्रोध और घृणा को सेठ धनपत प्रकट नही करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने बालिका के प्रश्न का कोई जवाब नही दिया। जूते पहनते हुए राधामाधव ने सुन लिया। दरवाजे के पास से बोले — मैं हू माधवकाका, बेटी। रास्ते मे जब कहीं मिल जाऊ, रेवड़ी बताशे माग लेना।' कह कर वे रवाना हो गये। धनपत ने बच्ची को दुतकारते हुए कहा— अन्दर जाकर खेल। तुझे कहा किसने था, यहा आने को ?

इस बात को अब काफी अर्सा हो चुका है। राधामाधव मे न तो अब वह मस्त फक्कड़पन है, और न औघड़बाबा के सत्संग का वह आनन्दपूर्ण मुक्त प्रभाव ही। जब से चोरिये ने चूरू मे धान की दूकान कर ली, औघड़बाबा वहीं जाकर बस गये। ब्याह के बाद सिर्फ एक बार वे अपने आदि-गुरू की पूजा करने गये

थे, तो गुरु ने आदेश दे दिया — पच्चीस साल तक गृहस्थ-सुख का भोग कर राधामाधव, इसके बाद सत्‌गुरु शरण में आ जाना।

गुरु के आदेश से राधामाधव घर-गृहस्थी के चक्कर में सम्पूर्ण रूप से आबद्ध हो गये, और पच्चीस साल की अवधि को पूरा करने में लगे हुए हैं। अब पत्नी का मोह और शासन कितना प्रबुद्ध हो उठा है, इसका सांकेतिक जिक्र पर्याप्त माना जाना चाहिये।

चोट्टे की दो दुकानों के किराये से भीखमचंदजी के घर का गुजारा किसी न किसी तरह चलता रहता है। राधामाधव ने प्रत्यक्ष रूप से भौजाई को रुपये-पैसे देने की हिम्मत आज तक नहीं की।

इसी तरह इन दो गृहस्थों का संसार चल रहा है।

तीन :

यशोदा ने राधामाधव के घावों पर कपड़े की लीरी बांधते हुए कहा — बहुत देर हो गयी है। रसोई तैयार है। खा-पी कर जाना।

–मंजूर है। लेकिन तुम्हारी सती बहू भूखों-मर कर प्राण त्याग दे, तो उसके लिए फिर मैं जिम्मेवार नहीं रहूंगा।

–वचन दिया, ऐसा नहीं होगा। वह तुम्हें ढूंढती हुई अभी आती ही होगी।

–अच्छी बात है। देखें, बचने का कोई उपाय भी है कि नहीं। खैर, भईजी की दवा भी तो लानी है।

–हां, लानी तो है ही।

–तो रुक्का और शीशी दे दो। ले आऊं।

–पहले थोड़ा खा-पी लो। इसके बाद जाकर ले आना।

–पहली बात तो यह, कि मैंने अभी तक स्नान तक की नहीं है। दूसरी बात यह, कि नहा–धोकर खाऊंगा–पीऊंगा तब तक वैद्यजी का दवाखाना जरूर बन्द हो जायगा। इसलिए तीसरी बात ही ठीक है कि दवा की शीशी और रुक्का दे दो। ले आऊं।

यशोदा ने अधिक बहस नहीं की। अन्दर से शीशी ले आई। देते हुए बोली — कहना, रात को बुखार भी था। कुछ देर नींद आई जरूर, लेकिन बहुत थोड़ी। रात को दो बजे उठ गये। फिर वापस नहीं सो सके।

–अच्छा।' कह कर ज्योंहि राधामाधव रवाना होने लगे, सामने देखा, श्रीमती पारो सीढिया चढकर, चौकी तक पहुच गयी हैं। दरवाजे पर साक्षात्कार होते ही जवाब तलब हुआ — आज नहाना–धोना नहीं है क्या ?

–नहीं। आज बिल्कुल इरादा नहीं है। आपको कोई खास एतराज है क्या ?' फिर हंस कर उसके कान के पास जाकर धीरे से बोलेः—सुना है, बहुत दिनो के बाद गुरुजी यँहा पधारे हैं। दर्शन कर आऊ ? झोली फैला कर वरदान माग लाऊंगा। कहूगा, बाबा, बेटा नही तो बेटी ही सही। कुछ तो दे दे। विश्वास रखो, वापस लौट कर आऊंगा तुम्हारी ही शरण मे। अच्छा चल दिया।' कहते हुए वे रवाना हो गये।

यशोदा ने पारो को राधामाधव के पास खड़े देख लिया था। इसलिए बाहर आती हुई बोली — कहीं खो नहीं जायंगे, देवरानी मेरी। दवा लेकर अभी वापस लौट आते है।

–मेरे लिए तो भले मत लौटे।' अपने आने का मंतव्य प्रकट हो जाने पर उसे छिपाने का प्रयत्न करती हुई, अभिमान के स्वर मे पारो ने कहा — मुझे क्या मतलब ?' फिर विषयान्तर करके अपनी लज्जा छिपाने के लिए बोली.— गोपाल स्कूल गया क्या ?

इस छल को यशोदा समझ गयी। बोली —हा जी, एक गोपाल तो गया स्कूल, और दूसरा गया है काम से। बैठ यहा। दोनो ही वापस लौट आयेंगे। वापस लौटे बिना किसी को कहीं गति नहीं मिलेगी।

सिर हिला कर पारो ने कह ही दिया — बस हो गया। शाम तक वापस आ जायं, तो मुझे कह देना। ये जो उनके सत्यानाशी गुरु आये हुए हैं, वे उन्हें जल्दी छोड़ थोड़े ही देगे। इनका कोई ठीक है, जब चाहे तब सब कुछ छोड़छाड़ कर चल दें। मर्दों का क्या भरोसा ?

–तेरी तो पलक से ओट हुआ कि बस, तू समझती है कि अब गया सब कुछ हाथ से। इतना मत बाधो बिचारे को। कुछ तो दम भी लेने दो। अरी पगली, यह रूप छोड़कर भभूत रमाने की बात राजा भरथरी भी नहीं सोच सकता। समझीं ?

वाक्यार्थ तो पारो अवश्य समझ गयी। अप्रत्यक्ष तारीफ से सम्भवत मन ही मन खुश भी हुई। लेकिन विश्वास उसे नहीं होता। प्रकारान्तर से बोली — जिठानीजी, आटा पीस रहीं थीं क्या ?

–तू आ। बैठ। रात जरा देर हो गयी। बस बैठी ही थी।

पारो घट्टी पर बैठते हुए बोली — लाओ मै पीस दू।

–नहीं री। रहने दे। तुझसे यह सब नहीं होगा। जानती तो है, तेरा कितना ख्याल रखती हू। मेहनत करने से कहीं जरा-सी भी काली पड़ गयी तो फिर माधवजी ’ कहते-कहते यशोदा को हसी आ गयी।

–यों जाते हैं तो सौ बार जाय। मै भी अपने घर चली जाऊगी। मुझे ही ऐसी कौनसी गरज है ?

उसे कैसी गरज है, यह जान कर यशोदा अपने बड़े से बड़े दुख मे भी हस पड़ती है। हाथ जोड़ कर उसने सदा भगवान से प्रार्थना की है कि हे प्रभो यह निरर्थक और अमर गरज ऐसी ही बनी रहे।

यशोदा मना करती रही। लेकिन पारो घट्टी पर आटा पीसने बैठ ही गयी। कहने लगी — वहा बैठी-बैठी क्या करूगी ? घर में अकेले डर लगने लगता है।

देरानी-जिठानी दोनों मिलकर आटा पीसने लगीं। थोड़ी देर तक चक्की के चलने के सिवाय कहीं किसी तरह की आवाज सुनाई नहीं दे रही थी। जिन गूजरनियों का दूध अभी तक बिका नहीं था, सिर्फ वे ही ‘दूध लो’ थकी हुई आवाज में पुकार रही थीं। पारो ने सिर उठा कर जेठानी से पूछा — वे दवा ही लेने गये हैं न ?

–हां भई, हा। दवा लेने ही गये हैं। कहीं खो-खा गये तो मै जिम्मेवार हूं। ढूढ कर ला दूगी।

–वापस कब आयेंगे ?

–अरे, अभी आ जायगे। तेरा बस चले, तो तू उस बिचारे को डिबिया में बन्द करके ही रखे! घर से बाहर कदम ही न रखने दे। मर्द तो आखिर

बाहर जायंगे ही। तभी देखती हूं, देवरजी की साइकिलों की दूकान से इतना कम किराया क्यों आता है। तूं उन्हें छुट्टी दे तो न, जाकर हिसाब-किताब देखें। जब तक सब काम नोकरों के भरोसे ही होगा, तब तक ऐसे ही चलेगा।

-मैं किसी को बांध कर तो रखती हूं नहीं। रोज १२ बजे निकलते हैं, सो ४-५ बजे तक लौटते ही नहीं। कभी-कभी तो ७-८ तक बज जाते हैं। सूने घर में अकेली बैठी-बैठी बाट जोहती रहती हूं।

-हे प्रभो! चार-पाच घंटे। कहती क्या हो? इतनी देर तक उन्हें नजरों की ओट रख लेती हो!

-क्या करूं? अकेली का मन ही नहीं लगता। शाम को गोपाल भी पढने के लिए मास्टरजी के यहा चला जाता है।

-भगवान ने चाहा तो अब अकेली नहीं रहोगी। मै रोज हाथ जोड़ कर प्रार्थना करती हूं, तेरी गोद भर जाय। तेरा कंधा लार से भीग-भीग जाय।

पारो लाज से छुई-मुई सी हो गयी। कृत्रिम क्रोध से अपना मुंह नीचे कर लिया।

तभी अन्दर से किसी ने पुकारा — पानी. पानी पानी!

चक्की की आवाज मे सम्भवत यशोदा ने सुना नहीं। पारो ने कहा — जेठजी पानी माग रहे है। दे आऊं?

-तूं बैठ। मै अभी आई।

हाथ धोकर, मटकी मे से पानी का गिलास भर कर, यशोदा ऊपर चली गयी। भीखमचंदजी के हाथ-पाव बधे हुए थे। एक ओर पड़े-पडे वे 'पानी पानी' चिल्ला रहे थे। यशोदा ने पानी का गिलास उनके सामने रख दिया। लेकिन उन्होंने उस ओर ध्यान नहीं दिया। यशोदा की ओर एकटक देखते रहे। पूछा — यशोदा मुझे प्यास लगी है। पानी पीऊंगा!

यह कैसी सर्वग्राही प्यास है, जिसकी तृप्ति कभी कोई नहीं कर पाएगा!

यशोदा ने आगे बढकर, उनके पास बैठकर, गिलास उनके मुह से लगा दिया। लेकिन उन्होंने पानी पिया नहीं। थोड़ी देर तक तो वे पानी मे अपना रूप ही निहारते रहे। इसके बाद कहने लगे — यशोदा, अब मुझ मे रूप नहीं रहा, जवानी भी बीत गयी, अब भला मेरे पास कौन आयेगा? तूं भी क्यों आयेगी? हम सब का स्वार्थ का ही तो मेला है। है न?

नीचे काम मे लगी हुई थी। नहा तो तुम बुलाओ, और मै न आऊ, ऐसा कहाँ हो सकता है, मेरे देवता!

पति के स्वर मे पारो को जो अलभ्य स्निग्धता महसूस हुई, उसे पाकर वह धन्य हो गयी। नम्र स्वर मे बोली — पानी पी लो।

–मेरे पास आओगी, यशोदा?

–आऊगी। लो।' कहती हुई वह पति के पास सरक गयी।

पति ने अपने हाथो मे यशोदा का हाथ लेकर बढ़ी हुई दाढ़ी पर फेरते हुए कहा —दाढ़ी चुभती है यशोदा?

–नहीं।

भीखमचदजी उसका मुलायम हाथ अपनी दाढ़ी पर रगड़ते रहे। काटो की तरह खड़े तीखे बाल चुभ तो रहे थे, लेकिन यशोदा इस जरा-सी बात को स्वीकार कैसे करे?

एकाएक हाथ छोड़कर तीखे स्वर मे उन्होने पूछा — तुम मुझे प्यार करती हो यशोदा?

यह कैसा सवाल है? इसका क्या जवाब दिया जाय? इसका उत्तर देने से पहले जमीन फट जाती, तो यशोदा की लज्जा का निवारण हो जाता। लेकिन इस दुर्लभ प्रसग का सुख उठाने के मोह मे उसने सकोच छोड़कर, सिर ऊचा उठाकर कहा,— करती हू।

उनका स्वर और प्रचण्ड हुआ — मै तुझे पीटूगा। तू मार खाएगी?

यशोदा ने प्रतिवाद नहीं किया। कहा — खाऊगी।

इसके बाद उस पागल प्रलापी पति ने उस आत्मसमर्पिता नारी पर जो अत्याचार किये, उसकी ओर सकेत करने की भी रुचि नहीं होती। इस तीव्र विरक्ति से ही स्पष्ट हो जाना चाहिए, कि अभागी यशोदा ने अपने पति-देव के किन-किन अत्याचारों को, बिना एक सिसकारी के, चुपचाप सहा। यही तो भारतीय नारी के लिए गौरवपूर्ण प्रसाद है।

नीचे देरानी पारो चक्की पीसते हुए सोच रही थी — लोग सभी मुझी को कहते हैं कि पति को एक मिनट के लिए भी नहीं छोड़ती। जिठानीजी भी ऊपर गयीं, सो लौटने का नाम ही नहीं लेतीं। पति पागल हो तो—और मेरे मालिक की तरह सिरफिरा हो तो, पति ही है। कोई कैसे उन्हे छोड़ सकता है?

पति के साहचर्य से अतृप्त यह नारी चक्की की घुम्मर की आवाज में नहीं जान सकी, कि घर में बंधा हुआ एक आदमी अपनी पत्नी के साथ कितना अत्याचार कर सकता है।

थोड़ी देर में भीखमचंदजी की उत्तेजना का यह दौर भी समाप्त हो गया। यशोदा के पावों पर अपना सर रख कर बारम्बार माफी मागते हुए उसकी स्तुति गाने लगे — यशोदा, तेरी जैसी सती इस संसार में और कोई नहीं है! मैं तो श्रापभ्रष्ट हूं। नीच हूं। भगवान मुझे कभी क्षमा नहीं करेंगे। अगले जनम में तू मुझे फिर नहीं मिल सकेगी।

यशोदा ने पति को उठाते हुए पूछा — मेरा एक कहा करोगे?

समझदार आदमी की तरह भीखमचंदजी ने गंभीरतापूर्वक जवाब दिया — करूंगा।

–हजामत बनवा लो।

–बनवा लूंगा।

–नाई को बुलाऊं?

–यशोदा, होली कब है?

–दो चार दिन ही बाकी है।

–इस बार मैं तुम्हारे साथ जी भर कर होली खेलूंगा।

–अच्छा।

–लेकिन यशोदा, यदि मैं मर गया तो?

यशोदा इस प्रश्न का जवाब नहीं दे सकी। चुप रही।

उन्होंने आगे पूछा — मरने के बाद होली कैसे खेलूंगा? मन की मन में ही रह जायगी।

यशोदा ने खून का घूंट पीकर कहा — इसके बाद होली जलेगी ही नहीं।

–मेरा गोपाल तो नहीं मर गया?

बस, यही एक ऐसा प्रश्न है, जिसे सुन कर अपने पति के सामने खड़े रहने तक का साहस उसे नहीं होता। लेकिन भागने का कोई रास्ता नहीं था। कहा — स्कूल गया है। आने पर भेज दूंगी।

–भेजना।

–जरूर भेजूगी।' कहते–कहते उसका कंठ प्रकम्पित हो उठा।

–मैंने पानी पीया ?

–नहीं !

–तो मैं अब तक क्या कर रहा था ? पानी ही तो पी रहा था।

–कुछ नहीं कर रहे थे। यह गिलास रहा। पी लीजिये।

–अपने हाथ से नहीं पिलाओगी ?

–पिलाऊगी। लो।

यशोदा ने पानी का गिलास भीखमचदजी के मुह से लगा दिया। वे गट-गट पी गये। बाह से मुह पोंछ कर बोले — यशोदा, तू भी मुझे पागल समझती है क्या ? देख ले, मैं बिलकुल भला-चगा हू। तू कहेगी, वही करूगा। मेरे हाथ–पाव खोल दे। मुझे घर से बाहर जाने दे। मैंने ऐसा कौनसा पाप किया है, जो तू मेरी स्त्री होकर मेरे साथ ऐसा वर्त्ताव कर रही है ? मैं कहता हूं, एक दिन तू मेरी हत्या कर डालेगी। नर्क मे भी तुझे जगह नहीं मिलेगी।

यशोदा ने पति की इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। चुपचाप अपलक नेत्रों से उन्हे देखती रही।

–गोपाल की मा, मुझे छोड दे, नहीं तो मैं मर जाऊगा।

मृत्यु की इस धमकी से भारत के किसी भी कोने मे रहनेवाली स्त्री मारे डर के बडे से बड़ा दुस्साहस कर सकती है। लेकिन यशोदा पति को बधन-मुक्त नही कर सकी।

यशोदा की इस चुप्पी से भीखमचदजी का दबा हुआ क्रोध उभर आया। वे फिर अनर्गल प्रलाप करने लगे।

•

इसी समय किसी के ऊपर आने की आहट सुनाई दी। यशोदा हट कर एक ओर बैठ गयी। झांक कर देखा, गोपाल था। स्कूल से सीधा मा को ढूंढता हुआ, यहा ऊपर चला आया। उसे देखते ही भीखमचदजी की प्रलयकर आक्रोशवाणी एकबारगी शांत हो गयी। पता नहीं, इस छोटे से जीव में ऐसी कौनसी अद्भुत शक्ति है, कि इस पागल के अनियंत्रित मस्तिष्क को वह विचित्र आकर्षण से मुग्ध कर देती है।

गोपाल का मुंह लटका हुआ था। उसने मा की ओर नहीं देखा, सीधा भीखमचंदजी के पास चला गया। घुटनों के वल वैठकर उसने पिता से पूछा — आपासा, क्या तुम कभी भी भले आदमी नहीं बन सकते?

यह प्रश्न इतना डरावना, इतना अप्रत्याशित था, कि यशोदा को ढूंढे जवाव नही मिला। गोपाल ने अपना प्रश्न फिर से दुहरा दिया।

डरते-डरते भीखमचदजी ने सफाई दी — मैं भला आदमी ही तो हूं। मै पागल नहीं हूं।

यह कितना वड़ा झूठ है, इसे गोपाल भी समझता है।

भीखमचंदजी ने अपनी वात के समर्थन के लिए यशोदा की ओर देखकर पूछा — है न यशोदा?

यशोदा ने आगे वढ़कर गोपाल की वाह पकड़ कर आदेश दिया — ऐसी वाते आपासा से नहीं करते, गोपाल। चल, नीचे चल।

और एक तरह-से जवर्दस्ती ही वह उसे नीचे खीच लायी।

भीखमचंदजी चीखते रहे — यह नहीं जायगा, नीचे। यह मेरे पास वैठेगा। गोपाल यहा आ। यहा आ गोपाल। आ। आ।

गोपाल ने मुड़ कर पिता की ओर देखा। लेकिन यशोदा ने धमकाया — सुनता नहीं है? मैं कहती हूं, नीचे चल।

एक क्षण तक गोपाल अपने निरीह पिता की ओर देखता रहा। वाद मे पुस्तकें उठा कर मा के साथ चला आया।

नीचे आकर, पुस्तकें एक ओर फेंक कर, घुटनों मे मुंह छिपा कर, वह आगन के एक कोने मे रसोई के सामने वैठ गया। यशोदा ने आज पहली वार देखा, कि यह छोटा-सा वालक भी अपने पिता के पागलपन के कारण अत्यन्त दुखी और अस्थिर हो उठा है।

गोपाल का सिर अपनी गोद मे लेकर, प्यार से यशोदा ने पूछा — क्या वात है बेटा? सच-सच वता दे?

स्नेह और अभयदान पाकर वालक ने कहा —मा, आपासा कव ठीक होंगे?

गोपाल की इस अदृष्ट सहानुभूति तथा अवोध मार्मिक दुख से यशोदा की आखो मे आसू छलक आये। रुंधे हुए कंठ से वेटे का माथा सहलाती हुई वोली — यह किसी के वस की वात थोड़े ही है वेटा? यह सव तो ठाकुरजी के हाथ है, मेरे लाल!

—ठाकुरजी की बात तो कोई नहीं जानता, मा। लोग कहते हैं, डाक्टरों से इसका इलाज होता है। इसके लिए अस्पताल भी होते हैं। वहा रखने पर कुछ ही दिनों मे सब कुछ ठीक हो जाता है। सब कहते हैं कि यहा इस तरह घर मे बाध कर बिठाने से आपामा कभी ठीक नहीं होंगे।

यशोदा को रुलाई आ गयी। बोली — गोपाल तू भी यही कहता है? सभी कहते हैं, इन्हें अस्पताल भेज दू? मगर पागल तो ये आज हुए हैं। कल तक तो अच्छे भले थे। तब उनकी सेवा करती थी, और आज अब इन्हें दूसरों के भरोसे छोड़कर, घर मे शाति से बैठकर, अकेली सुख कैसे भोगूगी? और बेटा तुम तो जानते नहीं, अस्पताल जाकर आज तक कोई वापस नहीं लौटा। गोपाल तुझे तो वे कोई दुख नही देते, फिर तू भला ऐसी बात क्यों करता है? तुझे क्या मुझ पर भी दया नहीं आती?

कहते-कहते यशोदा उठ खड़ी हुई। गोपाल को सचमुच मा का दुख बहुत बड़ा होकर दिखाई देता है। मां के आसपास जो कष्ट, जो लाछना, जो तिरस्कार, जो दुख बिखरा हुआ है, उसे वह भी जानता-समझता है। लिहाजा जिस पति के साथ यशोदा ने सुख के दिन बिताये हैं, गोपाल का परिचय उनके साथ सिवाय चीख-चिल्लाहट रोने-धोने और उपद्रवों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। पिता के प्रति इसीलिए उसके इस तटस्थ स्नेह की निन्दा करते नहीं बनती। लेकिन कहना यह है, कि मां की तरह ऐसा मोह उसे नहीं था, कि इलाज के अभाव मे, सेवा करने के दर्प मे, उन्हें अस्पताल मे भर्ती न कराया जाय, अथवा भगवान के भरोसे, उनके तुष्ट होने की प्रतीक्षा मे अनन्तकाल तक चुपचाप प्रताड़ना सही जाय। न मां की तरह उसकी ऐसी ही कोई धारणा थी, कि दुख के ये बादल एक दिन छट जायगे और मरे हुए सत्यवान की तरह, अपना सारा पागलपन छोड़कर वे उठ बैठेंगे, और कह देंगे — ओह, कैसी गहरी नींद सोया!

गोपाल ने इतना ही कहा — अच्छा, अब कभी नहीं पूछूगा।

—बाहर धूप निकली हुई है। जा खेल।

भूख होते हुए भी उसने खाना नहीं मागा। खेलने मे मन न होते हुए भी वह बाहर चला गया।

यशोदा ने धोती बदली, मुह धोया, ताकि पति के अत्याचार के निशान कही से दिखाई न दे जाय। फिर पारो के सामने आकर खड़ी हो गयी। गभीर-

स्वर मे बोली — क्यों देरानी, मेरे पीछे पड़ी हो ? दो घण्टे होने आये, और तूं पीसे चली जा रही है। पाव पड़ती हू तेरे, अब तूं भी दुख मत दे। वैसे ही भाग्य काफी दुष्ट है!

इस भारी स्वर का अर्थ पारो की समझ मे नही आया। वह घट्टी फेरती ही रही। जैसे कोई बात बहुत देर से अन्तर मे घुमड़ रही हो, और वह कह नही पा रही हो, लिहाजा प्रयत्न करके उसने किसी तरह कहा— अभी तक 'वे' नही आये जिठानीजी ?

–तो मैं क्या करूं ?

कहने के बाद यशोदा को लगा, कि अनजाने गुस्से मे वह कुछ कड़वी बात कह गयी है। इसलिए उसके पास बैठते हुए बोली — आ जायंगे री। आ जायंगे। अब तूं उठ। जाकर हाथ धो।

–घर में अकेली का जी नही लगता। गोपाल भी तो आज स्कूल से जल्द ही आ गया है। उसे ले जाऊं ?

यशोदा ने अभिमान के स्वर मे कहा— क्यों पारो, आज तक कभी तुमने मुझसे पूछा है गोपाल को ले जाने के लिए, जो आज तुम भी यह कसर पूरी कर रही हो ? देख पारो, इतने साल हो गये तुझे यहा आये। कुछ तो मेरा दुख-दर्द समझा कर। वैसे ही घर मे शनिश्चर की दशा है, सो तो देख ही रही हो। फिर ऐसी बातें कर के क्यों मेरा जी दुखाती हो ?

पारो की समझ मे यह नहीं आया कि उसने ऐसी कौनसी बात कह दी, जिसके कारण जिठानीजी इतनी दुखित हो गयी हैं। अपना बचाव करने के लिहाज से कहा — वे तो खाना भी खा कर नहीं गये।

यशोदा चुप हो गयी। देरानी का मन कहा अटका हुआ है, यह जानकर अपने क्रोध पर वह स्वयं लज्जित हो गयी। एकाएक मन चंचल हो उठा। सोचा — अरे, मेरा न सही, इन सब का मुख तो है! मुझ गरीब के लिए यह पराई आतिशबाजी देखने का सुख ही सही। उसे हंसी आ गयी। देरानी के पास बैठते हुए उसने घट्टी के हत्थे पर हाथ रख कर, जोर लगा कर रोक दिया। पारो विह्वल होकर पूछ बैठी — अब मै क्या करूं ?

–कुछ भी नहीं। एक बात पूछूं, पारो ?

–पूछो।

–तुझे राधामाधव बहुत दुख देता है ?
–बहुत ।
–डांटता रहता है ?
–और क्या ? दिन भर तो बकझक करते रहते हैं ।
–धमकाता भी बहुत है न ?
–यह कोई छिपी हुई बात है ?
–और सेवा भी खूब कराता होगा ?
–समझ लो जिठानीजी, घर में रहते हैं तो अपने हाथ से पानी का गलास तक भर कर नहीं पी सकते ।

यशोदा ने ठंडी सांस ली । यही सारी बातें उसके साथ भी हैं, लेकिन कितना अन्तर है ! पारो लाख शिकायतें करें, लेकिन यशोदा को मालूम है, कि यह सब उसे भला लगता है । किसी भी स्त्री को अच्छा लगता । लेकिन यही सब उसके लिए कितना विषम, कितना दुसह्य, कितने तिरस्कार से भरा हुआ, कितनी प्रवंचना से लदा हुआ है ! इतने बड़े छल को प्रत्यक्ष अनुभव करके भी उसने आंखों में दुबारा पानी नहीं आने दिया । यशोदा ने एक पल के लिए झिझक कर पूछा — और मारता भी है ?

इस प्रश्न का अर्थ पारो नहीं समझ सकी । बोली — यह सब मारने से कम है जिठानीजी ? आज भोजन नहीं बनेगा क्या ?

–बनेगा । बनेगा क्यों नहीं ?

–कब ? ग्यारह बज रहे हैं । धूप कितनी निकल आई है ।

–रसोई तो कब की तैयार है । बस फुलके उतारने बाकी हैं । लो, मैं तो भूल ही गयी, तेरा वह गोपाल बिना खाये पिये ही खेलने चला गया । मैं अभी जाकर उसे बुला लाती हूं । खबरदार, तुम चक्की मत पीसना । कहते हुए यशोदा उठ खड़ी हुई । जाते-जाते कह गयी — और जो राधामाधव आ जायं, तो आंचल में छिपाकर सीधे घर ही ले जाना ।

गली में ढूंढने पर भी गोपाल नहीं मिला । एक लड़के से पूछा तो मालूम हुआ, वह राधामाधव के साथ उनके घर गया है । यशोदा ने वहां जाकर दरवाजा खटखटाया । देवर ने आकर खोल दिया । सामने यशोदा को देखकर निश्चिन्त-सांस लेकर बोले — वाह भौजाई, आपने तो बिलकुल डरा दिया । सोचा, न हो पारो ही आ धमकी ।

–और वह विचारी, वहा तुम्हारी चिन्ता मे सूखी जा रही है।

–कुछ दुवली हुई कि नहीं ? मैने पंचमुखे हनुमानजी को प्रसाद वोल रखा है। वेहद चिन्ता की वात है। समझ लो, सवा रुपया खर्च हो गया।

–और वह गोपाल कहा गया ?

हाथ मे एक पोथी लिये गोपाल हंसता हुआ जाकर उपस्थित हो गया। मा ने कुछ क्रोधित-से स्वर मे कहा—क्यों रे, विना खाना खाये तू वाहर चला आया ?

–तुमने ही तो कहा था, मां।

–तो मैंने खाना मागने से भी मना किया था ?

राधामाधव वीच मे पड़े—अरे रे, बिना खाना खाये घर से वाहर निकल आया ? जा भाई जा, प्रलय आ जायगा। थोडी गलती भौजाई मेरी भी है। मै ही इसे अपने साथ पकड़ लाया था।

यशोदा ने जरा नरम होकर कहा—अच्छी वात है। हो गया, वहुत हो गया। अव घर चल कर दो ग्रास अन्न भी पेट मे डाल लो। क्यों देवरजी, यह देरानी घर खुला छोड़कर ही चली जाती है क्या ?

–नहीं भौजाई, तुम जिसे ढूंढकर इस गले मे लटका गयी हो, वह इतनी भोली नहीं है। ताले की एक चाबी मेरे पास भी है। लिहाजा, उसकी इजाजत के विना भी कभी-कभी घर मे घुसने का मौका मिल ही जाता है। खैर चलो, गाजे-वाजे के साथ गृहलक्ष्मी को मनाकर ले आता हूं। चल गोपाल, चले।

यशोदा पहले घर पहुंची। वाद मे राधामाधव और गोपाल। चिन्तित पारो को इस तरह घट्टी के हत्थे पर माथा टेके देखकर यशोदा ने हंस कर कहा—लो दोनो को ले आई हूं। सभाल कर ले जाना। ध्यान रखना, रास्ते मे कहीं खो न जाय।

राधामाधव ने अत्यन्त नम्रतापूर्वक, नाटकीय ढग से पत्नी से क्षमा-याचना की–माफ कर देना देवी। भूल हो गयी। कान पकड़ता हू, फिर कभी ऐसी कोई गलती नहीं होगी। अव सीधे घर चला आया करूंगा।

पारो लाज के मारे मर-सी गयी।

यशोदा ने कहा—माधवजी, कुछ तो लाज़-शरम रखा करो। तुमसे वडी हू। मेरे सामने यह सब नहीं चल सकेगा। चल गोपाल, खाना ठंडा हो रहा है।

–भौजाई एक बार मेरी भी झूठी सच्ची मनुहार कर ही लो।

–अब उस बिचारी को अधिक दुख मत दो। घर पर वह इतना सारा राध कर आई है सो ?

–उससे किसी तरह की हानि होने वाली नहीं है। फिर दूसरी बात यह है कि इसने अभी तक कुछ बनाया ही नही। ढपोर-शख की कथा सुनी है न, बहुत अधिक देने की चिन्ता वह जरूर किया करता था, लेकिन देता कुछ भी नहीं था।

–आजकल बातें बहुत आ रही हैं तुम लोगो को ? पारो छुट्टी दे दे, तो यहां भी ठाकुरजी का प्रसाद मिल जायगा।

–मैं क्यों मना करने लगी ? मैं तो खुद ही यहा जीमने आई हू। कहते हुए अपनी समझ में पारो ने पति के प्रति सख्त नाराजगी की अपील दायर कर ही दी।

राधामाधव ने पारो के जवाब की प्रतीक्षा नहीं की। रसोई के सामने आसन बिछा कर बैठते हुए बोले – आ जा, गोपाल। बैठ जा। पहले पेट पूजा, पीछे काम दूजा।

यशोदा चली गयी हाथ धोने, मौका देखकर पारो ने पति के पास आकर धीमे, मगर कुछ तिक्त स्वर में चिढाते हुए पूछा – बिना नहाये खाने मे कुछ ज्यादा स्वाद आ जायगा न ?

जैसे सुना ही न हो, राधामाधव ने यशोदा को पुकार कर कहा —भौजाई, जल्दी आ जाओ यहा। यह डाट रही है। रक्षा करो।

यशोदा रसोई में आकर थाली मे खाना परोसती हुई बोली – देखो माधवजी, यहा आपस में लड़ो-झगड़ो मत। घर जाकर जो कुछ मन में हो, निकाल लेना।

–इसे ही कहते हैं एक-तरफा डिगरी। वहा मेरी तो कोई सुनवाई नहीं होगी। खैर, तुम्हें एक बात से सावधान किये देता हू कि इनके गाव की औरतें ऊट की तरह पेट मे खाना जमा करके रखती है।

पारो ने दुखी होकर थाली एक ओर सरका दी। जिठानी से कहा — मै नहीं खाऊगी।

–माधवजी, चुप भी रहो। चलो पारो, अब वह कुछ भी नहीं कहेगा। खा लो।

–वह ख्वामख्वाह नाराज हो रही है भाभी। उसे तो कुछ कह नहीं रहा हूं। कह रहा हूं, तुम्हें, कि आज शनिवार है, चाहो तो उपवास कर लेना। यदि कुछ बच जाय, तो तुम्हारा भाग्य। वरना हम सब मिलकर कोशिश तो यही करेंगे कि आगे से तुम्हें न्योता देने की हिम्मत ही न पड़े।

यशोदा ने सबको थालिया परोस कर दे दी। पारो नाराज ही बैठी रही। जिठानी ने मनुहार की·—पारो, खा ले। इसे ब्याह कर मै लायी हूं। मै हाथ जोड़ कर माफी मागती हूं।

सब जीमने बैठे। रोटी सेकती हुई यशोदा मन–ही–मन सोच रही थी—ऐसा सुख त्रिलोकी मे और कहा मिलेगा? मै भी कैसी पागल· हूं, अपने दुख को ले बैठती हूं तो भूल ही जाती हूं, कि भगवान कितना दयालु है।

राधामाधव से अधिक देर चुपचाप नहीं बैठा गया। एक बात याद आ गयी। बोले—भौजाई, सरकार इस गली मे बिजली ला रही है। हम यदि अपने घर मे लेना चाहे, तो सिर्फ खम्भा गाड़ने का ही खर्चा देना होगा। मैं तो कहता हूं, बिजली जरूर ली जाय। सुना है, घासलेट से जलनेवाली लालटेन की रोशनी मे पढाई करने पर आखे खराब हो जाती हैं। क्या कहती हो?

–अभी नहीं देवर। तुमसे कुछ छिपा हुआ तो है नहीं। किसी तरह गाड़ी चल रही है। नहीं तो, जिसके घर मे तुम्हारे भाई जैसे होकर कोई बैठ जाय, तो भला निर्वाह कैसे हो?

–बात यह है भौजाई, कि मेरे रुपये एक बिजली का सामान बेचनेवाले में निकलते हैं। साल भर हो गया, रोज टालता ही जाता है। मैंने सोचा, रुपये डूबते हों, तो ब्याज न सही, मूल तो मिल जाय। इसलिए मैंने कह दिया कि हमें बिजली का सामान ही दे दो। उसने हा भर ली। अब जो सामान न लूं, तो पैसे डूब ही गये समझो।

–उस घर में भी बिजली लेनी है न?

–सामान भी कोई थोड़ा-सा है? इतना सारा है। दोनों घरों मे बिजली बड़े मजे से लग सकती है।

–लेकिन

–लेकिन, परन्तु सब ठीक। यह तो मै तुम लोगों के लिए कर नहीं रहा हूं। कर रहा हूं गोपाल के लिए। सो तुम मना नहीं कर सकतीं। आज नहीं,

दो दिन बाद सही, बिजली तो लगेगी ही। घर चादनी-सा चमकने लगेगा।'
कहते हुए राधामाधव ने गोपाल का समर्थन पाने के लिए उसकी ओर मुखातिब होकर पूछा — क्यों गोपाल ?

गोपाल का मुह दालभात के बडे-से कौर से भरा हुआ था। इसलिए उससे साफ-साफ तो बोला नहीं गया। फिर भी उसने तुरन्त हा भरते हुए कहा — हा काका! बिजली जरूर लगनी चाहिए—कि बस बटन दबाया और घर भर मे उजाला हो गया।

खाना खाकर मोदी-दम्पत्ति जाने लगे तो यशोदा ने गोपाल से कहा — जाओ गोपाल, काका के यहां चले जाओ। तब तक मैं घर का छोटा-मोटा काम निपटा लेती हू।

गोपाल ने पारो काकी की ओर मुड़कर पूछा — क्यों, चलू काकी ? यह मत समझना, कि मेरा पेट भर गया है। वहा जो कुछ होगा, वह सारा का सारा खा डालूगा। जरा-सा भी नहीं बचेगा।

पारो के मुंह से सहज ही निकल गया — क्यों, अब स्कूल नहीं जाना है क्या ?

राधामाधव हो-हो करके हस पड़े — सुन लिया तुम सबने ? जाने दो गोपाल, देखो तो, वह रोने को हो आई।

इसी समय गोपाल को अचानक स्कूल की एक बात याद आ गयी कहा — स्कूल आज एक बार ही खुलेगी। बड़े मास्टरजी के लड़के की जनेऊ है न ? आज दोपहर को छुट्टी है। खैर, काकी, तुम डरो मत। मै तो माधवकाका को बैठा, किताबें पढकर सुनाऊगा

मास्टरजी के ज्येष्ट-पुत्र के उपनयन सस्कार की बात से यशोदा के मन मे एक मौलिक समस्या कौंध-सी गयी, कि गोपाल का भी उपनयन-सस्कार हो जाना चाहिये। बोली —देवर, अब इस गोपाल की जनेऊ डालने की भी चिन्ता करनी होगी। काफी बड़ा हो गया है।

–ऐसी भी क्या जल्दी है भौजाई ? जनेऊ डाल देने पर तो फिर यह हमारे यहां कुछ खा-पी भी न सकेगा। तब तो शुद्ध ब्राह्मण हो जायगा।

–इस डर के मारे तो जनेऊ रोकी नही जा सकेगी माधवजी। जल्दी का कोई अच्छा-सा मुहूर्त दिखवा लो। बिजली नहीं लगेगी, तो कोई कुछ

कहने नहीं आयेगा, लेकिन विना जनेऊ डाले तो न्यात-गंगा मे रहना हो नहीं सकेगा।

–क्यों गोपाल जानता है तूं, जनेऊ डालने पर क्या करना होता है?

–जानता क्यों नही? कान पर चढा कर—

–धुत। इतना ही थोडे होता है? सुवह-शाम सन्ध्या-पूजा करनी पड़ती है।

–तो क्या हुआ? कर लूंगा।

–आती है तुझे?

–नही आती तो क्या हुआ? आ जायगी। गुरू गायत्री-मंत्र की दीक्षा देंगे कि नहीं?

–और जनेऊ डालने के वाद सुवह-शाम माइतों के चरण छू कर प्रणाम करने पडते हैं। फिर शुद्ध ब्राह्मण होकर मेरे पाव कैसे पड़ेगा? और मेरे चरण न छूए, तो मैं जनेऊ मे नही आने वाला।

–पाव क्यों नहीं पड़ेगा? यशोदा ने कहा – 'काकाजी' कह कर तो सारे जगत के पाव छू सकता है। देवरजी, जीभ का सम्बन्ध पहले होता है, दातों का वाद में।

गोपाल की समझ मे यह वात नही आ सकी, कि जनेऊ डाल दिये जाने पर प्रणाम करने मे ऐसा कौनसा कष्ट और अनर्थ होता है? इसलिए मा की वात को समझे विना ही जोर लगाकर अपने माधवकाका से कह दिया — हा काका!

–अच्छी वात है, भौजाई। अव तुम किसी वात की फिक्र मत करो। सारा इन्तजाम हो जायगा। आज ही मुहूर्त दिखवा लाता हूं। ओ महामाया, चलने के लिए तो आप चटपट तैयार हो गयीं, लेकिन जरा वुद्धि खर्च करके यह भी सोच लो, कि मोदियों के झूठे वर्त्तन भौजाई को माजने पड़ेंगे।

पारो सचमुच अपनी इस भूल पर शर्मिन्दा हो गयी। वर्त्तन उठा कर माजने जाने लगी। यशोदा ने कृत्रिम क्रोधित स्वर मे कहा — देवरजी, ब्राह्मणों को धर्म-कर्म समझाने से पाप लगता है। आज आई है यह वहू। कल तक तुम्हारे झूठे वर्त्तन माजती थी, तव तक तो इतना दर्द नहीं होता था। विना जनेऊ के यह गोपाल भी तो शूद्र है, फिर उसके वर्त्तन माजने से मेरा कुछ घिस जाता होगा?

दो दिन वाद सही, विजली तो लगेगी ही। घर चादनी-सा चमकने लगेगा।' कहते हुए राधामाधव ने गोपाल का समर्थन पाने के लिए उसकी ओर मुखातिब होकर पूछा — क्यों गोपाल ?

गोपाल का मुंह दालभात के वड़े-से कौर से भरा हुआ था। इसलिए उससे साफ-साफ तो वोला नहीं गया। फिर भी उसने तुरन्त हा भरते हुए कहा — हा काका ! विजली जरूर लगनी चाहिए—कि वस वटन दवाया और घर भर में उजाला हो गया।

खाना खाकर मोदी-दम्पत्ति जाने लगे तो यशोदा ने गोपाल से कहा — जाओ गोपाल, काका के यहा चले जाओ। तव तक मैं घर का छोटा-मोटा काम निपटा लेती हू।

गोपाल ने पारो काकी की ओर मुड़कर पूछा — क्यों, चल काकी ? यह मत समझना, कि मेरा पेट भर गया है। वहा जो कुछ होगा, वह सारा का सारा खा डालूगा। जरा-सा भी नहीं वचेगा।

पारो के मुंह से सहज ही निकल गया — क्यों, अव स्कूल नहीं जाना है क्या ?

राधामाधव हो-हो करके हस पड़े — सुन लिया तुम सवने ? जाने दो गोपाल, देखो तो, वह रोने को हो आई।

इसी समय गोपाल को अचानक स्कूल की एक वात याद आ गयी कहा — स्कूल आज एक वार ही खुलेगी। वड़े मास्टरजी के लड़के की जनेऊ है न ? आज दोपहर को छुट्टी है। खैर, काकी, तुम डरो मत। मैं तो माधवकाका को वैठा, कितावें पढ़कर सुनाऊगा

मास्टरजी के ज्येष्ट-पुत्र के उपनयन सस्कार की वात से यशोदा के मन में एक मौलिक समस्या कौंध-सी गयी, कि गोपाल का भी उपनयन-सस्कार हो जाना चाहिये। वोली —देवर, अव इस गोपाल की जनेऊ डालने की भी चिन्ता करनी होगी। काफी वड़ा हो गया है।

–ऐसी भी क्या जल्दी है भौजाई ? जनेऊ डाल देने पर तो फिर यह हमारे यहा कुछ खा-पी भी न सकेगा। तव तो शुद्ध ब्राह्मण हो जायगा।

–इस डर के मारे तो जनेऊ रोकी नहीं जा सकेगी माधवजी। जल्दी का कोई अच्छा-सा मुहूर्त दिखवा लो। विजली नहीं लगेगी, तो कोई कुछ

कहने नहीं आयेगा, लेकिन विना जनेऊ डाले तो न्यात-गंगा मे रहना हो नही सकेगा।

–क्यों गोपाल जानता है तूं, जनेऊ डालने पर क्या करना होता है ?

–जानता क्यों नही ? कान पर चढा कर—

–धुत। इतना ही थोड़े होता है ? सुवह-शाम सन्ध्या-पूजा करनी पड़ती है।

–तो क्या हुआ ? कर लूंगा।

–आती है तुझे ?

–नहीं आती तो क्या हुआ ? आ जायगी। गुरू गायत्री-मंत्र की दीक्षा देंगे कि नही ?

–और जनेऊ डालने के वाद सुवह-शाम माइतों के चरण छू कर प्रणाम करने पड़ते हैं। फिर शुद्ध ब्राह्मण होकर मेरे पाव कैसे पड़ेगा ? और मेरे चरण न छूए, तो मैं जनेऊ मे नही आने वाला।

–पाव क्यो नही पड़ेगा ? यशोदा ने कहा – 'काकाजी' कह कर तो सारे जगत के पाव छू सकता है। देवरजी, जीभ का सम्वन्ध पहले होता है, दातो का वाद मे।

गोपाल की समझ मे यह वात नही आ सकी, कि जनेऊ डाल दिये जाने पर प्रणाम करने में ऐसा कौनसा कष्ट और अनर्थ होता है ? इसलिए मा की वात को समझे विना ही जोर लगाकर अपने माधवकाका से कह दिया—हां काका !

–अच्छी वात है, भौजाई। अव तुम किसी वात की फिक्र मत करो। सारा इन्तजाम हो जायगा। आज ही मुहूर्त दिखवा लाता हूं। ओ महामाया, चलने के लिए तो आप चटपट तैयार हो गयीं, लेकिन जरा वुद्धि खर्च करके यह भी सोच लो, कि मोदियो के झूठे वर्त्तन भौजाई को माजने पड़ेगे।

पारो सचमुच अपनी इस भूल पर शर्मिन्दा हो गयी। वर्त्तन उठा कर माजने जाने लगी। यशोदा ने कृत्रिम क्रोधित स्वर मे कहा — देवरजी, ब्राह्मणों को धर्म-कर्म समझाने से पाप लगता है। आज आई है यह वहू। कल तक तुम्हारे झूठे वर्त्तन माजती थी, तव तक तो इतना दर्द नहीं होता था। विना जनेऊ के यह गोपाल भी तो शूद्र है, फिर उसके वर्त्तन माजने से मेरा कुछ घिस जाता होगा ?

–बात तो भौजाई, तुम ठीक ही कहती हो। धर्म–कर्म की बात मुझे क्या मालूम? लेकिन सवाल सिर्फ यही रह जाता है कि गोपाल की बहू होती तो शायद तुम्हारी कुछ मदद हो जाती। लेकिन इस राधामाधव की बहू को ले लो, या मिट्टी की गबर। दीखने मे खूब खूबसूरत। लेकिन काम करते वक्त गबरजा की तरह दोनो हाथ ऊपर ऊठाये हुए!

राधामाधव की इस अप्रत्यक्ष तारीफ से पारो नाराज नहीं हुई। उनकी ओर देख कर हस पड़ी। वर्त्तन उठा कर माजने बैठ गयी। यशोदा मना करती रही, लेकिन उसने ध्यान नहीं दिया। आखिर यशोदा को यही कहना पड़ा — भगवान करे, तुम्हारे सात तो हों लड़के, और एक हो लड़की। तब तुम्हे मारी बातें समझ मे आएंगी।

दोनों परिवारो की एकसूत्रता का स्पष्टीकरण अब आवश्यक नहीं है। फिर भी यह बात छिपी हुई नहीं है, कि जात–पात का अलगाव बड़ी बारीकी से आज भी एक सीमा बनाये हुए है। इस मामले मे हिसाब–किताब काफी चुस्त है साथ ही इसके खिलाफ किसी को कोई खास शिकायत भी नही। इसके कारण किसी के मन में जरा–सा भी कलुष नहीं। पीढियों से चले आ रहे इस विधान ने अपनी जड़ें इतनी गहरी जमा ली हैं कि किसी को इन बन्धनो को तोड़ने की आवश्यकता ही महसूस नहीं होती।

यशोदा वर्तन माजने, पारो के साथ ही बैठ गयी। बोली – पारो, तुझसे तो ये सारे वर्त्तन दिन भर मे भी खत्म नहीं होंगे। फिर राधामाधव की ओर मुखातिब होकर पूछा –दवा ले आये देवरजी?

–ले तो आया हू। घर पड़ी है। गोपाल के हाथ भेज दूगा। टाइम से देती रहना। चोट्टे की ओर भी गया था। वहा से दूकानों का किराया ले आया हू। अच्छा भौजाई, चालीस रुपये मे घर–गृहस्थी चलाने की विद्या तुम अपनी इस देरानी को नहीं सिखा सकतीं? खैर। अब एक बात और बता दो, गोपाल की जनेऊ के लिए कौनसा गहना बेचने जाना होगा?

यशोदा ने एक बार देवर की ओर सिर उठा कर देखा। फिर चुपचाप अपने काम में व्यस्त हो गयी। राधामाधव अपनी बात का जवाब न पाकर कहते रहे —जनेऊ पहनने से ही ब्राह्मण हुआ जा सकता, भौजाई, तो मैं भी

अपना कर्म-धर्म त्याग कर ब्राह्मण हो जाता, और जन्म लेना किसी के वस की बात होती, तो तुम्हारी कोख मे ही जन्म लेता।

यशोदा ने इस असम्भव बात का कोई जवाब नही दिया।

राधामाधव खडे-खडे थक गये थे। इसलिए आगन की चौकी पर बैठते हुए बोले — एक बात कहू भौजाई?

–कहिये?

–दूकानो का किराया बीस रुपया बहुत कम है।

–कम कैसे है? बीस-बीस तो है।

–लेकिन आजकल कितनी महंगाई है। किसी दूसरे को दें, तो लोग चालीस रुपये एक-एक दूकान के देने को तैयार हैं।

–होंगे। लेकिन वह बिचारा साग-सब्जी वाला हणूतमल इतने बरसो से दूकान लेकर बैठा है। उसके पेट पर लात कैसे मारे? दूसरा है धोबी। भगवान की दया से इतने सारे तो उसके बाल-बच्चे हैं। पता नहीं, कैसे घर-खर्च चलता होगा। एक कमाऊ है, सात खाऊ। अपने लोभ के लिए किसी के पेट का अन्न नहीं छीना जा सकता। जाने दो। इस लोभ का कोई अन्त नहीं। चालीस क्यों, पचास क्यो नही, पचास क्यो, सौ क्यों नहीं!

–अच्छी बात है। हम तो पराई चिन्ता मे ही मरते रहेगे। लेकिन साथ ही यह भी बता दो कि रुपये फिर जमा कैसे होंगे? बिना पैसे के तो जनेऊ डाली नही जा सकती।

–चाहे जैसे हो। जनेऊ तो डालनी ही होगी। पैसो का भी जुगाड किसी न किसी तरह हो ही जायगा।

–जानता हूं कैसे होगा? इसी तरह एक दिन भूखों मर कर प्राण त्याग देना और बाकी के लोगों का खाना-पीना हराम कर देना!

घर की दारुण दरिद्रता गोपाल से छिपी हुई नहीं है। अभाव के इस वातावरण मे, कतर-ब्योत के इस व्यापार मे, माधव-काका का ऐश्वर्य और वैभव उसे सदैव प्रलोभनीय ही लगा है। लेकिन साथ ही उसे यह भी मालूम है कि उसकी इस प्रवृत्ति की जरा-सी आहट भी मा को लग गयी, तो उसके दुख की सीमा नही रहेगी।

पारो बर्तन माज-पोंछ चुकी थी। गोपाल ने माधवकाका का हाथ पकड कर उठाते हुए कहा — चलो काका, चलें।

–अच्छा चलता हू भौजाई। गोपाल के हाथ दवा भिजवाये देता हू। इस समय तो भईजी बिलकुल शात दिखाई देते हैं।

–शायद सो गये हों। उन्हे भी खाना खिला आती हू।' कह कर पति के लिए दूसरी थाली परोसने मे यशोदा व्यस्त हो गयी।

राधामाधव गोपाल का हाथ पकड कर — 'चल भइया चलें।' कहते हुए रवाना हो गये। पारो भी उनके पीछे चली गयी।

चार :

गृह-प्रवेश करते ही मालकिन ने पूछा – बिना नहाये ही खा लिया न ?

इस दुर्घटना का पूरा आनन्द लेने के लिहाज से राधामाधव जोर से हसते हुए कहने लगे – लो सेठानीजी, मैं तो हो गया छोटे बाप का बेटा। अब मुझसे दूर बैठ कर अपनी खिचड़ी अलग पकाया करना। मुझे छूना भी नहीं।

–मुझे छूना ही नहीं।' दुहराते हुए गृहस्वामिनी ने कुछ ऐसा मुह बनाया कि गोपाल हसते-हसते लोट-पोट हो गया। पारो ने कहा – यह जरा-सा गोपाल तक तो सब कुछ जानता है। पूछो इससे, बिना नहाये इसने कभी मुह में एक दाना भी रखा है ?

–लेकिन महामाया, मैं तो ब्राह्मण नहीं हूं।

–अच्छा ही है, कि नहीं हो। नहीं तो धर्म रसातल में चला जाता।

–चलो, अपना गोपाल तो धरम धारण किये हुए है ही। जान बची। इसी के प्रताप से सूर्य उदित हो जायगा, चन्द्रमा अस्त हो जायगा। इस गरीब के करने धरने से तो कुछ होने से रहा। फिर दुनिया भर का दर्द अपने जिम्मे कौन ले ?

हंसी बन्द करके गोपाल ने राधामाधव से कहा .- एक बात कहूं काका ?

-कुछ काम-धाम करो भगवती, दिन भर पति-निन्दा की, तो अगले जनम मे कुंवारी रह जाओगी। कोई मिलेगा नहीं। हर बार मैं ही भोलेपन मे थोड़े ही फंस जाऊंगा ? हा, क्या कहा गोपाल तूंने ?

-काकी के सामने नहीं।

-हा बेटा, काकी के सामने नहीं। डर भी एक छूत की बीमारी है। मैं ही जब इसकी आवाज सुनकर कापने लगता हूं, तो तुम थोड़े ही बच सकते हो। आओ ऊपर चलें।

पारो ने टोकते हुए कहा — देखोजी, यह पराई अमानत है। इसे साधु-सन्यासियों के किस्से मत सुनाया करो। कभी कहीं कुछ हो गया तो मुंह दिखाने लायक नहीं रह जायंगे।

-नहीं देवीजी। मेरा गोपाल सन्यासी होगा ही नहीं। अगर हुआ भी, तो ऐसा-वैसा नहीं होगा। वह होगा पूरा करपात्री महाराज। जिनका पुण्य-प्रताप कभी क्षीण नहीं होता। सब कुछ हाथ पसार कर ले लेते हैं—और हजम। उनका हाथ है कि जिसकी महिमा अक्षय है। कभी खाली ही नहीं रहता। रखनेवालों ने क्या नाम रखा है ? करपात्री ! सेठाणी, तुमने कभी किसी का नाम सुना है ऐसा, जिसमे पात्र तक की मीमासा हो गयी हो। सुना है, वे हमारे औघड़-बाबा के गुरु-भाई हैं। बेटा, जनेऊ ले लो, तो काशीजी जाकर उनसे ही शिक्षा लेना।

-हाथ जोड़ती हूं बाबा, इस बच्चे के सामने ऐसी बातें मत किया करो।

-चल भई, गोपाल चल। तेरी इस काकी से शास्त्रार्थ करने मे तो दिग-दिगन्त की धूल खाया हुआ यह राधामाधव भी जीत नहीं सकता। पढ़-लिख ले, तो इसे बहस मे जरूर हराना। इसके साथ ही मै भी तेरा चेला हो जाऊंगा। मडन-मिश्र की कथा सुनी है न ?

ऊपर जा रहे काका-भतीजे का कोई क्रियात्मक विरोध तो पारो ने नहीं किया। लेकिन उसके फीके पड़े चेहरे से मालूम होता था कि इस गोरखधन्धे से वह बहुत अधिक सतुष्ट नहीं है।

राधामाधव तकिये का सहारा लेकर आराम से विराजमान हो गये। गोपाल पास ही बैठ गया। थोड़ी देर तक तो वह कमरे मे सजी हुई राजा रवि वर्मा की

अनेक पौराणिक तस्वीरों को देखता रहा। राधामाधव ने टागे फैला कर आराम से लेटते हुए, पेट पर हाथ फेरते हुए कहा —हा गोपाल बोल, क्या कह रहा था ?

गोपाल माधवकाका के समीप खिसक आया। धीरे से उसने पूछा —काका, आपासा कभी ठीक नहीं होंगे क्या ?

इसी बात को कहने के लिए गोपाल एकान्त ढूंढ रहा था ? उसके मन के अन्तराल मे यही गुप्त दुख आज तक इतना विकराल रूप धारण किये बैठा था, जिसे कि सबके सामने बताया तक नहीं जा सकता, यह जानकर राधामाधव एकबारगी अस्थिर-से हो उठे। राधामाधव के सामने लज्जा-निवारण का प्रश्न नहीं उठता, इसीलिए गोपाल ने अत्यन्त विश्वसनीय रूप से यह बात पूछी थी। इस समस्या से इस छोटे से बालक का मस्तिष्क इस तरह से पीड़ित है, यह जानकर, सान्त्वना देने के लिहाज से ही उन्होंने कहा — होंगे क्यों नहीं, जरूर होंगे। तू किसी बात की फिकर मत किया कर।

–कब ठीक होंगे, माधवकाका ?

–अरे, जल्दी ही ठीक हो जायगे। कल ही तो मै राज-ज्योतिषी नरोत्तम जी से मिला था। भईजी की जनमपत्री देखकर उन्होंने कह दिया, कि एकाध महीने मे ही सकट-निवारण हो जायगा।

–तब तक मैं स्कूल नहीं जाऊगा, माधवकाका। लोग मुझे चिढाते है। कहते है, पागल का बेटा—पागल।

–कौन कहता है, नाम बता उसका ?

–सभी कहते हैं। हेड-मास्टरजी भी कहते हैं।

–कल ही उन्हें ठीक कर दूगा। तू फालतू की चिन्ता मत किया कर।

–अच्छा माधवकाका, आपासा पागल क्यों हो गये ?

–भाग्य की बात है बेटा, नहीं तो ऐसे देवता आदमी को पागल नहीं होना पड़ता।

–माधवकाका, आपासा का ही भाग्य इतना बुरा क्यों है ?

–पिछले जनम में भूल से कोई पाप हो जाता है न, उसका दंड इस जनम में भोगना पड़ता है।

–तब तो मैने भी कोई पाप ही किया होगा माधवकाका, नहीं तो मै पागल का बेटा थोड़े ही होता ?

–छि ऐसी बात नहीं कहते, गोपाल ।

–नहीं माधवकाका, मुझे डर लगता है—जैसे एक दिन मैं भी पागल हो जाऊंगा ।

–गोपाल यह बात मेरे सामने तो कही सो कही, लेकिन और किसी के सामने मत कहना । भौजाई ने सुन लिया तो वह प्राण ही त्याग देगी ।

–नहीं । मैं कभी किसी से नहीं कहूंगा । अच्छा, माधवकाका, पागलों के लिए कोई अस्पताल भी तो होता है न ? वहा उनका इलाज क्यों नहीं करवा देते ? घर में इस तरह बाध कर रखने से तो वे कभी भी ठीक नहीं होंगे । उन्हें इस तरह देख कर मुझे बहुत दुख होता है ।

–दुख तो गोपाल, सबको ही होता है । लेकिन अस्पताल ले जाने से ही तो सब कुछ ठीक नहीं हो जाता । देखता तो हूं ही, जो भी एक बार अस्पताल चला जाता है, कभी लौट कर वापस नहीं आता । फिर वहा इलाज करवाने पर पैसा भी तो बहुत-सारा खर्च होता है ।

–पैसे की तो आपके पास कोई कमी नहीं, माधवकाका । आप आपासा का इलाज जरूर करवा दें ।

–लेकिन यह पैसा किसी काम का नहीं गोपाल । भौजाई उसे छूएगी तक नही ।

–क्यों नहीं छूएगी ?

–इसलिए कि कोई यह न कह दे कि. खैर इन सारी बातों को तूं समझेगा नहीं । जाने दे । किसी दिन बड़ा होने पर तू समझेगा, कि पैसा होने पर भी हर किसी को दिया नहीं जा सकता ।

–मुझे सारी बात समझाओ न, मैं सब समझता हूं ।

–क्या कहू गोपाल, मैं समझा नही पाता । नही तो भौजाई को समझा कर, हाथ पाव जोड़कर जरूर समझा देता । फिर पैसा खर्च कर देने से ही तो इलाज नही हो जाता । नही तो मैं उनकी एक भी न सुनता । लेकिन भाग्य के आगे तो किसी का जोर चलता नहीं । इसलिए मैंने जगदीश्वर के हाथों सब कुछ सौंप दिया । सोचता हूं, सुख के दिनों के तो बहुत से दोस्त-मित्र थे । अब दुख के इन दिनों में हम ही दो चार बच रहे हैं । ठीक है । जितना निभ सके, निभा दे ।

कोई अचिन्त्य घटना उपस्थित न कर दे। सचमुच पारो मन-ही-मन डरती रही है, कि इस वैरागी पति को आचल मे वांधे रखना सहज सरल कार्य नहीं है। उसकी सहेलियों ने, उसके परिवारवालों ने, गुप्त और प्रकट रूप से उसे अनेक वार, अनेक प्रकार से समझाया है, कि उन्हे तुष्ट रखना। कभी भूल कर भी नाराज मत करना। अन्यथा अगम अन्धकार के अतिरिक्त कुछ भी शेप नहीं रह जायगा।

अनमने मन से ताश के पत्तों को समेटते हुए, वह चुपचाप गोपाल, यशोदा और पति को घर से वाहर निकलते देखती रही। एक वार भी उसकी इच्छा नहीं हुई कि वह भी वहा जाने के लिए उठे, अथवा जाकर दरवाजा वन्द कर दे।

भीखमचंदजी शान्त और निश्चल पड़े थे। राधामाधव उनके घुटनों के पास वैठकर वोले — भईजी, तवीयत कैसी है ?

भीखमचदजी प्रत्युत्तर मे उनकी ओर टुकर-टुकर देखते रहे। प्रवल प्रलापी भीखमचदजी का इस तरह चुप रहना कोई भयकर सकेत तो नहीं है, इस वात की कल्पना करके ही यशोदा का कलेजा मुह को आ गया।

अस्थिर मस्तिष्क के इस पागल व्यक्ति के ठीक होने की कोई सभावना नहीं, और इस व्यर्थ मास-पिंड को सजोये रखने मे दुखों की सीमा नहीं है, यह जानते हुए भी यशोदा पति की अवश्यम्भावी मृत्यु के डर से काप-सी उठती है। एक दिन यही होगा, यह निश्चित वात है। लेकिन वह दिन इस यशोदा की मृत्यु से पहले न आये, यह उसने हाथ जोड़ कर अनेक वार प्रभु से प्रार्थना की है। आन्तरिक मन से उसने चाहा है,—हे जगदीश्वर, इन्हे अपनी शरण मे ले लो। इनका दुख मुझसे देखा नहीं जाता, लेकिन इससे पहले मुझे उठा लो।

एक ही प्रश्न कांटे की तरह सिर उठा कर हमेशा दर्द को घनीभूत कर देता कि मां-वाप की मृत्यु के पश्चात अनाथ गोपाल का क्या होगा ? इस नन्हीं-सी जान के लिए अभी तक उसने किया ही क्या है ? तव उसकी प्रार्थना के स्वर वदल जाते और आचल फैला कर वह सर्वात्मा से भीख मागती — हे परमपिता ! जैसा भी श्राप तूने दे दिया है, उसे सहने की शक्ति दे। वे वने रहें। गोपाल कुछ वड़ा हो जाय, होशियार हो जाय, तव

लेकिन, हे सृष्टिपालक, तू इतनी बड़ी दुनिया का पालन करता है, इस एक पागल आदमी पर कृपा नहीं कर सकता?

अपनी इस अन्तिम प्रार्थना पर उसे कभी भरोसा नहीं हुआ।

दरवाजे के पास खड़ी यशोदा चिन्तित और व्याकुल दृष्टि से पति की ओर देख रही थी, जो निर्जीव-से पड़े अपने बाल्यसखा की आतुर वाणी में प्रस्तुत अनेक प्रश्नों में से किसी का भी जवाब नहीं दे रहे थे।

राधामाधव ने उठकर भौजाई से कहा—वैद्यजी को बुला लाता हूं। मेरी तो समझ में कुछ भी नहीं आता।

राधामाधव के चले जाने के बाद यदि कहीं कुछ हो गया, तो वह अकेली औरत-जात क्या करेगी? इसकी कल्पना करके ही वह डर गयी। लेकिन उसने अपना भय व्यक्त नहीं किया। किसी तरह भराए हुए स्वर में इतना ही कह सकी—अच्छा!

'अच्छा' इसके अतिरिक्त अभिव्यक्ति के लिए और कोई शब्द भी तो नहीं है। इस एक शब्द में सारे घटित और अघटित को स्वीकार करने की जो लाचारी है, उसे और किस शब्द द्वारा प्रस्तुत किया जाय?

गोपाल डरा-सहमा-सा मा के पास ही खड़ा था। मा ने उसे छाती से लगा लिया। सारे घर में निस्तब्धता छा गयी। कहीं किसी तरह की कोई आहट नहीं। दोपहर के समय चिड़ियों और कबूतरों का जो शोर नित्य सुनाई देता है, आज वह भी खामोश है। जैसे एक विस्तृत दुखद इतिहास को विराम मिलने वाला हो। जैसे आज तक के सारे विरुद्ध प्रयत्न व्यर्थ हो गये हों, और विधाता के विधान के अनुसार सब कुछ घटित हो जाने वाला हो।

यशोदा ने भराए कंठ से गोपाल से कहा—नीचे से पानी का लोटा ले आ। मंदिर में तुलसी है। ले आ।

गोपाल आज्ञानुसार सामग्री ले आया। दिल पर पत्थर रख कर, पति के मुंह में उसने तुलसी-दल रख दिया। अंगुली डाल कर मुंह खोला, पानी का एक घूंट डाल कर, नीचे झुककर, भीखमचंदजी के कान में मंत्र पढ़ा—हरि ओम तत्सत्।

कहीं से कोई जवाब नहीं लौटा। यशोदा कान के पास [illegible] जपती रही—हरि ओम् तत्सत्!

इस ससार की महायात्रा की परिसमाप्ति के बाद, चले जाने वाले इस अभागे आदमी को मृत्यु के बाद मुक्ति मिल जाय, सिर्फ इसी कामना से यशोदा अपने दुख की रुलाई को किसी तरह रोके, प्रभु शरण का मत्र पढती रही।

उसे आज सारी बातें एक-एक करके याद आने लगीं। पति-सहवास के तमाम सुख याद आये। तमाम कष्ट याद आये। सोचा, आज तक इस व्यक्ति ने ससार में रह कर क्या पाया? सिवाय दुख के? अन्तकाल में भी अपनी कोई इच्छा ठीक से व्यक्त करने का उसके पास कोई साधन नहीं रहा। खुद केन्द्रीभूत दुख का विपुल भार सहता हुआ यह व्यक्ति, जो आज अपनी पुरानी प्रवृत्ति के अनुसार खामोश, निश्चल पड़ा है, उसे बहुत वर्षों तसल्ली देता रहा है। लेकिन आज वह भी उसे अकेली छोड़कर चला जा रहा है।

मत्र की बात याद नहीं रही। इस बार उसकी रुलाई बहुत रोकने पर भी नहीं रुकी। पति की छाती पर मुह रख कर वह रोती रही।

गोपाल पास ही खड़ा था। पिता की मृत्यु की सभावना उससे छिपी हुई नहीं थी। लेकिन वह चकित-भ्रमित-सा इस दुखद नाटक की अन्तिम यवनिका-पतन की प्रतीक्षा कर रहा था। दुख उसे नहीं हो रहा हो, ऐसी बात नहीं। दुख उसे हो रहा था। इसलिए, कि मा अब कितनी निर्बल और असहाय हो जायगी। दुख हो रहा था इसलिए भी, कि उसकी वह धुधली आशा भी क्षीण हो गयी कि किसी दिन वे भले आदमी बन कर पिता की तरह उसके सर पर प्यार से हाथ फेर सकेंगे। डरा-हुआ गोपाल पिता के चरणों के पास बैठ गया। एक बार भी उसने मां को रोने से मना नहीं किया। अचानक उसे महसूस हुआ कि उसकी खामोशी के कारण ही पिता उसके देखते-देखते इस ससार को छोड़कर चले जा रहे हैं।

वह जोर से चिल्लाया — आपासा, ओ आपासा!

भीखमचदजी ने एक बार आखें घुमा कर गोपाल की ओर देखा।

इसी समय राधामाधव वैद्यजी को लेकर उपस्थित हो गये। वैद्यजी ने नाड़ी देखी। गणित के हिसाब से जो भी परिणाम निकला हो, उससे वे थोड़ी देर के लिए चिन्तित-से हो उठे। इसके बाद अपने थैले में से दवा की एक पुड़िया निकाल कर पानी के साथ रोगी के मुह में डाल दी। थोड़ी देर तक पास ही बैठे

रहे। इसके बाद उन्होंने फिर नाडी की गति देखी। सन्तुष्ट भाव से राधामाधव की ओर देखकर बोले — अब चिन्ता की कोई बात नहीं। सब ठीक हो जायगा।

लेकिन यह आश्वासन कितना अल्पकालीन है, यह वहा उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति अच्छी तरह से जानता था।

पांच :

सुख की सार्वजनिक अभिव्यक्ति के लिए होली से बढकर कोई त्योहार नहीं। दुख का बाहुपाश चाहे जितना कठोर हो, लेकिन आन्तरिक क्षुद्र सुख का मोह ही सम्भवत वह आधारशिला है, जिससे कि, दुखो का भार सहन करता हुआ आदमी का आया, जाने कितने बरसो से अपना अस्तित्व सजोये चला आ रहा है।

कहते हैं, हरिण्यकश्यपु को अपने पुत्र का क्षुद्र सुख इसलिए सहन नहीं हुआ कि दोनो के मार्ग विभिन्न थे। लिहाजा, जिस किसी उपाय से उसके क्षणिक सुख की प्रवंचना भग की जा सके, वे सब हथियार प्रह्लाद के लिए इस्तेमाल किये गये। मनुष्य-मनुष्य के आन्तरिक प्रभेद का यह इतिहास आदि काल से आज तक चला आ रहा है। प्रचलित कथा का अन्त इस प्रकार बताया जाता है, कि भगवान ने अपना वरदहस्त प्रह्लाद पर रखकर अभयदान देते हुए तमाम दुखों को निस्सार साबित कर दिया। दंड देने के लिए प्रयुक्त प्रत्येक साधन की गरिमा उस दिन नष्टभ्रष्ट हो गयी। परिणाम स्वरूप नवागत प्रह्लाद तो कायम रह गया, लेकिन वृद्ध हरिण्यकश्यपु की अपने आप को अमर और सर्वजयी समझने की भावना का अन्त मृत्यु द्वारा सम्पादित हो गया।

गोपाल घर मे छाए हुए दुखो की विषम परिस्थितियो से प्रभावित नहीं होता हो, ऐसी तो कोई बात नहीं। लेकिन होली के चटकदार रग, और हसी-

खुशी मे लोगो के साथ सम्मिलित होकर, वह कुछ देर के लिए अपने आपको भूलने की कोशिश करे, तो सृष्टिनियन्ता द्वारा बनाये गये मनुष्य के मस्तिष्क की चेतना ही प्रमाणित होगी।

चूंकि होली-पक्ष प्रारम्भ हो चुका है, और बच्चों की मजबूरी है, कि वे हर समय अपनी रगभरी बाल्टी और पिचकारी नहीं ढो सकते, तथा न ही घरवाले इतना रग खर्च करने की सुविधा ही देते है, लिहाजा मध्यम-मार्ग यह अविष्कृत हुआ कि—शीशियों मे रग घोले, आते-जाते राहगीरों पर रग छिड़क कर, उनके चिढने और रग के प्रत्यक्ष प्रभाव को देखने से बढकर सुख ससार में दुर्लभ है। कोई बूढा-बुजुर्ग नाराज होकर बच्चों के पीछे भागता, तो सबके सब आत्मरक्षा के लिए छिप जाते, और जब सकुशल सब वापस मिलते, तो उन्हे ऐसा बोध होता, मानों स्वर्ग का इन्द्रासन हाथ लग गया हो। अपनी विजय का इतिहास बयान करते-करते प्रत्येक लड़का बताता, वह किस तरह, कहा से पैंतरा बदल कर भाग खड़ा हुआ था। किस तरह किसी को जरा-सा आभास तक नहीं हुआ। मिंया किस तरह खिसिया कर रह गये। वीरता की इन प्रशस्तियो का वर्णन समाप्त होते-न-होते किसी दूसरे व्यक्ति के गली से गुजरने की सभावना दिखाई देती, और जिसमे सबसे ज्यादा हिम्मत होती, वह दौड़कर उसकी पीठ पर शीशी का रंग छिड़क कर प्राण बचाने के लिए बिना पीछे की ओर देखे, दम तोड़ कर भागता। यदि कोई समझदार आदमी होता, तो हस कर रह जाता, और इससे दल के शेष सिपाहियों को स्फूर्ति मिल जाती। फिर रग छिड़कने मे कहीं कोई कसर रह गयी होती, तो सारे मिल कर उसे पूरी कर डालते। इस तरह के आक्रमणों का कभी-कभी यह नतीजा भी होता, कि कोई उदार व्यक्ति इन बच्चों को रग लाने के लिए एकाध आना दे देता। उस जरा-सी धन राशि से बालकों का जो आनन्द वह खरीद लेता, दान देने की वैसी तृप्ति सम्भवत बड़े से बड़े दानी को भी प्राप्त नहीं होती होगी।

गोपाल गली के बालकों के दल के साथ इस उपद्रव में इस तरह मग्न है, मानों, न उसे बीते हुए कल का कोई दुख है, न आनेवाले भविष्य के प्रति ही कोई चिन्ता। गली में आये हुए लोगों पर रग छिड़क-छिड़का कर, जब वे सब सतुष्ट हो गये, तो सब मिल कर नाते-रिश्तेदारों के यहा मिठाई खाने और पापड़ लाने के लिए चले गये। राजस्थान में आज के दिन वर्ण, जाति, वर्ग के सारे

भेद समाप्त हो जाते हैं। आज के दिन जो स्वतंत्रता स्त्री-पुरुष, बालक-बालिकाओं को सहज ही हासिल हो जाती है, उस आदिम स्वतंत्रता और निश्छलता को प्राप्त करने में मनुष्य को या तो बहुत पीछे लौट आना होगा, या एक लम्बे अर्से तक इन्तजार करना होगा। अस्तु।

आज के शुभ अवसर पर, चाहे वह अमीर हो, चाहे गरीब—पापड़ और मिठाइयां सजोकर रखी गयी हैं। बच्चे आयंगे तो उनके हाथ में कुछ न कुछ तो देना ही होगा। मिठाई तुरन्त खा जाने के लिए; और पापड़ रात को होली के दहकते अंगारों में सेकने के लिए। आज किसी को रोग-सन्ताप, अजीर्ण, वात-पित्त की कोई शिकायत नहीं। जितनी बार भी सम्भव हो, मुंह में कुछ न कुछ रख ही लिया जाता है।

जहां भी ये बालकवृन्द पहुंच जाते हैं, उनके स्वागत में मिठाइयां बांटी जाती हैं। उनके तसले में रख दिया जाता है एक पापड़। यदि कोई अर्थ-शास्त्री चिन्तित होकर इस अपव्यय का हिसाब लगाने बैठे, तो उसे सहज ही मालूम हो जायगा, कि घर से जितनी मिठाई खर्च हुई है, अथवा पापड़ गये हैं, उतने ही घर के बच्चों द्वारा वापस एकत्रित भी हो गये हैं। लेकिन जहां बच्चों का अभाव है, वहां अवश्य यह घाटे का सौदा है। मगर नृतृत्वशास्त्र के वेत्ता और मनोविज्ञान के पंडित इस बात का समर्थन अवश्य कर देंगे, कि बिना बच्चों के घरवालों को इन सब के लिए मिठाइयां और पापड़ लुटाने में कितना सुख मिलता है।

• •

गोपाल की ही क्लास में पढ़ता है हीरालाल। हम-उम्र ही होगा। अनेक आन्दोलनों और कानून की सहस्रों धाराओं को भेद कर उसका विवाह हो चुका है। बहू छम-छम करती हुई घर आ गयी है। स्वाभाविक रूप से साथियों में हीरालाल अपने आप को अधिक गंभीर और बुजुर्ग समझता है। उसके सहपाठियों में अपनी भावज को देखने की असीम जिज्ञासा है। साथ ही कानूनन मिठाई प्राप्त करने का सशक्त दावा भी। सो गोपाल जब अपने दल-बल सहित हीरालाल के घर पहुंचा, तो आशा के विपरीत वहां उन्हें कोई नहीं मिला। दरवाजा अलबत्ता खुला था।

रसोई के पास घूंघट निकाले एक दस-ग्यारह वर्षीय बाल-वधु बैठी हुई थी। सीमाहीन जिज्ञासा के अनेक प्रश्न गोपाल के मन में उठे। लेकिन इस नूतन

भाभी से बातचीत कैसे आरम्भ की जाय, यह उसकी समझ मे नहीं आया। तभी एक साथी ने उस ओर इशारा करके अपनी समझ मे समस्या की मीमासा प्रस्तुत कर दी — गोपाल, यह रही हीरालाल की वहू।

गोपाल ने जेब मे से गुलाल निकाली। उस बालिका भाभी को सम्बोधित करके कहा — बिना गुलाल लगाये, हम यहा से नहीं जायगे भौजाई!

बालिका ने घूघट और गहरा कर लिया। घुटनों मे मुह छिपाकर बैठ गयी।

गोपाल ने पास आकर कहा — अच्छा भौजाई, अपने हाथ से ही लगा लो। सुगन कर लो। फिर हम सब चले जायगे।

बालिका गोपाल की बातों मे आ गयी। उसने हाथ बढाकर गुलाल ले लेनी चाही। गोपाल को मौका मिल गया। घूघट मे हाथ डालकर उसे अच्छी तरह से रग पोत दिया गया। हसते हुए सबने मिठाई की माग की। लेकिन कोई प्रत्युत्तर नहीं मिला। वह बिचारी अपनी दुर्दशा पर ही चिन्तित बैठी रही। सारे बच्चे पालथीमार कर आगन मे बैठ गये। एक-स्वर से सबने फरमाइश की — मिठाई लाओ भौजाई। वर्ना हम जायगे ही नहीं। यहीं बैठे रहेंगे।

बालकवृन्द के इस सत्याग्रह का समाधान हीरालाल की मा के आ जाने पर हो गया। बालकों को देखकर तो शायद वह अप्रसन्न नहीं हुई हो। लेकिन वहू को कठोर आदेश जरूर मिल गया — वहू, यहा बैठी क्या कर रही हो? अन्दर क्यों नहीं चली जाती?

वहू ने सास की आज्ञा का पालन किया। उठकर चली गयी।

गोपाल ने पूछा — बड़ी-मां, मै तो हीरालाल से छोटा हू, लेकिन भौजाई तो मुझसे बोलती ही नहीं।

–तेरी बहू आ जाय, तो उसे सबके सामने मुह खोलना सिखा देना।

–मेरी वहू जब आयेगी, बड़ी-मां, तो देख लेना, इस तरह छिपा कर नहीं रखूगा।

–ओय मा! बहू का नाम लेकर बोलता है! लाज-शर्म सब घोल कर पी गया!

–शादी तो मेरी ही होगी न? फिर शर्म काहे की?' कह कर अपने इस दर्पपूर्ण सवाद का प्रभाव देखने के लिए साथियों की ओर मुह करके गोपाल हस पड़ा।

वड़ी-मा रसोई मे से मिठाई का वर्तन निकालते हुए वोली — तुम सव स्कूल जाकर यही सव सीखते हो क्या ?

-और भी वहुत कुछ सीखते हैं वड़ी-मा यह भी सीख लेते हैं।

-वडा जस कमाते हो, बेटा। खूव जस कमाते हो। हजार वरस उमर हो तुम्हारी। पर हमे अव ऐसे दिन अधिक मत दिखाना। लो, यह रही मिठाई। खा लो।

इस तत्वसार का प्रत्युत्तर किसी वालक ने नही दिया। मिठाई खाते-खाते सव उठ खड़े हुए, और जाते-जाते वडी-मा को प्रणाम करते गये।

सव लडकों के चले जाने पर गोपाल ने वड़ी मा के पास आकर कहा,— हीरालाल सपूत है वडी-मा, उसने आज तक किसी को मालूम भी नही होने दिया, कि उसका व्याह हो गया है!

-वह तेरी तरह वेशर्म थोडे ही है।

-मै वेशर्म हूं, वड़ी-मा ?

-और नही तो ? 'वहू-वहू' तो कहता फिरता है। व्याह तो सवके ही होते हैं, पर कोई वहू का नाम लेता होगा ?

गोपाल मन-ही-मन शर्मिन्दा हुआ। सचमुच यह उसने अच्छा नहीं किया। आत्मक्षुद्रता के वोध से झुक कर उसने वड़ी-मा को आश्वासन दे दिया — अव मै कभी ऐसी वात नही कहूंगा, वड़ी-मा!

सव वच्चों के साथ गोपाल के वाहर चले जाने पर वड़ी-मा ने वहू को सुनाते हुए कहा — वाप की कुछ हवा इसे भी लग गयी मालूम होती है।

मौका देख कर, अपने साथियों से अलग होकर गोपाल पारो-काकी के घर पहुंचा। दरवाजा खटखटाया — काकी, दरवाजा खोलो!

-कौन है ?

-मैं हू, गोपाल। दरवाजा खोलो, काकी।

पारो ने आकर दरवाजा खोल दिया। गोपाल की रगी-पुती मूर्ति देखकर एकवारगी वह डर-सी गयी। व्याकुल होकर वोली — खवरदार, जो मुझ पर रग डाला तो ?

-थोड़ा-सा काकी ?

-अरे गोपाल, काकी पर भी कोई रग डालता होगा ? देख तो मेरे कपडे विलकुल नये हैं।

–आज के दिन नये कपड़े पहने ही क्यों ? ये लो।' कह कर उसने शीशी का रंग पारो की सफेद साड़ी पर छिड़क ही तो दिया।

–अच्छी बात है। जितना भी रंग हो, डाल दे।

गोपाल अपनी इस सहज सरल प्राप्त विजय से संतुष्ट होकर आत्म-समर्पिता काकी के चारों ओर घूम-घूम कर, रंग छिड़कता रहा, ताकि कहीं किसी तरह की कसर न रह जाय।

इसी समय राधामाधव, अपनी मित्र-मंडली के साथ आ गये। फिर तो पारो पर इतना गुलाल फेंका गया, इतना पानी गिराया गया, कि वह परेशान हो गयी।

पास ही खड़ा, गोपाल काकी की यह दुर्दशा देख रहा था।

जब सब लोग चले गये, तो उसने काकी का घूंघट हटाकर पूछा —अब ?

–चल। कुंडी में से पानी निकाल दे।

–नहाओगी ?

–और नहीं तो, क्या इसी तरह बैठी रहूं ?

–लेकिन लोग आकर फिर से रंग छोड़ेंगे तो ?

–इस बार किसी को दरवाजा ही नहीं खोलूंगी।

–माधवकाका को भी नहीं ?

–नहीं, किसी को नहीं।

–और मुझे ?

–तुझे तो बांध कर घर में बिठा दूंगी।

गोपाल के दिमाग में बिजली-सी कौंध गयी। बांध कर किसी आदमी को क्यों और कैसे बिठाया जाता है, इसकी कल्पना करके ही वह सिहर-सा उठा। एक पल के लिए ही सही, होली का यह आनन्दोत्सव उसके लिए विलुप्त हो गया। काकी की ओर वह एक क्षण के लिए चुपचाप देखता रहा। इसके बाद अपने को संभालते हुए दीर्घ-श्वास लेकर इतना ही कह सका — अच्छा काकी। चलो, पानी निकाल देता हूं। नहा लो।

किंचित अवसाद भरे मन से वह अपने घर वापस चला आया। दुखी मन से उसने स्वीकार किया, कि हर कोई उसे पागल ही समझता है, क्योंकि वह पागल का लड़का है।

मा ऊपर थी। नाई भीखमचंदजी की हजामत कर रहा था। उनके हाथ-पाव बधे हुए थे, इसलिए छटपटाते हुए वे 'नहीं-नहीं' चिल्ला रहे थे। लेकिन उनके इस विरोध की ओर कोई ध्यान नही दे रहा था। नाई क्षौर-कर्म करने मे व्यस्त था।

पागल आदमी की हजामत करना सरल काम नहीं, इसलिए हजारीमल नाई ने पूरा एक रुपया लिया है।

भीखमचंदजी की पीठ की ओर यशोदा, उनके बाल पकड़ कर, सिर को ऊपर उठाये हुए थी। दुर्बल भीखमचदजी यशोदा से अपने आपको छुड़ा नहीं पाये।

खूटिया निकालने के लिए ज्योंहि हजारीमल ने उस्तरा सिल पर रगड़ा, त्योंहि भीखमचदजी भड़क-से उठे। जोर-जोर से चिल्लाते हुए, हाथ पाव मार कर अपने आप को मुक्त करने के लिए उन्होंने इतना जोर लगाया कि बाल पकड़े यशोदा के लिए उन्हे सभालना मुश्किल हो गया। यशोदा ने फिर भी उन्हे छोड़ा नहीं।

पिता के प्रति मा का यह बर्बर-व्यवहार गोपाल ने पहली बार देखा। वे हमेशा की तरह चीख-चिल्ला रहे थे। अनाप-शनाप बक-झक कर रहे थे। पर आज यशोदा उनके प्रति थोड़ी-सी रियायत करने को भी तैयार नहीं थी। पिता द्वारा मा को पीटे जाते उसने अनेक बार देखा है। मगर मा पिता के प्रति अपने बल का प्रयोग कर सकती है, इसकी तो वह कल्पना भी नहीं कर सकता।

भीखमचंदजी चीख रहे थे — चंडाल के हाथों मुझे मरवाना चाहती है? हत्यारी, मेरी मुक्ति कैसे होगी?

नाई के हाथों मरवाने का कोई षड्यन्त्र नहीं था लिहाजा मुक्ति का प्रश्न भी व्यर्थ था। सो यशोदा ने पति के इस आरोप का कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया।

हजामत हो चुकी थी। जगह-जगह उस्तरे की तेज धार से लगी हुई हल्की-फुल्की चोट से खून निकल रहा था। कहीं-कहीं साबुन दिखाई दे रही थी। गोपाल अब तक चुपचाप यह सारा कर्म-काण्ड देख रहा था। यशोदा ने एक रुपया देकर हजारीमल को विदा कर दिया। इसके बाद गर्म पानी मे तौलिया भिगो कर वह पति का चेहरा पोंछने लगी।

बधे हुए हाथों से विवश, प्रतिकार करने का कोई उपाय न देखकर, क्रोध के मारे भीखमचंदजी जमीन पर पछाड़ें खा-खा कर तड़पने लगे। बारम्बार दीवार पर सर मारते हुए वे 'हाय-हाय' करते रहे।

गोपाल जब कभी ऐसी परिस्थिति मे पड़ जाता, तो मां का पक्ष लेकर, पिता की ओर भयपूर्ण दृष्टि से देखता हुआ रोने लगता। लेकिन आज वह चुपचाप बैठा, इस सारे काण्ड को थोड़ी देर तक देखता रहा। देखता रहा, पिता का यह वीभत्स, करुण रूप, देखता रहा मां का अपरम्पार धीरज, और और यह भयकर परिस्थिति !

एकाएक वह अट्टहास कर उठा।

उसकी हसी ऐसी अद्भुत, इतनी अप्रत्याशित, इतनी डरावनी थी कि मस्तिष्क का सतुलन खोये हुए उसके पिता और अविचलित धैर्य-धारिणी उसकी माता भी एकबारगी सन्नाटे मे आ गयी। किसी तरह यशोदा ने घबरा कर रुधे हुए भयाक्रात कठ से इतना ही कहा — गोपाल !

गोपाल चीखा — मा, तुम—तुम—तुम पागल हो !

पति की ओर से यह आरोप यशोदा ने अनेक बार सुना है। लेकिन पुत्र द्वारा इसका पुनरावर्त्तन सुन कर उसका खून सर्द हो गया। चेहरा पीला पड़ गया।

भीखमचदजी के पास जाकर गोपाल ने उसी तरह तेज स्वर मे कहा — हा, आपामा, मा तुम्हे नाई के हाथों मरवाना चाहती थी। देखो, यह खून ! कहते हुए उसने गाल के एक हिस्से पर उस्तरे की चोट से निकल रहे खून को हाथ में लेकर पिता की आखों के सामने कर दिया।

यशोदा ने गोपाल को अपनी ओर खींचते हुए फिर पुकारा — गोपाल !

—मुझे मत छूओ। दूर हटो। तुम मुझे भी एक दिन इसी तरह पागल बना कर, बाध कर बिठा दोगी।

विक्षिप्त भीखमचदजी इस अप्रत्याशित घटना को धीरे-धीरे हृदयागम कर, प्रसन्नतापूर्वक कहने लगे — ठीक है। ठीक है। ले मजा !

यशोदा गोपाल को अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करती रही। द्रवित कठ से मनुहार करती रही — नीचे चल गोपाल, नीचे चल। मगर वह अपने पिता से इस तरह लिपट गया, कि यशोदा उसे अलग नहीं कर सकी।

—मै नहीं आऊगा। कभी नहीं आऊगा।

गोपाल के इस विरोध का सामना यशोदा अधिक देर तक नहीं कर सकी। पुत्र के पागल हो जाने की सभावना से उसे चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार

दिखाई देने लगा। लगने लगा, मानो धरती घूम रही है। प्रलय आ गया हो। अब कुछ भी शेष न रह गया हो। इससे अधिक वह अपने आप को नहीं सभाल सकी। बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी।

मां का अचेत होकर गिरना गोपाल ने देख लिया। इसके बाद जैसे उसके मस्तिष्क की शिराओं का खून छितर गया। जैसे उसे भी होश आ गया हो, वह पिता को छोड़कर उठ खड़ा हुआ। मा को होश में लाने की कोशिश करता हुआ, उसके शरीर को बारम्बार हिलाते हुए आर्त्त-स्वर में 'मां-मा' पुकारने लगा।

इसी समय भौजाई को पुकारते हुए राधामाधव ऊपर चले आये। उपस्थित काण्ड को देखकर, बिना कुछ पूछे ही शायद वे सब कुछ समझ गये। सम्भवत: एक बात उन्होंने गलत ही समझी, कि भीखमचंदजी ने अपनी पत्नी को इतना पीटा, इतना पीटा, कि वह बेहोश हो गयी।

होली का सारा उत्साह पल भर में समाप्त हो गया। इस स्त्री द्वारा प्रति पल, प्रति क्षण क्षय होने के इतिहास के वे एकान्त रूप से साक्षी रहे हैं। इस त्याग के प्रति उनके मन में असीम आदर और श्रद्धा भी है। लेकिन होली के इस परम पवित्र, आनन्दोत्सव की हंसी-खुशी में पागल पति की दुर्दमनीय मार सहते-सहते उसे इस प्रकार बेहोश पड़ी देख कर राधामाधव के मन में त्याग-सम्मोहित यशोदा के प्रति अचानक ही हजारों शिकायतें शोर मचाने लगीं। क्यों ये यह सब इस तरह सहती रहती हैं?

पागल आदमी के साथ उसी तरह का व्यवहार क्यों नहीं कर सकती, जिस तरह किया जाना चाहिए। भीखमचंदजी पागल है, फिर उनसे भलमानसहत की उम्मीद क्यों की जाय? और फिर क्यों इस तरह पशुओं की तरह पीड़ा सहने का क्रम बना रहे?

उन्होंने भीखमचंदजी की ओर देखा। यशोदा के पास रोते हुए गोपाल को गोद में भरते हुए, उन्होंने इतना ही कहा—भइजी, यह अच्छा नहीं हो रहा है। पूर्व जन्म के जो पाप ढो रहे हो, वही बहुत है। इस जन्म के इन पापों का प्रायश्चित करने के लिए पता नहीं, कितने जनम तुम्हें और धारण करने पड़ेंगे!

कहते-कहते उनका कंठ आद्र हो गया। बोले — भौजाई की रक्षा का हाथ इतना बड़ा नहीं होता भइजी, तो यह राधामाधव ही कभी का पागल होकर तुम्हारे गले पर हाथ रख कर दबा देता।

चुपचाप बैठे, अपने आप को निर्दोष प्रमाणित करने का उद्योग करने वाले भीखमचन्दजी पर राधामाधव की इस धमकी का सम्भवत कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

-जा गोपाल, नीचे से पानी का एक ग्लास ले आ। सुन नहीं रहा है? मै क्या कह रहा हू-नीचे जाकर पानी का एक गिलास ले आ भइया।

गोपाल ने उनकी आज्ञा का पालन किया। पानी का ग्लास ले आया। राधामाधव भौजाई को होश मे लाने के प्रयत्न करते रहे।

पानी के छींटे पड़ते ही कुछ ही देर मे यशोदा ने आखें खोल दी। तुरन्त उठ बैठी। क्या हुआ, और जो कुछ हुआ, वह क्यो हुआ—राधामाधव के ऐसे अनेक मौन प्रश्नो की ओर बिना ध्यान दिये, अपने अस्त-व्यस्त कपड़ों को ठीक करती हुई, वह उठकर नीचे चली गयी।

राधामाधव को मालूम है कि पति की इस तरह की हरकतों के बाद उनकी अत्यधिक चिन्ता करना ही यशोदा का स्वभाव है। लेकिन आज उसे इस तरह चुपचाप उठ कर जाते देखकर वे कुछ चिन्तित-से हो गये। सोच मे पड़ गये। गोपाल से पूछा — गोपाल, क्या बात है रे?

गोपाल ने कोई जवाब नहीं दिया।

-आओ, नीचे चलें।

गोपाल को अपनी गलती याद करके मन ही मन लज्जा का बोध हो रहा था। वह किस तरह समझाये, कि अभी-अभी वह क्या कर गुजरा है। वह कितना अशोभनीय, कितना क्षुद्र और कितना आकस्मिक काड था, इसे वह किसी भी तरह से व्यक्त नहीं कर सका। वह राधामाधव के साथ नीचे आ गया। मा के पास जाकर, सिर नीचा करके, उसने धीरे-से क्षमा-याचना के स्वर में कहा — मा अब मै कभी ऐसा नहीं करूगा। कभी नहीं।

यह ठीक से नहीं कहा जा सकता, कि गोपाल के मस्तिष्क पर पिछली घटना का कोई ऐसा प्रभाव पड़ा था कि वह पागलों की तरह चीखने-चिल्लाने लगे, अथवा उसने मन के अन्तराल की किसी अज्ञात आवाज का अनुगमन करके,

सम्मोहित होकर, यह दुष्काण्ड उपस्थित कर दिया था। मन की भाषा और उसके इरादे समझना तो आसान नहीं, लेकिन जो कुछ वह कर गुजरा है, वह किसी भी भले और समझदार आदमी को नहीं करना चाहिए, यह बात उसे मालूम है।

यशोदा ने मानों गोपाल की बात सुनी ही नहीं। राधामाधव से कहा·— आज अपना सारा गर्व भूल कर, हाथ जोड़कर, तुम्हारे हाथों इस गोपाल को सौंपती हूं। जात-पात की बात मत उठाना देवरजी। भगवान ने ही जब यह नहीं होने दिया, तो मैं क्या कर लूंगी? इसे अपने पास ही रखो। इसका जो चाहो करो, लेकिन इसे यहां मत आने दो।

भौजाई किस कारण से यह बात कह रही है, यह राधामाधव नहीं समझ सके। लेकिन उसका चेहरा देखकर कुछ विशेष पूछने की हिम्मत भी उनकी नहीं हुई। इसलिए आज्ञाकारी सेवक की तरह उन्होंने इतना ही कहा·— अच्छी बात है।

—आज, इस समय जो कुछ हो चुका है, उसे देख कर मैं कहीं की नहीं रही। यदि यह गोपाल इसी घर में रहा, तो एक दिन यह भी अपने पिता की तरह !' इससे अधिक उससे बोला नहीं गया। मुंह फिरा कर वह अन्दर की ओर चली गयी।

राधामाधव ने गोपाल के अपराध का विस्तृत विवरण नहीं पूछा। यही कहा — भौजाई, तुम चिन्ता मत करो। भगवान पर भरोसा रखो। वह सबकी नैया पार लगाता है। गोपाल तो मेरा ही बेटा है, वह मेरे ही पास रहेगा। तुम अपना जी छोटा मत करो। उठो, आज त्योहार का दिन है, कुछ मिठाई-विठाई घर में हो, तो ले आओ। आज के दिन बासी मुंह तो रहा नहीं जा सकेगा।

मिठाई खाने की जरा-सी प्रवृत्ति न होने पर भी, अपने को और भौजाई को बहलाने के लिए उन्होंने जो कुछ भी कहा, वह कैसे कहा जा सका, यह अन्तर्यामी के सिवाय कोई नहीं जानता।

यशोदा को उसी तरह चिन्तामग्न और अचल मुद्रा में देखकर, राधामाधव ने धीरे-से आगे कहा — भौजाई, अब भईजी को अस्पताल भेजने की व्यवस्था करनी ही पड़ेगी। न हो, दूसरा मकान किराये से लेकर, एक आदमी देखभाल के लिए रख लें। तुम मेरे रुपये नहीं लोगी। ठीक है। मत लो। लेकिन देने का अर्थ

सिर्फ दान देना ही नहीं है, कि जब तक तुम आचल फैला कर मेरे सामने भीख न मागो, तब तक मै तुम्हारी मनुहार करता ही रहू। दू कुछ भी नहीं। अब यह नहीं होगा। देखता हू, तुम कैसे और कहां तक मना करती रहोगी।

कमरे के अन्तर्भाग के अधेरे मे खड़ी यशोदा ने इतना ही कहा — आज होली है माधवजी, तुम दोनों बाहर जाओ। हसो, खेलो।

इस छोटे से घर के तीन प्राणियों का दुख, बाहर होली खेलने के लिए जा रहे मस्त-दलो के गीत और चगों के प्रचण्ड स्वरो की सरसता को मन्द नहीं कर सका, सो नहीं कर सका। मगर इन प्राणियो मे से किसी को भी यह हसी-खुशी अच्छी नही लगी, सो नही ही लगी।

छ :

राधामाधव के साथ उनके घर आते वक्त रास्ते में, गोपाल से उन्होंने पूछा — तू ने क्या किया था, गोपाल? सच-सच बता दे?

–कुछ भी तो नहीं, माधवकाका।

–कोई न कोई बात हुई जरूर है।

–मां आपासा की हजामत करवा रही थी।

–फिर?

–रोज की तरह आज भी वे उसी तरह गालिया देते रहे, चीखते-चिल्लाते रहे, सिर पटकते रहे, हाय-हाय करते रहे। लेकिन आज मैंने पहली बार देखा कि मां ने उनके बाल इस तरह कस कर पकड़ रखे थे, कि उनके मना करने पर भी हजारीमल ने उनकी हजामत कर दी। मैंने मां को कभी इस तरह देखा नहीं था। मुझे ऐसा लगा कि मां ने जानबूझ कर आपासा को पागल बना कर बाध रखा है। इसके बाद क्या हुआ, यह मुझे ठीक से याद नही। मां जब अचेत हुई, तब मेरा दिमाग ठिकाने आ गया।

माधवकाका को चुपचाप देखकर, अपने अपराध की क्षुद्रता प्रमाणित करने के लिए अथवा उसके प्रायश्चित के लिए गोपाल ने आगे कहा — मैं अब तुम्हारे पास ही रहा करूंगा, माधवकाका। मा कहती थी न, कि यदि मैं वहा रहा, तो एक दिन मैं पागल हो जाऊगा !

–नही बेटा, ऐसी बात नही किया करते। तुझे मालूम है गोपाल, यदि तू मेरे पास रहेगा तो भौजाई की क्या हालत होगी ?

–क्या होगा ?

–तूं वहा रहता है, तो भईजी के अलावा तेरे लिए भी कुछ न कुछ समय तो वह निकाल ही लेती है। इतना समय तो सुख से कट जाता है ! नही तो वह उनकी सेवा में ही अपना सारा शरीर स्वाहा कर देगी। दुबली-पतली काया, कोई जतन नहीं, उस पर इतनी मुसीबतें एकसाथ ! वे तो सती हैं, देवी हैं, तभी तो सब कुछ सह लेती हैं। उन्होंने सभी के उत्पात तो सहे हैं ? किसके नही सहे गोपाल ? तुम्हारे इस माधवकाका नें भी कोई कम उपद्रव नहीं किये है। लेकिन उनके दुख को कम करने का मुझे कोई उपाय नहीं दिखाई देता। दिखाई देता, तो अपनी काया बिछाकर भी उसका निवारण कर देता। भईजी और भौजाई अब इस दुनिया के नहीं रहे, गोपाल। वे तो राम के हो गये। अब वे जैसे नचायेंगे, वैसे ही नाचना होगा। भौजाई अपने शरीर का जतन करे, और भईजी वापस ठीक हो जायंगे, इतना बड़ा झूठ कैसे कहूं, और किससे कहूं ? एक दिन इस संसार को छोड़कर तो सबको ही चले जाना है, गोपाल। लेकिन इस तरह तिल-तिल छीजते रहना— अच्छा गोपाल, जाने दे इन बातों को। तू किसी तरह चिन्ता-फिकर मत किया कर। देख तो, सामने से किसकी गेवर आ रही है ?

पुरोहितो की गेवर आचार्यों के चौक की ओर जा रही थी। यह जानते हुए भी इस समाचार को कहने का उत्साह किसी मे नहीं था।

एक दिन इस दुसह्य स्थिति का अन्त जरूर होगा, यह राधामाधव को मालूम है। गोपाल भी जानता है, कि आयेगा एक दिन, जब कि यह सब कुछ समाप्त हो जायगा। लेकिन तत्पश्चात उसके पास क्या बचेगा, यह उसे नहीं मालूम। राधामाधव भी किस तरह अनुमान लगाये, कि इसका अन्त

आने मे अभी तक कितनी देर है ? उसे अभी तक कितने दिनों तक इसी तरह भुगतते रहना होगा। जिस दिन अघटित घट जायगा, उस दिन वे सन्तोष की सास लेकर अपना जी हल्का कर लेंगे, अथवा जी भर कर रोयेंगे, यह भी ठीक से नही कहा जा सकता।

घर आ गया था। दोनों अन्दर जाकर सीधे अपने ऊपरवाले कमरे मे चले गये।

पारो के लिए यह कुछ विचित्र-सी बात ही थी, कि आज होली के दिन, राधामाधव गोपाल को लेकर अपने कमरे मे इस तरह चुपचाप पड़े रहे। यहा तक कि घर आकर बिना पारो को कुछ कहे, अथवा उसकी कोई बात सुने, सीधे अपने कमरे मे जाकर बैठ जाय। दबे कदमो से उनके कमरे मे आकर चिन्तित राधामाधव को देख कर, उसने व्याकुल स्वर मे पूछा —क्या हुआ जी ?

राधामाधव ने नजर उठा कर पत्नी की आतुरता देखी। हसकर बोले — यहा आओ भी। आओ भी डरने की कोई बात नहीं। सच, एक जरूरी बात कहनी है।

घबराई हुई पारो पति के पास जाकर बैठ गयी।

गोपाल सारी बातो को भुलाकर कह बैठा — जरा दूर काकी। हममे से किसी ने स्नान तक नहीं की है।

राधामाधव ने कहा — सूरत देख रही हो ? मुह लटका हुआ है न ?

–क्या हुआ ?

–हुआ यह, कि दुखी हू !

–कहो भी, आखिर बात क्या है ?

–सभी कहते हैं कि इस घर में अब तक बाल-बच्चों की फौज जमा हो जानी चाहिए। मगर देखता हू—यहा तो चूहों ने भी बच्चे देना बन्द कर दिया ! इसलिए बेहद दुखी हू।

–वाह वाह, यही कहना था ?

–लो, तुम्हारे लिए तो ये सारी बाते फालतू है—

–बस, यही सब बातें बच्चों के सामने किया करो।

–अजी, गोपाल कोई पराया तो है नहीं, सेठानीजी। क्यों गोपाल, इस घर में भी छोटे-छोटे बच्चे चाहिए कि नहीं ?

–चाहिए क्यो नही ? चाहिए, जरूर चाहिए। बहुत सारे चाहिए। एक दो—दस ! दस बच्चे चाहिए काकी। लाओ ?

–मैं जाती हूं। इन सारी फालतू की बातों के लिए मुझे फुर्सत नही है।

–वाह, फुर्सत कैसे नहीं है जी ? इतने साल तो हो गये ब्याह हुए, अभी तक तुम्हे फुर्सत ही नही मिली। वाह, यह भी कोई बात है ! इस तरह सारे काम टालने से नहीं चलेगा, लक्ष्मी। अब इन्तजार अधिक नही होगा। लोग कहते हैं, बिना पुत्र के पित्रों को जल तक नही मिलता। बिचारे प्यासो मर रहे होंगे। किसी पेड की डाली पर उलटे लटक कर, वे तो वहा लड़के का इन्तजार कर रहे हैं, और यहा तुम्हे फुर्सत ही नही है। जब से मैंने भरी दोपहर में उन्हें सपने मे देख लिया है, तब से बड़ी चिन्ता हो रही है। गया सीधा भौजाई के पास। कहा —पारो तो किसी काम की नही। जब तक वह कुछ कर नहीं देती, गोपाल से ही काम चला लूगा। पित्रो को क्या मालूम, कि यह मेरा बेटा नहीं है ?

–बस यही कहना था कि और कुछ ? इतनी-सी बात कहने के लिए सूरत ऐसी बना रखी थी ? मुझे तो जिठानीजी ने इसे पहले से ही गोद दे रखा है। हमे अधिक भीड-भड़क्का नही चाहिए।

–चलो कष्ट बचा। अब गोपाल को ज्यों-त्यो उस घर मे मत भेजना। पता नहीं, जिस भौजाई ने आज हाथ भर कर अपने बेटे को गोद दे दिया है, कल उसकी नीयत ही बदल जाय। क्या कहती हो ?

–यो पराये बच्चो को जबर्दस्ती थोड़े ही रखा जा सकता है ? बच्चा है। सो तो मा के पास जायगा ही।

–अब यह शास्त्र रहने दो देवी। मा भी तो बच्चे के पास आ सकती है।

–यह फूहड़ जबर्दस्ती हर-किसी के साथ नही चलेगी। कहे भले नहीं। वे नाराज ही होंगी।

–तब तो और भी अच्छा है। नाराज हो जायं, बोलना-चालना बन्द कर दें तो आराम मिले। फिर गोपाल को मागेगी कैसे ?' कहते हुए वे एक मिनट तक चुप रह कर पारो के आचल मे लिपटी ऊंगलियों का व्यापार देखते रहे। फिर गंभीर स्वर में कहने लगे.—पारो, जब तक गोपाल भौजाई को कंधा न लगा आये, जब तक उनकी चिता पर अपने हाथ से अग्नि न रख दे, तब तक हम मे से किसी को शांति नहीं मिलेगी।

भौजाई के प्रति राधामाधव का यह रुख बिलकुल नया, इसलिए विचित्र-सा था। पारो को मालूम है, कि एक दिन यही होने वाला है। फिर भी इन भयानक परिस्थितियों का अचानक लुप्त हो जाना भी उसे कष्टदायक महसूस होने लगा। उसकी आखों मे पानी भर आया। प्रकारान्तर से बोली — दोपहर होने आई। तुम सब घर में ही बैठे रहोगे क्या?

–यही सोचता हू, कि बैठा रहू। जो कुछ हो सके, तुम्हारी सेवा ही सही।

–रहने दो।

–सच, आज बड़ा आलस आ रहा है, भगवती। कहीं बाहर जाने को जी नहीं चाहता।

–सो नहीं होगा। साल भर में एक बार तो होली आती है। उस दिन औरतों की तरह घर मे बैठे नहीं रहने दूगी।—और गोपाल तू इस तरह गुमसुम क्यों बैठा है? अपने काका के पास इस तरह मुह लटका कर बैठा रहेगा तो इनकी तरह ही 'ठेठ मिंडी ठोठ'* रह जायगा। क्यों रे, तेरे रग खत्म हो गये क्या? बाहर जा, खेल कूद।

गोपाल घर की प्रस्तुत चिन्ताओं मे उलझा हुआ एक ओर चुपचाप बैठा था। माधवकाका और पारो काकी के हास-परिहास की ध्वनि सम्भवत उसके कानों तक आज पहुची ही नहीं। काकी की बात सुनकर उपस्थित को भूलकर किसी अनुपस्थित बात को याद कर, पुलकित स्वर मे बोल उठा —काका, तुम्हें मालूम है, पिछले साल हीरालाल, लड़की—बीनणी— बन कर इतना नाचा था, इतना नाचा था, कि क्या कहूं!

गोपाल की इस अप्रत्याशित प्रसन्नता को राधामाधव ने लक्ष्य किया। बोले — गोपाल, चल, तुझे भी आज बीनणी बनाता हू। आज डाडियों का खेल भी है। खूब पेट भर कर खेलेंगे।

यह सद्कार्य गोपाल को बेहद पसन्द आया। लिहाजा, पारो काकी का लहगा, चोली, टीकी-टमकी सब कुछ हाजिर हो गया। लड़कियों के कपड़े पहन

* अपढ-गवार

कर, और गहनों से पूरा श्रृंगार रच कर, जब उसने अपना चेहरा आइने मे देखा, तो एकबारगी तो खुद को पहचान ही नही सका। फिर हंसते-हंसते लोट-पोट हो गया।

पारो काकी ने इस रूप-सज्जा के लिए काफी परिश्रम किया था। गोपाल के घूंघट में मुह डालकर पारो ने उसे चूम लिया।

राधामाधव ने पुलकित होकर कहा -वाह, गोपाल, वाह। जरा इधर देखो तो ?

पारो बीच मे पड़ी। बोली —ना गोपाल, पहले मुंह दिखाई माग ले।

-हा काका, मुंह-दिखाई लाओ ?

-हे देवी, एक रुपया उधार दे दो। मै तो बिल्कुल कंगाल हू।

-उधारी का धंधा साहूकारों के साथ चलता है।

-अच्छा जी ? हम साहूकार भी नहीं रहे ? कोई बात नहीं, धंधा मत करो। भिक्षा तो दोगी ? वही दे दो। मुंह-दिखाई देनी है। लाज रख लो।

पारो हसती-हंसती उठ खड़ी हुई। पति के हाथ मे रुपया दे दिया। वह गोपाल के पास पहुंच गया। गोपाल ने घूघट उलट दिया।

इस विचित्र कौतुक मे कुछ देर के लिए सारा व्यतीत दुख भुला दिया गया।

गोपाल को लेकर राधामाधव लक्ष्मीनारायणजी के यहा पहुच गये। उनके सुपुत्र को वर-वेश मे विभूषित करने पर अच्छा स्वाग रचा जा सकता है। बाद मे दोनों का पल्ला बाध कर, सारे शहर मे घुमाकर सेठ साहूकारो से रुपया नारियल बड़े मजे से मागा जा सकता है। इस तरह से दिया हुआ रुपया-नारियल न तो अहंकारी का दान है, और न भीख मागने के सकोच से दबा हुआ दीन-हीन प्रयास ही। इसलिए न तो इसे लेने मे ही कभी किसी को लज्जा महसूस हुई है, न देते वक्त किसी तरह का एहसान करने के व्यर्थ गौरव ने ही किसी को छोटा बनाया है।

लक्ष्मीनारायणजी सम्पन्न व्यक्ति है। दिल के उदार, मुक्त-हस्त। लोग उन्हे बड़ी उदारता से ''कुबेर'' कहा करते है। काफी बड़ी हवेली है। खूब धनसम्पन्न हैं। घर मे दस-पाच नौकर-चाकर है। चारों ओर फैला हुआ व्यवसाय है। पाच-पचास आदमियो से हेलमेल है, लिहाजा इज्जत है। दबदबा है।

राधामाधव को मानते हैं। उनका आदर करते हैं। उनके साथ अपनी सहज मित्रता पर गौरव भी करते हैं। उन्हें आता देखकर, स्वागत में लक्ष्मीनारायणजी स्वयं दरवाजे तक उन्हें लेने आये।

भीतर के बड़े कमरे में जाजिम बिछी हुई है। अनेक लोग रंग से तरोत्तर, पान सुपारी और मिठाई आदि खाने-पीने में व्यस्त हैं। कुछ लोग अत्यधिक थक जाने के कारण, तकियों के सहारे नींद में खोये हुए, मुंह फाड़ कर खर्राटे भर रहे हैं।

राधामाधव ने प्रवेश करते ही, बड़े नाटकीय तरीके से कहा —लक्ष्मी-नारायणभाई, आज तुम्हारे दरवाजे पर बड़े कष्ट में पड़ कर आया हूं। देख रहे हो, लड़की कितनी बड़ी हो गयी है। चिन्ता के मारे रात-दिन नींद नहीं आती। इसके लिए झोली पसार कर तुम्हारा लड़का मांगता हूं।

–यह लड़की, कहां से उठा लाये, भइया?

तभी बीच में से किसी ने परिचय दे दिया — यह तो भीखमचंदजी का लड़का है जी, गोपाल!

राधामाधव ने त्योरियां चढाकर कहा — नहीं जी, गोपी!

गोपाल से रहा नहीं गया। बोल पड़ा — गोपालदास।

–छि बेटा, लाज शरम रखो। इतने जोर से नहीं बोलते। यह ससुराल है।

चारों ओर से हंसी का फव्वारा फूट पड़ा।

लक्ष्मीनारायणजी ने आराम से गद्दी पर बैठते हुए कहा -- राधामाधव, बीनणी तो बहुत सजा-संवार कर लाये हो। वाह, रूप का अन्त नहीं। क्योंजी, थोड़ा-सा घूंघट हटा कर हमें भी देख तो लेने दो।

गोपाल ठीक लड़कियों की तरह घूंघट थाम कर एक ओर बैठ गया। लेकिन बोल गया -- पहले मुंह दिखाई का रुपया-नारियल दो!

–वाह, यह कैसे हो सकता है? अभी तक तो ब्याह हुआ ही नहीं, फिर मुंह-दिखाई का रुपया क्यों देना पड़ेगा? यह तो राधामाधव, अन्याय है। मुंह देखे बिना तो ब्याह होगा नहीं। हम भी नये फैशन के आदमी हैं, राधामाधव!

इस अभिनय का रस उपस्थित सारा जन-समूह अत्यन्त प्रसन्नता से ग्रहण कर रहा था।

राधामाधव ने अभिमान के स्वर में कहा —मैं आया हूं, गोविन्द को अपनी इस लड़की के लिए मांगने। लड़की का बाप हूं, कमजोर पड़ता हूं। लेकिन इस तरह जोर-जबर्दस्ती नहीं कर सकते लक्ष्मीनारायणजी। लड़के को बुला लो। उसके साथ ब्याह करना है। वह देख ले। कोई कोर-कसर हो, ऐब हो, तो बता दे। बाद में शिकायत नहीं सुनूंगा। तुमने खुद शादी करके भाभी की थोड़ी फजीहत नहीं की है। बाद में मीनमेख नहीं निकाल सकोगे!

इस प्रत्यक्ष व्यंग्य से लक्ष्मीनारायणजी कुछ शर्मा-से गये। कहने लगे —राधामाधव, आधी ऊमर तो औरतों की गुलामी में गुजार दी। बाकी जो है, सो लड़कों की जी-हजूरी में कट जायगी। लड़की तो सुन्दर है। लेकिन आजकल के लड़कों की बातें! कुछ पूछो ही मत। कहते हैं—ब्याह ही नहीं करेंगे। करेंगे जरूर। लेकिन कहेंगे यही— 'नहीं, नहीं करेंगे।' अब तो जमाना बदल गया है भइया। सो पहले नवाबजादे को बुलाकर, हाथ जोड़कर, पूजा कर-करा के राजी कर लो। उसके बाद हमारी तो हां है ही!

गोपाल अपने नूतन परिधानों को संभालने में व्यस्त था। इसी समय लोग गोविन्द को पकड़ लाये। यह तो खैर स्वांग—अभिनय—की ही बात है। लेकिन वास्तव में शादी-ब्याह के मौके पर समाज के सर्दारों को आजकल के लड़कों के प्रति चाहे जितनी शिकायतें हों, लेकिन रीति-रिवाज आज भी वे ही जोरजबर्दस्ती के ही हैं। लिहाजा लड़का, अथवा लड़की अपना भी कोई अस्तित्व रखता है—इस बात का कोई मायने ही नहीं।

जमात में से अनेक पंडित टपक पड़े। शास्त्रीय मंत्रोच्चारण हुआ। गोविन्द को जबर्दस्ती बिठा कर इस बाल-वधु के पल्ले से बांध दिया गया। गोविन्द बिचारा घबराया हुआ इन बुजुर्गों की इस मजाक को चुपचाप सहता रहा।

राधामाधव ने गोपाल से कहा.— सबके पांव पड़ लो, बेटा। जब तक रुपया-नारियल न मिल जायं, किसी को छोड़ना मत।

गोपाल सबसे पहले राधामाधव के ही पांव पकड़ कर बैठ गया।

उन्होंने हंसते हुए नया रुपया और अपनी पगड़ी गोपाल के फैले हुए आंचल में डाल दी। बोले —नारियल तो मेरे पास है नहीं, गरीब आदमी हूं। तुम्हारी गोद में अपनी यह पगड़ी रखता हूं। ससुर की टाट सास के जूतों के मारे गंजी हो गयी है। उन्हें दे देना। बिचारे बच जायंगे।

इसके बाद तो उपस्थित लोगों का परिचय राधामाधव ने ऐसी रसिक भाषा में दिया, कि यदि होली का दिन न हो तो वहां बैठा प्रत्येक व्यक्ति उन्हीं बातों को लेकर घंटों प्रवचन देकर, बदले हुए जमाने के प्रति निश्चित रूप से क्रुद्ध मनोभाव प्रकट कर देता। लेकिन आज के दिन अत्यन्त उदार क्षमा के साथ लोगों ने उनकी प्रत्येक बात का आनन्द ही उठाया। इस तरह से एकत्रित नेगदस्तूर से आंचल भर कर, सबके बीच में गोपाल और गोविन्द बैठ गये।

वर और वधु पक्ष के दो दल तुरन्त निर्वाचित हो गये। फिर तो उभय-पक्ष को ऐसी कस-कस कर गालियां सुनाई जाने लगीं—गालियों से ऐसा मधु झरने लगा, कि घर के अन्तर्भाग में बैठी औरतों का हंसी के मारे बुरा हाल हो गया।

राह चलते लोग भी इस समारोह की साक्षी देने के लिए एकाधबार बड़े दरवाजे से अन्दर की ओर झांक ही लेते।

अपनी तमाम दुःखद परिस्थितियों को भूल कर गोपाल सच्चे हृदय से इस अभिनय का अनिर्वचनीय सुख प्राप्त कर रहा था। सब लोग हंस रहे थे। किलक रहे थे। बड़े-बूढ़े भी अपनी सहज आनन्द की धारा में बहते हुए, उम्र की मर्यादा भूल गये। जीवन के कटु प्रहारों, दिन-प्रतिदिन का रोना-कलपना, सब कुछ आज के महोत्सव में अन्तर्भूत हो गया।

यह सारा क्रिया कलाप चल ही रहा था, कि घबराये हुए एक आगन्तुक ने आकर सूचना दी — भीखमचंदजी घर से बाहर निकल आये हैं, और गलियों में चंग बजाते फिर रहे हैं। उनकी बहू, राधामाधवजी, आपको ढूंढ रही है। बेटे को पुकारती हुई, उनके पीछे-पीछे दौड़ रही है।

रंग में भंग हो गया। राधामाधव ने पूरी बात शायद सुनी भी नहीं, और वे वहां से उठ कर चल दिये। गोपाल इस अप्रत्याशित समाचार से हतप्रभ-सा एक पल के लिए बैठा रहा। इसके बाद घूंघट हटा कर आंखों में आंसू भरे, भारी दिल से बाहर निकल आया।

साल भर में एक ही बार आनेवाला आज होली का त्योहार है। सब खुशी में मग्न हैं। एक यही गोपाल है, कि जिसका अभाग्य उसे जरा-सी हंसी-खुशी में भी शामिल नहीं होने देता। सच्चे हृदय से वह चाहता है कि सारे दुख,

सारे कष्ट को भुलाकर वह थोडी-बहुत शांति की सांस ले सके। लेकिन लगता है, कि विधाता अपने पूरे शस्त्रास्त्रों के साथ उसके विरुद्ध है। माधवकाका ने उसे एक बार समझाया था, कि पिता का पागल होना भाग्य-निर्देश है। उसे चुपचाप स्वीकार कर लेना चाहिए। यही पिछले जनम के पापों का आदेश है।

इस छोटी उम्र मे जो दुख, जो दारिद्र्य उसे भुगतना पड रहा है-यह भी क्या भाग्य का अचल निर्देश ही है-यदि ऐसा ही है, तो इसका अन्त कहा होगा?

आज उसकी आखो मे आंसू जरूर थे। लेकिन भाग-दौडकर पिता को सभालने का उसमे कहीं, किसी तरह का उत्साह नहीं रहा। आज उसे अपने प्रयत्नो की, इस अन्तहीन विराट दुख के प्रति विरोध करने की सारी कोशिशो की तुच्छता अत्यन्त स्पष्ट होकर दिखलायी देने लगी।

आखिर बाध कर बिठाने से, भाग्य की दुहाई देने से, या पिछले जनम के पापो का हिसाब-किताब लगा कर ही तो इस विपुल भार को ढोया नहीं जा सकता। फिर क्यो यह दौडभाग, क्यों यह उछलकूद, क्यों ये तुच्छ प्रयत्न?

वह किसी वलिष्ट व्यक्ति से टकरा गया। सिर उठाकर देखा, एक अत्यन्त तेजस्वी वयोवृद्ध व्यक्ति सिर पर टिन का पीपा थामे जा रहे है। गलती से, सम्भवतः अनजाने मे, उनके शरीर का कोई भाग गोपाल से छू गया है। अत्यन्त दुखी होकर प्रचण्ड क्रोधित स्वर मे उन्होंने एक अत्यन्त प्रचलित गाली का प्रयोग करते हुए कहा.—अन्धा है क्या? ओ रे गोपाल? तो क्या छू ही देगा? बाप तो पागल है ही। तेरी भी मति-भ्रष्ट हो रही है क्या? घर मे वो तो यों पागल होकर बैठा है; और तूं इधर ये स्वाग रचाता फिरता है।

वैष्णव-शिरोमणी सुकीर्ति-सम्पन्न दुर्गादत्तजी की पूरी बात सुने बिना ही गोपाल आगे बढ गया। उसके कानों मे एक वाक्य निरन्तर विभिन्न तरीके से विराट रूप मे गूजता रहा:—बाप तो पागल है, तेरी मति-भ्रष्ट क्यो हो रही है?

जितनी ही बार वह इस वाक्य को विभिन्न रूपों से मन के सामने दुहराता, उतना ही विकराल होकर यह प्रश्न उसकी छाती पर साप की तरह कुंडली मार कर, भार बन कर बैठ जाता। इसका एक ही अर्थ. बाप के बाद, एक दिन... निश्चित रूप से, उसे भी, उसी तरह, ठीक उसी तरह से .भीखमचन्दजी की तरह ..अपने पिता की तरह .पागल हो जाना पड़ेगा।

इसके बाद तो उपस्थित लोगों का परिचय राधामाधव ने ऐसी रसिक भाषा मे दिया, कि यदि होली का दिन न हो तो वहा बैठा प्रत्येक व्यक्ति उन्ही बातों को लेकर घटो प्रवचन देकर, बदले हुए जमाने के प्रति निश्चित रूप से क्रुद्ध मनोभाव प्रकट कर देता। लेकिन आज के दिन अत्यन्त उदार क्षमा के साथ लोगों ने उनकी प्रत्येक बात का आनन्द ही उठाया। इस तरह से एकत्रित नेगदस्तूर से आचल भर कर, सबके बीच मे गोपाल और गोविन्द बैठ गये।

वर और वधु पक्ष के दो दल तुरन्त निर्वाचित हो गये। फिर तो उभय-पक्ष को ऐसी कस-कस कर गालिया सुनाई जाने लगीं—गालियों से ऐसा मधु झरने लगा, कि घर के अन्तर्भाग मे बैठी औरतों का हसी के मारे बुरा हाल हो गया।

राह चलते लोग भी इस समारोह की साक्षी देने के लिए एकाधबार बडे दरवाजे से अन्दर की ओर झाक ही लेते।

अपनी तमाम दु खद परिस्थितियों को भूल कर गोपाल सच्चे हृदय से इस अभिनय का अनिर्वचनीय सुख प्राप्त कर रहा था। सब लोग हस रहे थे। किलक रहे थे। बडे-बूढे भी अपनी सहज आनन्द की धारा मे बहते हुए, उम्र की मर्यादा भूल गये। जीवन के कटु प्रहारों, दिन-प्रतिदिन का रोना-कलपना, सब कुछ आज के महोत्सव मे अन्तर्भूत हो गया।

यह सारा क्रिया कलाप चल ही रहा था, कि घबराये हुए एक आगन्तुक ने आकर सूचना दी — भीखमचदजी घर से बाहर निकल आये है, और गलियों मे चग बजाते फिर रहे हैं। उनकी बहू, राधामाधवजी, आपको ढूढ रही है। बेटे को पुकारती हुई, उनके पीछे-पीछे दौड रही है।

रग में भग हो गया। राधामाधव ने पूरी बात शायद सुनी भी नहीं, और वे वहा से उठ कर चल दिये। गोपाल इस अप्रत्याशित समाचार से हतप्रभ-सा एक पल के लिए बैठा रहा। इसके बाद घूघट हटा कर आखों में आसू भरे, भारी दिल से बाहर निकल आया।

साल भर में एक ही बार आनेवाला आज होली का त्योहार है। सब खुशी में मग्न हैं। एक यही गोपाल है, कि जिसका अभाग्य उसे जरा-सी हसी-खुशी में भी शामिल नहीं होने देता। सच्चे हृदय से वह चाहता है कि सारे दुख,

सारे कष्ट को भुलाकर वह थोड़ी-बहुत शांति की सांस ले सके। लेकिन लगता है, कि विधाता अपने पूरे शस्त्रास्त्रों के साथ उसके विरुद्ध है। माधवकाका ने उसे एक बार समझाया था, कि पिता का पागल होना भाग्य-निर्देश है। उसे चुपचाप स्वीकार कर लेना चाहिए। यही पिछले जनम के पापो का आदेश है।

इस छोटी उम्र मे जो दुख, जो दारिद्र्य उसे भुगतना पड़ रहा है-यह भी क्या भाग्य का अचल निर्देश ही है-यदि ऐसा ही है, तो इसका अन्त कहा होगा ?

आज उसकी आखो मे आंसू जरूर थे। लेकिन भाग-दौडकर पिता को सभालने का उसमें कहीं, किसी तरह का उत्साह नहीं रहा। आज उसे अपने प्रयत्नो की, इस अन्तहीन विराट दुख के प्रति विरोध करने की सारी कोशिशो की तुच्छता अत्यन्त स्पष्ट होकर दिखलायी देने लगी।

आखिर वाध कर विठाने से, भाग्य की दुहाई देने से, या पिछले जनम के पापो का हिसाव-किताव लगा कर ही तो इस विपुल भार को ढोया नहीं जा सकता। फिर क्यो यह दौड़भाग, क्यों यह उछलकूद, क्यों ये तुच्छ प्रयत्न ?

वह किसी वलिष्ट व्यक्ति से टकरा गया। सिर उठाकर देखा, एक अत्यन्त तेजस्वी वयोवृद्ध व्यक्ति सिर पर टिन का पीपा थामे जा रहे हैं। गल्ती से, सम्भवतः अनजाने मे, उनके शरीर का कोई भाग गोपाल से छू गया है। अत्यन्त दुखी होकर प्रचण्ड क्रोधित स्वर मे उन्होने एक अत्यन्त प्रचलित गाली का प्रयोग करते हुए कहा.—अन्धा है क्या ? ओ रे गोपाल ? तो क्या छू ही देगा ? वाप तो पागल है ही। तेरी भी मति-भ्रष्ट हो रही है क्या ? घर मे वो तो यो पागल होकर वैठा है; और तू इधर ये स्वाग रचाता फिरता है।

वैष्णव-शिरोमणी सुकीर्ति-सम्पन्न दुर्गादत्तजी की पूरी वात सुने विना ही गोपाल आगे वढ गया। उसके कानों मे एक वाक्य निरन्तर विभिन्न तरीके से विराट रूप में गूजता रहा'—वाप तो पागल है, तेरी मति-भ्रष्ट क्यो हो रही है ?

जितनी ही वार वह इस वाक्य को विभिन्न रूपो से मन के सामने दुहराता, उतना ही विकराल होकर यह प्रश्न उसकी छाती पर साप की तरह कुडली मार कर, भार वन कर वैठ जाता। इसका एक ही अर्थ वाप के वाद, एक दिन... निश्चित रूप से, उसे भी, उसी तरह, ठीक उसी तरह से .मीखमचन्दजी की तरह. .अपने पिता की तरह .पागल हो जाना पड़ेगा।

और पागल हो जाने के बाद वही तिरस्कार, वही उपेक्षा, वही निरर्थक जीवन, वही दुख का बोझ ढोने की असमर्थ विवशता।

इसी समय रास्ते में एक आदमी और मिल गया। गोपाल को देखकर कहने लगा — अरे, ओ गोपाल, जाकर देख तो, चौक में भीखमचदजी क्या कर रहे हैं?

गोपाल ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप आंसू बहाता हुआ घर की ओर जा रहा था। सोच रहा था — यह आदमी आखिर उससे चाहता क्या है? आपासा चाहे जो कर रहे हों, मैं जाकर क्या करूं? मैं कर ही क्या सकता हूं?

वह आकर चौक में एक ओर खड़ा हो गया। राधामाधव भीखमचदजी को पकड़ने का प्रयत्न कर रहे थे और विकृत-मस्तिष्क पितार्थी जोर-जोर से अश्लील गालियां देते हुए उनसे बच निकलने की कोशिश कर रहे थे। कुछ लोग इस तमाशे को सकौतुक देखने के लिए चारों ओर जमा हो गये थे।

-यह रही बीनणी!' किसी ने कहा, और गोपाल के मुंह पर गुलाल रगड़ दी। आंसुओं से गीली गुलाल चुपड़े जाने का विरोध उसने नहीं किया। न उसने आंख उठाकर यही देखा, कि सामने कौन है?

आखिर राधामाधव ने पागल पर काबू पा लिया। उन्हें गोद में उठाये, वे घर आये। गोपाल उनका अनुसरण करते हुए घर पहुंच गया।

भीखमचदजी चिल्ला रहे थे — ले चलो। मुझे बांध कर मार डालो!

यशोदा को देखते ही रोते हुए कातर वाणी में प्रार्थना करने लगे — मैं तेरी गाय हूं रे। मुझे बचा ले। मुझे बचा ले। मैं तेरे पांव पड़ता हूं। इस राक्षस से मुझे बचा ले।

असीम कौतूहल के निवारण के लिए बाहर जो भीड़ अब तक खड़ी थी, वह धीरे-धीरे छितरने लगी।

सात :

राधामाधव ने भीखमचंदजी के हाथ-पांव फिर रस्सी से बांध दिये। यशोदा से पूछा — रस्सी कैसे खुल गयी भौजाई ?

–पत्थर पर घिस-घिस कर तोड़ डाली।

थोड़ी देर तक तो राधामाधव चुप रहे। इसके बाद उनके मुंह से निकल ही गया —आज तो त्योहार का दिन था ? आज-आज भर के लिए चुपचाप बैठे रहते, तो क्या हो जाता ? इस तरह से भौजाई और इस छोटे-से गोपाल को जो दंड दे रहे हो, उसे भगवान कभी क्षमा नहीं करेंगे।

कहने को तो राधामाधव कह गये। लेकिन तुरन्त जीभ दांतों के नीचे दबा ली। भौजाई के सामने इतनी कड़वी बात शायद वे कहना नहीं चाहते थे। लेकिन आदमी आखिर कहां तक जब्त करे ?

यशोदा ने कुछ भी नहीं कहा। न मन में, न जबान से।

उसे डर जरूर लगा कि देवर की बात कहीं अन्तर्यामी सुन न लें, और कहीं एकतरफा डिग्री जारी न कर दें।

उसका दुख है, निरन्तर बहने वाले आंसू—सुख भी सम्भवत यही है।—और वह इतना है, कि कौन जाने कैसा सुख है, कौन जाने कैसा और कितना दुख है ?

राधामाधव और गोपाल यशोदा के धीरज को समझने की लाख कोशिश करें, लेकिन इस असीम समुद्र की गहराई का अन्दाज उन्हें नहीं लग सकता। उन्होंने जाने अनजाने में कई बार इस समुद्र को उलीचने का प्रयत्न किया है, लेकिन इसका अन्त उन्हें आज तक नहीं मिला। कभी, कहीं, किसी तरह का उद्वेग अशांति नहीं दिखाई दी।

इसकी मर्यादा, आज भी उतनी ही प्रशांत है, जितनी कल थी। आने वाले कल को भी उसमें किसी चंचलता की संभावना नहीं। बड़े से बड़े आंधी-तूफान

उसे विचिलित नहीं कर सके। सारी आपदायें, विपदायें इस हिमालय के ऊपर से ही निकल गयीं। सहते रहने की इस प्रभुता के नीचे कितनी हानि, कितना विनाश छिपा हुआ है, इसका हिसाब यशोदा के पास नहीं। इस अटल वैराग्य के अतिरिक्त यशोदा में शेष क्या बच रहता है, यह प्रश्न अलबत्ता कई लोग कर सकते हैं। उन्हें स्पष्टीकरण देना यदि आवश्यक ही हो, तो कहना होगा, कि यही शून्य की आराधना थी। इस तपस्या की महिमा का समर्थन इतिहास-पुराणों में तो सम्भवत मिल भी जाय। लेकिन प्रत्यक्ष उदाहरण की अल्पता से कई लोग समवेत स्वर से इसे मिथ्या भी घोषित कर ही सकते हैं।

जो घटना सरे-आम अभी-अभी घट चुकी है, वह इतनी दारुण, इतनी दुखदायी है, कि इसकी मीमांसा करने की सामर्थ्य यशोदा में नहीं रही। इसका कारण शायद यह हो, कि अब वह सारे प्रयत्नों की निष्फलता और व्यर्थता समझ गयी। राधामाधव से बोली — देवरजी, घर जाओ। मेरा जी आज अच्छा नहीं है।

उन्होंने प्रतिवाद नहीं किया। जो कुछ हो चुका था, उसके बारे में कोई विशेष कौतूहल प्रकट नहीं किया। अपनी कोई राय नहीं दी। उठ कर जाने लगे तो यशोदा ने गोपाल को लक्ष्य करके इतना ही कहा — तू भी काका के साथ जा।

–आजा भइया।' राधामाधव ने गोपाल का हाथ पकड़ कर अपने साथ ले जाते हुए कहा — चल, होली मंगलाने का वख्त हो रहा है।

गोधुलि-वेला में होली जलाने का मुहूर्त था। प्रत्येक चौक में होली मगलाने की तैयारियां हो रही थीं। आग की लाल-लाल लपटों को देखकर ज्योतिषी वर्ष का भविष्य-फल निकालने में व्यस्त थे। राधामाधव ने जलती होली की फेरी लगाई। हाथ जोड़े। इसी तरह हसती-खेलती हर साल जलती रहने की उससे प्रार्थना की। कुछ पैसे अपने हाथ से तथा कुछ पैसे गोपाल के हाथों होली में भेंट स्वरूप चढा दिये।

ज्योतिषीजी कह रहे थे —वर्षा खूब होगी, धान असीम होगा। राजा अच्छी तरह से राज करेगा। वर्षफल शुभ है।

"गैर" के लोग भैरूंजी के छोटे से मंदिर के आगे समवेत स्वर मे गाने लगे —इये राधामाधव ने बेटो दिये रे, भैरूं भलो रे भलो !

पास ही टूटी हुई हाड़ी का टुकड़ा पड़ा हुआ था। राधामाधव ने उसमे होली के अगारे भर लिये। घर आये। पारो से कहा —पापड़ ले आओ। सेके। खाये।

पारो पापड़ सेकने बैठी।

गोपाल के हृदय मे होली जल रही थी।

—क्या कभी इस पाप से उसकी मुक्ति नही होगी ?— बारम्बार यही प्रश्न उसके मस्तिष्क मे चक्कर काटता रहा।

बाहर लोग होली की प्रदक्षिणा करते हुए अश्लील गीत गाने मे मग्न थे, और समवेत स्वर के ऊपर उठ कर कभी-कभी "जीते रहो" की ध्वनि भी सुनाई दे जाती।

पति की अनर्गल बकवास सुनती हुई यशोदा पास ही बैठी थी। उसके घर मे लड़का है, पति है, पापड़ो की कमी भी नही। लेकिन न यहा होली के अगारे आये, न किसी ने पापड़ सेके, न किसी ने कुछ खाया।

अन्धेरा होने पर यशोदा ने दिया जला दिया। फिर पति के पास आकर चुपचाप बैठ गयी। खाने-पीने की सुध ही उसे न रही।

सचमुच आज यशोदा अपने विश्वास पर सन्देह करने लगी थी। यदि ये कभी भी ठीक नहीं हुए तो ? फिर क्या यह सारी तपस्या निष्फल हो जायगी ?

उसे आज तक विश्वास था, कि एक दिन इन सारी बातों के आगे विराम आ जायगा। मगर समय की अवधि के बारे मे किसी को कुछ भी जानकारी नहीं। धीरे-धीरे पाच साल गुजर गये।

और आज भी वह वहीं है, जहां से पाच साल पहले उसने धीरज सहित पति के साथ कष्टयात्रा प्रारम्भ की थी। तिल भर भी वह आगे नहीं बढ़ पाई। पीछे लौट जाने का कोई मार्ग शेष नही रहा।

• हे भैरूंनाथ ! इस राधामाधव को पुत्र देना। भैरू, जरूर देना।

उसके कष्ट की बात, राधामाधव, पारो, गोपाल पास-पड़ोस के चार आदमी, सभी जानते है। जब कहीं कोई मिल जाता है, तो जाने-अनजाने में उसे नित्य ही सहानुभूती ग्रहण करनी पड़ती है।

अब इस सहानुभूति को कहा सजोकर रखे, यह वह नही समझ पाती। लोग कहते है — इन्हे अस्पताल भेज दिया जाय। और आखो की ओट मे रख कर कह दिया जाय, कि 'दुख का पहाड़ है ही कहा ?' ना, ना, यह नहीं हो सकता। नही होगा।

एक दिन वह खुद कुछ खा कर सो रहे और शांति के साथ पति के सामने ही सुहागिन बनी चली जाय। यह उपाय अत्यन्त सरल है। लेकिन उससे यह भी तो हो नही पायेगा। इसलिए नही हो पायेगा, क्योंकि वह जानती है कि उसके बाद पति की चिन्ता करनेवाला कोई नहीं रह जायगा। गोपाल राधामाधव के पास है, यह ठीक है। लेकिन अनाथ गोपाल को खुद की अनुपस्थिति मे इस पागल पिता के सामने अकेले छोड़ने का साहस उसे नहीं होता।

अनादृत गोपाल अपने पिता की वसीयत मे क्या पायेगा ? उसे उत्तराधिकार में क्या मिलेगा ? अपने पूर्वजों से उसे जो कुछ प्राप्त होगा, उस पर उसका कोई अधिकार नहीं, वह कभी उसे मागने नहीं जायगा ! लेकिन वही उसे मिलेगा। वह चाहे स्वीकार करे, या न करे, उसे इसी उत्तराधिकार को भुगतना पड़ेगा। जीवन भर इस अपमान और लाछना को सहने का कारण ?

इस निरीह बालक के सिर पर इतनी बड़ी मुसीबत लादने के लिए विधाता के पास भी कौनसा स्पष्टीकरण होगा ?

—और क्या सचमुच बाप की तरह चिन्ता और दुख मे घुलता हुआ गोपाल एक दिन पागल नहीं हो जायगा ? उसके बच्चे भी पागल और इस तरह पागलों की एक श्रृखला ही बनती जायगी ?—और एक दिन यह वश इसी तरह समाप्त हो जायगा।

आँखें मूद कर, मन-ही-मन उसने आर्त्त स्वर में परमात्मा से प्रार्थना की — मुझे कुछ भी नही सूझ रहा कि तुझसे क्या मागू ? इतनी ही प्रार्थना है प्रभु, कि तेरी जो लीला है, उसे अगीकार कर सकू—इतनी सामर्थ्य दे दे।

आज तक उसने भगवान के सामने अनेक वार आंचल फैला कर बहुत सारी मिन्नतें की हैं। भाग्य-परिवर्तन के लिए जितनी करुणा के साथ आत्मनिवेदन कर सकी—उसने किया है। लेकिन सम्भवत पिछले जनम का पाप भगवान तक निवेदन पहुचाने में बाधा ही बना रहा। धीरे-धीरे उसने भगवान के सामने भी भीख मागना छोड़ दिया। अब वह चुप रहना चाहती है। खामोश रहने का अभ्यास करती है। जैसे अब उसे किसी से किसी तरह की शिकायत नहीं रह गयी हो। इस स्वयंसिद्ध वैराग्य में उसने स्वय को दीक्षित कर लिया।

तेतीस-करोड़ देवी-देवताओं की पूजा आराधना वह अब भी करती है। पेट काट कर दान-दक्षिणा का आयोजन भी कर लेती हैं। व्रत-उपवास में भी कहीं किसी तरह की कसर नहीं रखती। इन सबसे प्रसन्न होकर सचमुच में यदि भगवान साक्षात प्रकट होकर पूछते —यशोदा, कहो तुम्हें क्या चाहिए?

तो सम्भवत वह अपना सिर बिना ऊपर उठाये ही अभिमान के स्वर में कहती—बहुत बार बहुत-सी भीख मागी।-लेकिन कुछ भी नहीं मिला। अब मुझे कुछ भी नहीं चाहिए।

इसके उत्तर में भगवान क्या कहते, इस बारे में किसी भी कल्पना को प्रमाणस्वरूप सम्भवत स्वीकार नहीं किया जा सकता। लेकिन यदि प्रश्न किया जा सकता, तो करना पड़ता—आखिर यह तप, यह साधना, भगवान के प्रति यह निष्फल निवेदन क्यों?

तो उसका यही उत्तर मिलता —और क्या करूं?

इस पर चुप नहीं रहा जा सकता। सवाल भी बना ही रहता — लेकिन इस निष्फल त्याग का अर्थ?

—मजबूरी, विवशता।

—आखिर कब तक?

—जब तक शरीर साथ दे।

—जिसे तुम मजबूरी कह रही हो, लोग उसे सुनेंगे तो कहेंगे, भारतीय रमणी के ऐसे त्याग के उदाहरण ससार में दुर्लभ है। इस कथा को जान-सुन कर लोग शायद आसू बहायेंगे। तुम्हारे प्रति श्रद्धा प्रकट करेंगे। यह भी हो सकता है, कि कुछ लड़किया, जीवन की दुर्गम राह पार करने का तरीका सीखने के लिए इसे आदि-पाठ के रूप में स्वीकार कर ले।

–भगवान न करे, ऐसा हो।
–क्यों ?
–इसलिए कि त्याग भी मोह का विषय न बन जाय।
–फिर पति के प्रति तुम्हारे सीमाहीन मोह का अर्थ ?
–कहा न, मजबूरी। इस मोह को सजोये बिना कोई उपाय नहीं।

खैर। यह तो अनुमान मात्र की बात है। मगर आगे चल कर यह स्पष्ट हो गया, कि ये अनुमान एक व्यक्ति के रेखा-चित्र के लिए कितने गभीर और गहरे रगो सहित प्रस्तुत है।

गोपाल ने घर पहुच कर, नीचे से ही पुकारा —मा। ओ मां !
यशोदा उठ कर नीचे चली आई। पूछा —बोलो, बेटा ?
–मुझे भूख लगी है। खाने को दो।
–तुमने खाना नहीं खाया ?
–नहीं।
–क्यों ?
–तुमने भी तो नहीं खाया न ?
–ह ? हां ! अच्छा चल, अभी फुलके उतार देती हूं।
–आपासा भी भूखे हैं ?
यशोदा को अब याद आया, वह स्वय तो खैर भूखी भी रह सकती है। लेकिन पागल पति ? आज वह अपने विचारों मे बैठी-बैठी इतनी बडी बात भूल कैसे गयी ?
–अभी बना देती हू।' मा ने कहा — तुम मेरे पास बैठो।

खाना खिला चुकने के बाद मा ने प्यार से समझाते हुए गोपाल से कहा —
–तुम माधवकाका के यहा ही सोना।
–क्यों ?
–इससे वे बहुत खुश होते हैं। वहा तेरी पढ़ाई भी ठीक-से हो जाती है।

गोपाल ने अधिक बहस नहीं की। वह समझ गया, कि मां को डर है कि यहा सोने-उठने पर मुझ पर भी पागलपन का असर हो सकता है।

कौन जाने, वह पागल होगा या नहीं, लेकिन सचमुच वह पागल होना नहीं चाहता। इसलिए उसने मा की बात स्वीकार करते हुए कहा — अच्छी बात है। वहीं सोऊंगा।

हाथ धो-पोंछ कर जाते हुए उसने मा से कहा — जाता हू। सुबह आ जाऊंगा।

बाहर निकलने पर वह सीधे राधामाधव के यहा नहीं जा सका। पता नहीं कैसा सकोच, कैसी दुविधा उसे वहा जाने से रोकने लगी। गली के एक कोने में खडा-खड़ा सोचता रहा — इन दो घरों के अलावा दुनिया कितनी बड़ी है, और इतनी बड़ी दुनिया मे उसके लिए शाति से खडे होने के लिए, थोड़ी सी जमीन भी क्या कहीं नहीं मिलेगी ?

माधवकाका के घर की ओर न जाकर वह पूर्व दिशा की ओर मुड गया ?

अपने अकेलेपन का बोझ लादे-लादे चुपचाप चलता हुआ, वह रेल्वे-स्टेशन पहुंच गया।

होली के त्योहार के कारण स्टेशन पर विशेष भीड़ नहीं थी। फिर भी मध्यम रोशनी के प्रकाश में रेलगाड़ी के इंजन की धीमी सांय-सांय आवाज सुनाई दे रही थी। कुछ यात्री गाड़ी में इत्मीनान से बैठे गपशप कर रहे थे। रात्रि आरम्भ के उस प्रथम प्रहर में 'ए कुली' और 'पान-बीडी-सिगरेट' के नारे सुनाई दे जाते।

गोपाल ने आज तक कभी रेल-यात्रा नहीं की थी। उसके मन में आया, कि इसमे बैठकर यदि वह रात भर घूम आये, तो किसी को भी तो मालूम नहीं होगा। मा समझेगी, मैं माधवकाका के यहा गया हूं। माधवकाका को क्या मालूम, कि मैं घर में नहीं हूं ? और इस तरह से इन सकल दुखों से मेरी मुक्ति हो जायगी। फिर एक दिन बहुत भारी कमाई करके घर लौट आऊंगा।

रेल पर बैठने के लिए टिकिट लेना जरूरी होता है। पैसे उसके पास नहीं हैं, यह जानते हुए भी वह रेल-गाड़ी मे बैठने के लोभ का संवरण नहीं कर सका।

ओर वह एक ऐसे डिब्बे मे जाकर बैठ गया, जहा भीड़ कम थी। चारो ओर सावधानी से देख लेने पर, यह भी निश्चय हो गया, कि कहीं कोई जान-पहचानवाला नहीं है। कोई किसी तरह का सवाल करके, उसे तग नहीं कर सकता, कि 'अरे गोपाल, विना किसी से कहे, विना टिकट लिये, तू जा कहा रहा है?'

उसे लगा, कि अब वह सारी बाधाओं से सारी चिन्ताओं से, सारे दुख क्लेश से मुक्ति पा जायगा!

यह रेलगाड़ी उसे किसी ऐसे प्रदेश मे ले जाकर छोड़ देगी, जहा उसे पूर्वजों के अभिशाप को सिर झुका कर उत्तराधिकार मे ग्रहण नहीं करना पड़ेगा!

किसी पुस्तक मे पढी एक कहानी याद आ गयी। किसी राजकुमार का पिता श्राप-भ्रष्ट होकर निर्जीव पत्थर की मूर्ति वन गया था। लिहाजा पितृभक्त पुत्र सात समन्दर पार करके, राक्षसों की गुफा तक पहुच गया। रास्ते के अनेक कष्ट सहे। उन राक्षसों के पास था, पत्थर वने हुए पिता को पुनर्जीवित करने वाला अमृत। जिस किसी ने यह कथा लिखी थी, उसने प्रमाणित किया था, कि अपने वल-विक्रम से उस राजकुमार को अमृत प्राप्त हो गया। इस तरह उस पितृभक्त वालक की इच्छा पूरी हुई। उसका पिता वापस सजीव होकर उठ वैठा।

—क्या यह सभव नहीं है, कि इस शहर, इस वातावरण और अपने इस घर को छोड़ कर वह कहीं ऐसी जगह चला जाय, जहा उसे ऐसा अमृत हासिल हो सके, कि उसका पिता सारा पागलपन छोड़कर भले आदमी की तरह दिखाई देने लगे।

फिर उससे कोई नहीं पूछेगा, कि वह एक दिन विना किसी से पूछे रात को गाड़ी मे वैठ कर कहा चला गया था?

पिता का उपचार करने के लिए नवनीत मिले या न मिले, वह अपनी इस यात्रा को स्थगित नहीं कर सकता।

इसी समय इजन ने सीटी दे दी और गाड़ी धीरे-धीरे प्लेटफार्म छोड़कर आगे सरकने लगी। कुछ देर तक तो शहर की वत्तिया दिखाई देती रहीं, इसके वाद सव कुछ अन्धकार मे विलीन हो गया।

डिब्बे मे वैठे लोग सोने का उपक्रम करने लगे। खुली खिड़कियों से तप्त हवा के साथ-साथ रेत अन्दर आने लगी। दूर-दूर तक चन्द्रमा की चादनी में रेत के टीले चमकते हुए दिखाई देने लगे। इजन की आवाज उस

निविड़ निस्तब्ध एकान्त मे शोर मचाती हुई, इन यात्रियों को लिये पूरी तेजी से अपने गन्तव्य स्थल की ओर आगे बढती रही।

गाड़ी के दोनो ओर कंटीले झाड़ अपना मस्तक ऊपर उठाये, अपने इस पथिक की ओर उदासीनता से देख रहे थे, जिनकी बिना परवाह किये, यह रेलगाड़ी रोज आगे बढ जाया करती है।

एक वयोवृद्ध सज्जन आराम से बैठ कर तन्मय होकर गा रहे थे—

मन मेरा सन्ध्या रो सुमिरन कर रे।
चोरी जारी, परघर निन्दा, तीन बात सू डर रे।
माता-पिता और गुरूजी री आज्ञा, इनके हुकम में चल रे।
काहे को दिवलो रे, काहे की बाती?
काहे को घिरत संजोयो रे?
तन रो दिवलो रे, मन की बाती,
सतगुरू दिवलो संजोयो रे!
मन मेरा सन्ध्या रो सुमिरन कर रे।

खिड़की से दूर तक फैले हुए धूल-धूसरित रेतीले मैदानों की ओर देखते हुए वह भजन सुन रहा था। पता नहीं क्यों, उसे यह सब बिल्कुल अच्छा नहीं लगा। यदि हिम्मत होती, तो निश्चित रूप से वह इस वृद्ध को चुप रहने के लिए कहता। लेकिन उससे बोला नहीं गया।

वृद्ध ने गोपाल को सम्बोधित करके कहा — ए छोकरे, खिड़की बन्द कर दे भइया, देख तो धूल ही धूल अन्दर आ रही है।

गोपाल ने खिड़की बन्द कर दी।

अब उसे याद आया कि रात को ओढने-बिछाने के लिए भी उसे कुछ चाहिएगा?

कल, जब उसे भूख लगेगी तो वह खायेगा क्या?

दोपहर हो जाने पर, स्कूल जाने के बजाय वह कहा जायगा?

उसे अपनी भूल महसूस हुई। कल सबको मालूम हो जायगा कि मैं घर से भाग गया हूं। मा की चिन्ता की सीमा नहीं रहेगी। कैसे वह आपासा को समालेगी, और कैसे वह मुझे खोजती फिरेगी?

कल माधवकाका सब जगह मुझे ढूढते फिरेंगे, काकी मा भी मेरे बिना मन नही लगेगा।

लेकिन अब चलती गाड़ी मे से लौटना कैसे सभव हो ?

उसने खिड़की के पास माथा टेक कर आखे बन्द कर ली।

जब उसकी तन्द्रा भग हुई तो रात काफी गुजर चुकी थी। हवा सर्द होने लगी थी। उसे कुछ ठड महसूस हुई। डिब्बे मे बैठे सब लोग सो गये थे। पास ही बैठे अर्द्ध-जागृत वृद्ध ने गोपाल को कापते देखकर पूछा — क्यों रे, ठड लग रही है क्या ?

गोपाल से जवाब देते नहीं बना।

वृद्ध ने अपनी चद्दर उसकी ओर बढाते हुए कहा — ले, ओढ ले।

किसी स्टेशन के आ जाने पर गाडी रुक गयी। सफेद कपड़े पहने टिकट-चैकर अन्दर चला आया। एक-एक को उठा-उठा कर उसने सबके टिकट जाचे। वृद्ध के पास भी आया। गोपाल चद्दर मे दुबका, दम साधे, अपने आप को छिपाने का प्रयत्न करता रहा। टिकट-चैकर ने पूछा —यह बच्चा किसका है ? इसका टिकट किसके पास है ?

वृद्ध ने गोपाल को उठाकर कहा —टिकट बता दे, भइया।

उसके मुह से चद्दर उठाते ही टिकट-चैकर ने देखा, लड़का डर के मारे काप रहा है। उसकी आखों से आसू बह रहे है। वह रो रहा है।

टिकट-चैकर ने पूछा —तुम्हारे साथ कौन है ?

–कोई नहीं।

–कहां जाना है ?

–घर। मुझे वापस बीकानेर पहुचा दो।

–मगर तू वहां से आया कैसे ?

–मुझसे भूल हो गयी। अब मै कभी ऐसा नहीं करूगा। मुझे वापस घर पहुचा दो।

–कुछ सामान है तेरे पास ?

–नहीं।

–पहनने, ओढ़ने—बिछाने के लिए कुछ ?

-कुछ भी नहीं।

-पैसे ?

-मेरे पास कुछ भी नहीं है। मुझे मेरे घर पहुचा दो।

-कहा रहता है ?

-बीकानेर मे—भडारी—फलसे के पास।

-किसका लड्का है ?

-भीखमचंदजी का।

-वे ही, जो पागल है ?

-हा, वे ही।

-तुझ पर भी हवा वह गयी है क्या ?

गोपाल ने जवाव नहीं दिया। उसके गालो पर आसू वहते रहे।

-घर से भाग कर आया है क्या ?

-अव कभी नहीं करूंगा। मुझे मेरे घर पहुंचा दो।

-अच्छी वात है। अगली स्टेशन पर उतर जाना। सुवह गाड़ी मिलेगी। दोपहर को वापस वीकानेर पहुंच जायगा। आगे के लिए ख्याल रखना, ऐसा पागलपन मत करना। समझे ?

गोपाल ने सिर हिला कर सूचित कर दिया कि वह इस वात को अच्छी तरह से समझ गया है। आगे से ऐसी भूल कभी नहीं होगी।

अगले स्टेशन पर टिकट-चैकर ने रेल्वे अधिकारियों मे से अपने मेल-जोल के किसी आदमी से कह कर गोपाल को सुवह की मालगाड़ी से गार्ड के डिब्बे मे बिठा कर भेजने की व्यवस्था कर दी। चार आने के पैसे भी दे दिये। कहा—सुवह भूख लगे तो खा लेना। जब तक माल-गाड़ी न आ जाय स्टेशन पर ही वेटिंग रूम मे सो जाना।

धरती पर लेटे-लेटे गोपाल सोचता रहा —मैने यह नादानी, नासमझी, बेवकूफी क्यों की ? सचमुच क्या मेरा दिमाग खराव हो गया है। कहीं मै पागल तो नहीं हो गया हूं ? कल सवके सामने क्या जवाव दूंगा ?

-नहीं। मुझे एक अच्छा लड़का वनना है। पढने मे सवसे ज्यादा तेज होना है। मै अब किसी से मिलूंगा-जुलूंगा ही नहीं, कि कोई मुझे पागल कहे।

पागल का लड़का कहे। माना, मेरे पिता पागल हैं। लेकिन मैं पागल नहीं हो सकता! अब मैं कभी 'भागूं-भागूं' नहीं करूंगा। कभी दुखी नहीं होऊंगा। कभी रोऊंगा नहीं। पिता के पागल हो जाने पर भी मैं क्या कर सकता हूं? जब कुछ भी नहीं कर सकता, तो इसे ही स्वीकार कर लूंगा।

मुझे जो कुछ मिला है, उसी में से मुझे रास्ता निकालना होगा।

अब मैं अच्छा और समझदार लड़का बनूंगा। मुझे सुमति आ गयी। आज मेरी आंखें खुल गयीं। अब मैं कभी ऐसा कोई काम नहीं करूंगा, कि लोग मुझे पागल का बेटा कहें। मैं हर-एक अच्छा काम ही करूंगा। फिर लोग भूल जायंगे कि मेरे पिता पागल थे। मैं जब बहुत अच्छा लड़का बन जाऊंगा, तो सभी जस गायेंगे। कहेंगे —गोपाल जैसा लड़का कोई नहीं है।

आठ :

यशोदा मंदिर से दर्शन करके लौट आई। आठ बजने आये, लेकिन अभी तक गोपाल घर नहीं लौटा। आज फिर एक बार गोपाल के बातूनीपन, राधामाधव के अति-लाड़-प्यार और पारो के बचपन की समालोचना वह कर चुकी थी।

इसी समय सामने से राधामाधव आते दिखाई दिये। मगर गोपाल साथ में नहीं था।

राधामाधव ने आते ही कहा'—भौजाई, आज शायद मैं वैद्यजी के यहां नहीं जा पाऊंगा। गोपाल को भेज कर दवा मंगवा लेना। मैं एक काम से बाहर जा रहा हूं। लौटते-लौटते सन्ध्या हो जायगी।

—गोपाल तो अभी तक आया ही कहां है? स्कूल जाने का वक्त भी हो रहा है।

—गया कहां?

–रात आपके यहा ही तो सोने के लिए गया था ?

–मेरे यहा ? रात को ? नही तो ! गोपाल यहाँ खाना खाने का जिद्द करके रात ही चला आया था। फिर वापस लौटा ही नहीं।

–तो फिर गया कहां ?

इसी एक बात मे यक्ष का विराट प्रश्न सन्निहित है। जिसकी मीमांसा सहज नहीं। उसमे कितनी जानकारी हासिल करने की उत्सुकता है, कितनी व्याकुल पुकार है, कितना भय है!

–तुमने तो चिन्ता मे डाल दिया भौजाई। राधामाधव ने कहा — अब, आज गेबर के दिन उसे कहां ढूंढ़ू ? किसी दोस्त-मित्र के यहा तो नहीं गया ?

यशोदा ने राधामाधव की बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह शून्य मे ताकती रही। हाय, उसने उस अबोध बालक को रात के समय अकेले जाने ही क्यो दिया!

राधामाधव ने अपने प्रश्न का उत्तर स्वयं ही ढूंढ निकाला। बोले — अच्छी बात है। मै उसे खोज लाता हूं। आते वक्त दवा भी ले आऊंगा। लगता है, कि आज भी उस काम पर नहीं जा सकूंगा। खैर, तुम चिन्ता-फिकर मत करना। बच्चा है, किसी के साथ चला भी गया हो। आने पर डराना-धमकाना मत।

बिना खाये-पिये सम्भव असम्भव तमाम मित्र-परिचितो के यहा जाकर राधामाधव पूछ आये — गोपाल यहा आया था क्या?' गोपाल को तुमने देखा?' पता नहीं कल रात को कहा चला गया?' मां तो सोच मे मरी जा रही है।' नहीं देखा? खैर, फलानेजी के यहा जाता हू। शायद वहा चला गया हो।' बड़ी चिन्ता मे डाल दिया उसने।'

दोहपर की गर्मी बढ़ने लगी। लेकिन गोपाल के बारे मे कोई जानकारी नहीं मिल सकी। अब तक तो इस घटना को उन्होंने बालक के सहज उपद्रव के रूप मे ही लिया था। लेकिन स्थिति कुछ अधिक विषम दिखाई देने लगी। भूखे-प्यासे, हारे-थके, राधामाधव मन को यही तसल्ली देकर घर की ओर लौटने लगे—शायद अब तक घर पहुच गया हो'

इसी समय उन्होंने देखा, नंगे पाव, मुंह लटकाये, गोपाल सड़क के ठीक बीचोंबीच धीरे-धीरे चला आ रहा है।

तुरन्त दौड़कर उसके पास पहुंचे। दूर से ही पुकारा — अरे ओ गोपाल ? कहां गया था रे ? बिना किसी को कहे-सुने इस तरह कोई जाता होगा ? हूं ?

गोपाल ठिठक कर खड़ा हो गया। इसी प्रश्न का जवाब ढूढने मे उसने सारी रात जाग कर बिता दी थी, और सुबह से अब तक उसे कोई समाधान नहीं मिल रहा था।

झूठ बोलने का अभ्यास न होने के कारण ही सम्भवत वह कोई अनुकूल बहाना नहीं बना सका। माधवकाका का हाथ पकड़ कर रो दिया।

–रोना-धोना बाद मे। पहले यह बता, रात को गया कहा था ?

–रेल मे

–कहा ?

–बहुत दूर

–किसके साथ ?

–अकेले।

–क्यो ?

–पता नहीं

–फिर वापस कैसे आया ?

–एक भला आदमी रेल मे मिल गया था। उसने मुझे उतार कर मालगाड़ी के गार्ड के डिब्बे मे बिठा कर यहा रवाना कर दिया।

–रात भर इसी तरह पड़ा रहा ? कुछ खाया-पिया कि नहीं ?

–नहीं। गाड़ी में एक बूढा आदमी मिल गया था। उसने मुझे चद्दर ओढने के लिए दे दी थी। बाद में रेलवालो के ही कमरे मे सो गया। सुबह की गाड़ी मिली। उसी से आया हू।

–चल, घर चल। उस बूढे आदमी के दाढी थी ?

गोपाल को ठीक-ठीक याद नहीं था। बोला —शायद थी। नहीं, नहीं थी।

–इससे पहले उसने और कोई बात की ?

–नहीं। पहले तो वह भजन गा रहा था।

–खैर, सकट टल गया। सीधे घर चल। वहा भौजाई रो-रो कर प्राण त्याग रही है। मुझे भी बड़ी जोर से भूख लगी है। चलो जोगमाया ने रक्षा की। आगे से रात-बिरात को घरसे बाहर मत निकला कर।

गोपाल को देखते ही यशोदा ने उसे गले से लगाकर अधीर-स्वर में पूछा – कहा चला गया था रे तूं ?

इस जटिल प्रश्न की मीमांसा राधामाधव ने कर दी। अत्यन्त गंभीर मुख बनाकर तत्व की बात उन्होंने यह बताई — भौजाई, समझ लो भाग बड़े थे। गोपाल बाल-बाल बच गया। रात को कोई आकर इसके सिर पर भभूत छोड़ गया था। रेल में साथ ले गया। यह तो खैर हुई, कि इसे होश आ गया और यह वापस लौट आया। नहीं तो तुम्हे नहीं मालूम भौजाई, पिछले महीने की ही तो बात है। मालूम है, वह सीताराम कन्दोई का लड़का कैसे घर से गायब हो गया। किसी को खबर ही नहीं लगी। पुलिस को बोरे मे बन्द मिला। एक साधु पकड़ ले गया था, चेला बनाने के लिए!

किवदन्तियों के रूप मे इस तरह के रोमाचक काण्डो की चर्चा यदा-कदा सुनी सबने है। इसलिए यशोदा ने एकबार और जोर से गोपाल को छाती से लगा लिया। 'मेरे लाल, मेरे गोपाल', फुसफुसाती हुई, वह उस के सिर पर मुंह रखकर आसू बहाती रही। मन ही मन भगवान को उसने लाखो प्रणाम करके उनकी कृपा के लिए कृतज्ञता प्रकट की।

–यह तो हमारे भाग्य तेज थे भौजाई—सो गोपाल वापस घर लौट आया' वर्ना दो दिन की भी देर हो जाती, तो पता ही नहीं चलता। इन साधुओं का क्या भरोसा ? ये चाहे तो आदमी को मक्खी बना कर डिबिया मे बन्द करके रख दे।

माधवकाका के तर्क गोपाल के बचाव के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण थे! गोपाल अपनी बात भूलकर माधवकाका से किसी और रोमाचक किस्से को सुनने की आशा मे मुंह बाये, उनकी ओर देखता रहा।

इन प्रसंगो की चर्चा करना राधामाधव के लिए बड़े भारी आत्मगौरव का विषय है। लिहाजा, पास ही चौकी पर बैठते हुए, उन्होंने अपनी बात का सिलसिला चालू रखा — भौजाई, मैंने तो यह सब किया है न, इसलिए इन पाखण्डियों की एक-एक हरकत जानता हू। यहा एकबार एक अघोरी आया था। उस का नियम था कि वह गुरुपूर्णिमा के दिन, एक नया शिष्य दीक्षित करता। यदि कोई अपनी मर्जी से उनकी सेवा मे आकर हाजिर नहा हो जाता; तो तंत्र-मन्त्र से किसी न किसी को बुलवा ही लेता। फिर उसके कान मे ऐसा मंत्र फूंकता कि उसकी पिछली सारी स्मृति हर लेता। फिर तो बस.। अपनी शिक्षा उसके मान मे फूंक देता।

मैंने तो अपनी आंखों से देखा है एक थे देवीदयाल। उसको उसने बना लिया अपना चेला। घरवाले हा-हा खाने लगे। अघोरी के पास पहुच कर बड़ी मिन्नतें की। कहा — महाराज, एकाएक लड़का है। अभी व्याह हुआ है, बख्श दो। लेकिन बाबा टस से मस नहीं हुआ। सिर हिला कर बोला —उसकी मजा ' वह वापस घर जाना चाहे तो चला जाय।

घरवालों ने देवीदयाल से बड़ी आरजू की। बड़ी खुशामद की। बहुत गम झाया। लेकिन वह तो परम-ज्ञानी हो गया था। अपनी चौदह साल की बहू तक को नहीं पहचान सका। आखिर लोग रो-धो कर विदा हो गये। एक बार—

खैर, जाने दो इन बातों को। गोपाल कहता है, उस बूढे के दाढी नहीं थी। लेकिन मुझे अच्छी तरह से मालम है, उसके दाढी जरूर होगी। क्यों रे, उसके सीतला-माता के दाग थे कि नहीं? माथे पर एक ओर चोट का निशान भी जरूर होगा? गले मे त्रिशूल का जतर भी होगा।

गोपाल ने उस वृद्ध को इतने ध्यान से देखा नहीं था। लेकिन गधामाधव की बातों के प्रभाव मे आकर उसने हा भर ही ली।

—बस। समझ गया। वही होगा। मै उसे अच्छी तरह जानता हू। देख लेना, भैरवानन्द को कह कर मूठ न चलवा दू हरामजादे पर, तो ! अपने को पता नहीं, क्या समझता है? भैरवानन्द के तो पांवों की धूल का मुकाबला भी वह नहीं कर सकता। सोचो तो भौजाई, कहा भैरवानन्द और कहा वह बूढा गधा !

'जानबूझ कर उसने गोपाल पर हाथ साफ किया है। मै सब समझता हूं। वैसे वह भैरवानन्द का बड़ा भाई बनता है। मठ की गद्दी पर, कहने लगा, मैं ही बैठूंगा। मैंने कहा, पहले भैरवानन्द जितना ज्ञान हासिल कर लो, फिर ऐसी बात करना। उसी दिन से मुझसे नाराज है। इसीलिए उसने बदला लिया होगा। मैं उसे छोड़नेवाला नहीं हू। छि छि बच्चे से बदला लेने चला है ! अब वह नहीं बच सकता। मैंने सोचा, अब इन प्रपंचों से अपना क्या लेना देना? लेकिन देखता हू, यह यों नहीं मानेगा।

अब मै चल दिया भौजाई। आज एक बहुत जरूरी काम है। 'गैर' मे इसीलिए तो नहीं गया। लक्ष्मीनारायणजी कहने लगे, कि वे मेरे बिना जायगे ही नहीं, थोड़ा उनसे भी मिल आऊ। इतना कहते हैं तो, नहीं जाना अच्छा नहीं

दीखेगा। भईजी की दवा भी लानी है। कहीं वैद्यजी भी 'गैर' में नही चले गये हों। खैर, कोई वात नही। मैं वहा भी जा आऊगा। अच्छा, चल दिया। हा, एक वात तो भूल ही गया। माताजी के नारियल जरूर वधार देना। भूलना मत। पाच तावे के पैसे गोपाल के सिर से उंवार कर डाकोत को दे देना। एक जन्तर मैं ला दूंगा। वह इसके गले में डाल देना। वस, फिर कोई इसका कुछ भी नहीं विगाड सकता। खैर, अव नहीं रुक सकता। वडी देर हो गयी। लक्ष्मीनारायणजी के यहा भी जाना ही होगा।

कहते-कहते वे रवाना होने लगे। जाते-जाते गोपाल से कहते गये — रात-विरात अकेले वाहर मत आया-जाया कर।' इसी समय उन्हे याद आया, कि इस वक्तव्य से प्रस्तावित जंतर की महिमा कुछ कम हो सकती है। इसलिए भूल सुधारते हुए कहने लगे — जन्तर वाधने के वाद तो कोई खतरा नहीं। अच्छा चलता हूं, भौजाई। वडी देर हो गयी। आज ही भैरवानन्द के पास जाऊगा। ऐसी मूठ चलेगी, ऐसी मूठ चलेगी कि पत्थर में से खून निकलने लगेगा! हां!

उनकी अन्तिम वात शायद कोई सुन नही सका। इसके दो कारण थे। एक तो यह, कि आगे की वात वे मन ही मन कह गये थे। दूसरे, वे देहलीज लाघकर वाहर जा चुके थे।

इसी समय ऊपर से आवाज आई —पानी . पानी. .पानी!

गोपाल को छोडकर, यशोदा पानी का ग्लास लेकर पति के पास पहुंच गयी।

मन-ही-मन अपना सकल्प दुहराते हुए गोपाल निश्चय कर रहा था:— मैं एक भला और समझदार आदमी वनूंगा। खूव मन लगा कर पढूंगा। मेरी कभी कोई निन्दा नही करेगा।

यशोदा के वापस लौटने पर गोपाल ने मां के पास वैठते हुए कहा:— मा, मुझे सुमति आ गयी है। अव मै खूव मन लगा कर पढूंगा। अव मै कभी फालतू की वातों की ओर ध्यान नहीं दूगा।

मा ने वालक का उत्साह भंग नहीं किया। वोली — ऐसा ही हो, मेरे लाल। उसी दिन की तो प्रतीक्षा कर रही हूं।

-तुम मुझे रोज सवेरे जल्दी उठा देना।

–उठा दूगी ।

–मै सोने के लिए माधवकाका के यहा नहीं जाऊगा ।

–तेरी मर्जी । मत जाना ।

–अब तू फिकर मत करना, मा । जब मै होशियार हो जाऊगा, बड़ा हो जाऊगा, तब मै तुम्हारी मदद करूगा । तुम्हें खूब सुख दूंगा ।

–ऐसा ही हो, बेटा ।

–आज मै बहुत थक गया हू । भूख लगी है । खा-पी कर सोऊगा ।

–आ ।

मा ने खाना परोस दिया । ठडा हो गया था । पूछा — गरम कर दू ?

–नहीं । बहुत जोर से भूख लगी है । खा लूगा ।

खा-पी कर वह सोने के लिए अन्दर के कमरे मे चला गया । लेटे-लेटे वह यही सोच रहा था, कि मा को मेरी बातों पर विश्वास कैसे होगा ? वह तो हमेशा चिन्ता ही किया करती है । इसी तरह घुलती रहती है ।

एक दिन पढ़-लिख कर, विद्वान बन कर, खूब कमा कर, मैं घर का सारा दुख मिटा दूगा । फिर कोई नहीं कहेगा, कि पागल का लड़का भी पागल ही निकला ।

इसी तरह के विचार करते-करते उसे झपकी आ गयी ।

बीच-बीच में अर्द्ध निद्रावस्था के सपनों से चौंक कर वह उठ बैठता ।

सपने में उसने देखा

वह बड़ा हो गया है । पढ़-लिख कर परम विद्वान हो गया है । उसके चारों ओर पुस्तकों का अम्बार लगा हुआ है । आखों पर एक बड़ा-सा चश्मा भी है । एक विशालकाय भारी टेबल पर बहुत सारे कागज रखे हुए हैं। वह ढेरों कागज लिख चुका है । अचानक उसे बहुत सारी अंग्रेजी आ गयी है । वह फर्राटे से बोलने लगा है । लोग उसकी ओर आश्चर्य से देख रहे हैं । कई लोग उसे सलाम करके, सामने की कुर्सी पर बैठ जाते हैं । घर के बाहर नई मोटर-गाड़ी खड़ी है । गली के तमाम बच्चे मिल कर उसका हार्न बजा रहे है । क्षुब्ध होकर वह टेबल से उठ खड़ा होता है । बच्चों को डाट कर कहता है —तुम

सब पागल तो नहीं हो गये हो? यह क्या कर रहे हो? तुमसे शांति से नहीं बैठा जाता?

उसकी आंख खुल गयी।

सोने की कोशिश करने पर फिर उसने देखा —

एक बड़े भारी वायुयान की अगली सीट पर बैठा वह उड़ रहा है। आकाश के बीचोबीच तैर रहा है। नीचे चींटियों जैसे आदमी उसकी ओर हैरत की नजरों से देख रहे हैं। देश का सारा भूगोल नक्शे की तरह दिखाई दे रहा है। छोटे-छोटे पहाड़, पतली पतली नदियां। खिलौनों जैसे मकान। उसका हवाईजहाज धरती से ऊपर, और अधिक ऊपर उठता जा रहा है। पीछे की सीट पर हेड-मास्टरजी बैठे डर के मारे कांप रहे हैं। बारम्बार विनती करके कह रहे हैं —गोपाल, पागल हो गये हो क्या? हम बहुत ऊपर चले आये। गिर गये तो प्राण नहीं बचेंगे! वापस लौट चलो। लेकिन वह सुनता नहीं। उसका जहाज आकाश में छाई हुई धुंध को चीरता हुआ ऊपर उठता ही जा रहा है। इसी समय मानो किसी ने उसके कंधे पर हाथ रख कर जोर से कहा.— पागल हो गये हो क्या, गोपाल?

फिर आंख खुल गयी।

चारों ओर देखा, कोई नहीं था।

फिर सपने की लीला —

वह पढ़ने बैठा ही है, कि माधवकाका आ गये। बोले — गोपाल बाबू, अब तू अंग्रेजी में दुर्गा-स्तोत्र लिख दे। विलायतवाले भी क्या कहेंगे, कि उन्हें भी मुक्ति-मार्ग मिल गया।

पारो ने कहा:-- गोपाल बाबू, अब तो तुम्हारी दाढ़ी-मूंछे भी ऊगने लगी हैं। अब ब्याह कर डालो। छम-छम करती हुई दुल्हन आ जाय।

मां ने कहा-- बेटा, जाकर दवा तो ले आओ। तुम्हारे आपासा की तबीयत ठीक नहीं है।

इसी समय आपामा चिल्लाये — गोपाल, तूं किसी की बात मत सुन।

गोपाल मानों परेशान होकर चीख उठता है — मुझे अपना काम करने दो। मेरा दिमाग मत चाटो।

पता नहीं कैसे, इस स्वप्न मे एक अस्पष्ट-सी वात कहा से और कैसे आकर सम्मिलित हो गयी।

उसने देखा —

वह एक सडक पर चुपचाप चला जा रहा है। इसी समय कहीं से एक चिडिया उडते-उडते आकर उसके सिर पर बैठ गयी। साथ ही राजाजी खुद आकर उसका हाथ पकड कर अपने साथ ले गये। राजकुमारी का व्याह उसके साथ हो गया और आधी राजगद्दी उसे मिल गयी। गद्दी पर बैठते ही उसने हुक्म दे दिया कि उसके पिता को कोई पागल नहीं कह सकता। दुनिया मे कोई पागल नहीं है। जो पागल है, उनके रहने और इलाज करवाने के लिए वढिया से वढिया प्रवन्ध राज्य की ओर से किया जायगा।

इसी समय किसी के दो भयकर फौलादी हाथ, उसके गले के चारों ओर लिपट जाते हैं और उसका दम घुटने लगता है।

स्वप्न भग हो गया।

प्यास के मारे कठ सूख गया था। रात का दूसरा प्रहर आरम्भ हो रहा था। मदिर मे पीले रग का मध्यम प्रकाश फैलाता हुआ दीपक जल रहा था। मा वैठी माला फेर रही थी।

उसने पुकारा — मां!

–हा वेटा।

–प्यास लगी है। पानी पीऊंगा।

यशोदा ने उठ कर पानी पिला दिया। कहा — जा, सोजा। रात वहुत होने आई।

–अव वस। अव नींद नहीं लूगा। पढूगा।

–अच्छी वात है। उधर लालटेन पडा है। वत्ती तेज कर ले। नींद आने लगे, तो धीमी करके सो जाना।

–और तुम?

–यह अध्याय समाप्त कर लूं। फिर मै भी सो जाऊगी।

दुसह्य सपनों से वचने के लिए गोपाल सारी रात पढता रहा।

गीता का अध्ययन समाप्त करके मा अपने वेटे के पास ही सो गयी।

कोतवाली की घड़ी के टंकोरे रात की गभीरता को चीरते हुए सुनाई दिये। गोपाल गणित के अचल नियमों को याद कर रहा था। मा ने करवट बदली। गोपाल को जागते देखकर पूछा — सोया नहीं गोपाल? कितने बजे होंगे?

–दो।

–अब सो जा।

–नहीं। नींद नहीं आ रही है। अभी पढ़ूंगा।

–कल पढ़ना। रात बहुत होने आयी। अब सो जा।

–दिन भर सोता ही तो रहा हूं।

–मेरे पास आ, मैं सुलाती हूं।

–नही मा, मैं पढने मे बहुत कमजोर हू। बडी मेहनत करनी होगी। बिना कष्ट उठाये विद्या थोडे ही आती है?

मां ने पुत्र की बात का कोई विरोध नहीं किया।

गोपाल ने कहाः— मा, तुम मेरे पास बैठो। माला फेरो, या भजन ही गाओ। फिर मुझे नीद नहीं आयेगी।

–अभी तो कह रहा था, कि नींद नहीं आ रही। अब कहता है, कि मैं पास बैठी रहूं, तो नींद नहीं आयेगी। सोजा बेटा। रात बहुत अधिक हो गयी है। जागता रहा, तो दिन भर माथा भारी रहेगा।

मा की इस बात में गोपाल ने कुछ आत्मप्रशंसा अनुभव की। बोला —मैंने विद्वान बनने की प्रतिज्ञा की है, मा। आज तो पहला ही दिन है। अब रोज जल्द ही सो जाया करूंगा। किताबों मे लिखा है, कि आधी रात के बाद जो पढाई होती है, वह कभी भूली नहीं जाती। तुम्हें मालूम है मा, चम्पे ने पिछली बार कैसे इम्तिहान पास किये थे? पहले नम्बर आया था! उसकी मा ने एक मास्टर रख दिया था—उसे पढाने के लिए। पढ़-लिख कर, मेहनत करके उसने दो सालों का इम्तिहान साथ ही पास कर लिया। बस, पूरा एक साल बच गया। मास्टर रखने से ही तो पढाई आ नहीं जाती। वह आती है, मन लगाकर पढ़ने से। देख लेना, इस बार में भी दो क्लासों की परीक्षा एक साथ ही दूंगा। चम्पा जब पढ़ता था, तो कहते हैं, अपनी चोटी रस्सी से बाध कर, खूंटी मे गाठ लगा देता। फिर नींद आती ही नहीं। आती भी, तो चोटी के खिचते ही आख खुल जाती।

मां उस अपरिचित बालक के इस अद्भुत पराक्रम को सुनती रहीं। सरल स्वभावी यशोदा ने अपने पुत्र के इस उग्र उत्साह की बात मे मीन-मेख निकालना अशुभ समझा, या निरर्थक, यह तो वही जाने। लेकिन मुंह-धोकर जब वह भी उसके पास आकर बैठ गयी, तो यह प्रमाणित हो गया, कि तपस्या के फलित होने मे किसी को तनिक भी सन्देह नहीं है। इसलिए बेटे के साथ वह भी किसी दूसरी परीक्षा की तैयारी के लिए गीता खोल कर पढने बैठ गयी।

इसी तरह करते-करते एक दिन मां-सरस्वती अत्यन्त प्रसन्न होकर मास्टरजी के माध्यम से गोपाल को एक साथ दो दर्जे ऊपर चढाने की सिफारिश कर देगी, और इसी तरह गीतापाठ करते-करते यशोदा ससार के सकल सकटों को विरत भाव से सहने का अभ्यास कर लेगी।

गणित के जटिल नियम याद करते-करते गोपाल बीच-बीच मे कई बार अस्थिर-सा हो जाता। बारम्बार उसे प्यास लगती। पानी पीता, फिर मा को एकाग्र चित्त से गीताध्ययन मे देखता, तो उबासी लेता हुआ, फिर उन्हीं पुराने नियमों को याद करने, अभ्यास करने मे दत्तचित्त हो जाता।

दो घटे बाद, मां उठकर घर के काम-धधे मे लग गयी।

भजन गाते समय उसने ख्याल रखा, कि जोर से गाने पर कहीं गोपाल की पढाई में किसी तरह का व्यवधान न पड़े।

सुबह होते-होते तपेली हाथ मे लेकर, बाहर जाते हुए यशोदा ने गोपाल से कहा — मै जरा छाछ ले आती हू, बेटा। ऊपर तेरे आपासा है, शायद उठ गये हों। ध्यान रखना। मैं अभी वापस आती हू।

गोपाल अब तक सचमुच थक गया था। मुक्ति का यह स्वर्णिम अवसर छोड़ना नहीं चाहता था। इसलिए तुरन्त पोथी बन्द करके बोल उठा — लाओ, मैं छाछ ले आता हू।

–तुम अपनी पढाई करो। मैं अभी आ जाऊंगी।

गोपाल ने जाने के लिए जिद्द करते हुए, हस कर कहा — मा की सेवा किये बिना मेहनत फल नही देगी! लाओ तपेली मुझे दे दो। तुम्हारे पास काम की कमी नहीं है। वही करो।

मां के हाथ से तपेली लेकर वह बाहर की ओर भाग गया।

नौ :

माधवकाका की गली से गुजरते वक्त आज गोपाल को शेर-बब्बर से जरा भी डर नहीं लगा। कुत्ता अब इस बालक से सम्भवत: अच्छी तरह से परिचित हो चुका है। इसीलिए वह उसके पीछे-पीछे कूं-कूं करता हुआ, दुम हिला कर प्रेम जाहिर करता हुआ, चलने लगा। गोपाल ने ध्यान से देखा ..उसकी एक टाग टूटी हुई है, और इसलिए वह लंगड़ा रहा है। आज शायद किसी ने उसे बुरी तरह से पीटा है। जगह-जगह डंडे के निशान दिखाई दे रहे हैं। गोपाल ने झुक कर, उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा —शेरबब्बर, जिस किसी ने आज तेरे पर हाथ उठाया है, माधवकाका को कह कर उसे ठीक न करवा दू, तो मेरा नाम गोपाल नहीं।

घर पहुंचने पर, खटखटाने पर, पारो काकी ने आकर दरवाजा खोल दिया।

शेर-बब्बर गली के एक कोने में बैठकर अपने घाव को चाट-चाट कर, उसका उपचार करने की व्यवस्था करने लगा।

पारो ने गोपाल को देखते ही अन्दर बुलाकर कहा — इधर आ तो। एक बात कहनी है।

अर्थात पारो काकी उसी का इन्तजार कर रही थी। अधीरता से बोली — तूं तो मेरा राजा बेटा है न?

गोपाल इस स्पष्ट चापलूसी का अर्थ नहीं समझ सका। फिर उसे याद आया, कि उसकी प्रशंसा में कहे जाने वाले ये नपे-तुले शब्द किसी असम्भव कार्य को पूरा करवाने के लिए ही इस्तेमाल किये गये हैं।

पारो ने आगे कहा —तूं तो अपनी काकी का कहना हमेशा मानता है न?

-चिट्ठी लिखनी है? लिख दूंगा।

-नहीं, वह फिर कभी लिखना। इस समय तो तुझे मेरा एक काम कर देना होगा।

-कर दूंगा।

–बाजार जाकर थोड़ा-सा दही ला देना ?

गोपाल ने हस कर पूछा — तुम अपना दही बेच आई क्या ?

–यह सब बाद मे बताऊगी। ये ले पैसे। पहले जाकर दही ले आ।

–पहले बात बताओ। फिर ला दूगा।

–आज उनका वह लाडला कुत्ता घर में घुस आया था। दूध दही जो कुछ था, सब मे मुह डाल गया। जाकर दही मोल ले आओ। मा को कहना मत। न अपने काका से। मेरा इतना-सा काम कर दे। राजा बेटा।

इस गुप्त दुरभिसधि मे पति के व्यंग्यबाणों से बचने की पारो की जो व्याकुलता छिपी हुई थी, अथवा अपनी लापरवाही के प्रति जो लज्जा स्पष्ट थी, वह तो गोपाल की समझ मे शायद न भी आई। लेकिन काकी के इस काम को कर देने मे उसे कही किसी तरह की कठिनाई दिखाई नहीं दी। बोला — लाओ वर्त्तन दे दो। ले आऊगा।

–जल्दी आना।' कह कर पारो ने भगोना और पैसे गोपाल को दे दिये।

किसी सुरुचि सम्पन्न, धनाढ्य व्यक्ति ने अपनी कीर्ति अक्षय करने का अन्य कोई उपाय न देखकर, नगर के केन्द्र-स्थान मे एक चौकी बनवा दी है। पचास-साठ साग सब्जी वाले बड़े मजे मे अपनी दूकान लगा सकें, इतनी जगह है। सेठ चतुर्भुजजी ने जिस लक्ष्य से पैसे खर्च करके, यह बाजार बनवाया था, वह पूरा नहीं हो सका। क्योंकि थोड़े समय में ही चतुर्भुज मार्केट का सक्षिप्त नामकरण 'चोट्टा' हो गया, और सिवाय चतुर्भुजजी के परिवारवालों के, किसी ने इस ओर ध्यान भी नहीं दिया, कि इस एकमात्र मार्केट की प्रतिष्ठा किसने कब और क्यों करवाई थी।

खैर, बीकानेर के अत्यन्त व्यस्त स्थानों का पर्यवेक्षण करने मे दिलचस्पी रखनेवालों को, वहा पहुचने पर चोट्टे के दर्शन अवश्य करने चाहिए।

मदिरो की ओर जानेवाली महिलाओं की भीड़ सुबह-सुबह काफी अच्छी मात्रा में एकत्रित होकर धर्म-सचय करने के लिए इसी रास्ते से गुजरती है। इसी बहाने से लौटते वक्त घर-गिरस्ती की चीजों का भी खासा सकलन हो जाता है। ताजा दही, दूध, साग सब्जी, घी तथा इसी तरह की अनेक चीजो का एक ही स्थान पर सुलभ होना लोगों की सुविधाओं के अनुकूल है।

साथ ही दूकानदारों द्वारा जनता की अति-सेवा करने के लोभ ने इस जगह को पर्याप्त सकुचित कर रखा है।

और इससे इस चोहट्टे का महत्व वढा ही है; कम नहीं हुआ। सूरज निकलते-निकलते दुकानदारों का अधिकाश सामान विक जाता है। वाकी वचे हुए सामान को खरीदने की ग्राहकों की नीयत नहीं होती; इसलिए वाद मे वे कम आते ह। दुकानदारों को वाकी सामान वेचे विना चैन नहीं, लिहाजा वे वैठे रहते हैं।

गोपाल जव चोहट्टे पहुंचा, तव तक वाजार का सारा दही विक चुका था। फिर भी दो एक मालिनें दही की वड़ी-वड़ी मिट्टी की परातें लिये किसी जरूरतमन्द ग्राहक का इन्तजार कर रही थीं। एक वुढिया के पास जाकर, दही कैसा है, यह जानने के लिए, उसने नमूना मागा।

दही वेचनेवाली ने विना कुछ कहे थोड़ा-सा दही गोपाल की हथेली में रख दिया।

चखने पर उसे सहज ही मालूम हो गया, कि दहीं नितान्त खट्टा है। लिहाजा थू-थू करते हुए उसने— छि खट्टा थू,' कह कर वुढिया के दही की समालोचना कर दी; और पास ही वैठी दूसरी दहीवाली से नमूना मागने के लिए उसने अपना हाथ फैला दिया।

दही उसे मिल गया। पहली मालिन अपने ग्राहक को हथियाने के अपराध मे पड़ोसन पर वरस पड़ी। लगे हाथ गोपाल को भी सुना गयी·—चले हैं घोड़ों परीक्षा करने, और मालूम यह भी नही, कि दात किधर होते हैं और दुम किधर ?

इतना सुनते ही गोपाल को क्रोध आ गया। वुढ़िया के इस तिरस्कार को सहने के लिए वह तैयार नहीं था। स्वाभाविक रूप से कुछ तेज स्वर में वोल उठा —अरे जा—तेरे दही को मेरी गली के कुत्ते भी नहीं चाटते।

-हा जी, अव तक जो दही ले कर गये हैं, वे सव कुत्ते ही तो थे। छोटी सी जवान है, लेकिन चलती कैची है! जैसा वाप, वैसा ही वेटा!

-खवरदार जो मेरे वाप को कुछ भी कहा तो। जवान खींच लूंगा। तूंने समझ क्या रखा है ?

–ओ–हो–हो ! बहुत देखे हैं, रे तेरे जैसे। यों डर जाती, तो चौहट्टे में एक दिन बैठने नहीं देते लोग। अच्छे-खासे दही को खट्टा बता दिया, सो तो बता दिया, और चार भले आदमियों को गाली भी दे दी।

–मैंने गाली दी है ? झूठी कहीं की।

गोपाल का क्रुद्ध आवेश सीमा तक पहुच गया। आगे बढ़ कर उसने बुढ़िया की मिट्टी की परात को लात मार कर तोड़ डाली। चिल्लाया — हां, खट्टी है। खट्टी, थू ! खट्टी, खट्टी, खट्टी !

इस अचिन्त्य काण्ड को देखकर बुढ़िया हाय-हाय कर उठी। चार भद्र व्यक्ति तुरन्त एकत्रित हो गये।

बात क्या है'–के प्रश्न सुनाई देने लगे। गोपाल स्वयं भी इस दुर्घटना से चौंक-सा उठा ! अरे, वह यह कर क्या गया ! अब वह लोगों को क्या सफाई देगा ? और किस-किस को देगा !

इसी समय एक सब्जीवाला घटनास्थल पर उपस्थित हो गया। गोपाल का कान पकड़कर चीखा — अब इसके पैसे कौन देगा ?

–इसने मुझे गाली क्यों दी ?

–अबे गाली के बच्चे ! तू ने दही की मटकी पर लात क्यों मारी ?

दो भद्र व्यक्ति बीच में पड़े। बोले — जाने दो। भीखमचंदजी का लड़का है ! जा रे गोपाल, घर जा। चौक-बाजार में उपद्रव मत किया कर।

एक ने कहा — बाप का कुछ-कुछ असर मालूम पड़ने लगा है।

सब्जीवाला अड़ गया — दही के पैसे देने पड़ेंगे !

गोपाल को रुलाई आ गयी। निरपराध होते हुए भी उसे जिस तरह बेइज्जत होना पड़ा, इसके लिए वह किसी भी एक व्यक्ति की जरा-सी सहानुभूति नहीं पा सका। बल्कि जिन्होंने बीच-बचाव करके उसे उस कलह से छुड़ा दिया था, सच पूछा जाय, तो उन्होंने ही उसका सबसे ज्यादा तिरस्कार किया था।

हाथ में रखी दुअन्नी उसने बुढ़िया के सामने फेंक दी।

सबकी नजरों से छिप कर वह भाग जाना चाहता था। लेकिन लोगों की भीड़ में, बुढ़िया और सब्जीवाले के प्रलाप में, उसे कोई रास्ता नहीं मिल रहा था।

किसी तरह सिर नीचा कर, वह वापस माधवकाका के घर पहुचा। खाली भगोना काकी के हाथ में देकर बोला — दही नहीं मिला।

इतना कहते-कहते उसे महसूस हुआ, मानों सारी दुनिया मे वही अकेला, अभागा, तिरस्कृत और अनादृत है। उसकी आखों में आसू छलछला आये। उसने काकी की नजरों से अपना मुंह छिपा लेना चाहा। मगर सफल नहीं हुआ। पारो ने देख ही लिया। पूछा — रोता क्यों है, गोपाल ?

-मैने दहीवाले की परात फोड़ दी। उसने मुझे गाली दी थी। उसने पैसे ले लिये

-तो क्या हुआ, इसमें रोने की कौनसी वात है ? छि. मर्द होकर इन छोटी-मोटी वातों के लिए इस तरह लड़कियों की तरह रोते होंगे। हैं ?

इस छोटी-सी वात का मर्म, मर्द होकर ही तो समझा जा सकता है।

-मुझे मेरी तपेली दे दो।' कह कर उसने अपनी तपेली उठाई और विना काकी की ओर देखे, सीधे अपने घर चला आया।

अव तक आमदरफ्त काफी वढ़ गयी थी। गली मे लोग आ-जा रहे थे।

गोपाल सोच रहा था, कि सवको आज मालूम हो जायगा, कि मैं क्या पागलपन कर गुजरा हू ?

मन-ही-मन सब समझ रहे होंगे कि गोपाल पागल है। मेरे पिता पागल है न, इसीलिए ! मुझे गुस्सा आया ही क्यों ?

वुढ़िया ने कुछ कह भी दिया, तो उससे मेरा क्या विगड गया ?

उसकी पलायनवादी मनोवृत्ति स्वयं को अपराधी मान कर वारम्वार धमकाने लगी।

पीछे मुड़ कर देखा, शेरवव्वर उसका पीछा कर रहा है। आज पारो काकी ने दही खा जाने के अपराध में मार-पीट कर उसकी टाग तोड़ दी थी। वह विचारा आर्त्त-स्वर में अभी तक अपनी पीड़ा व्यक्त कर रहा था। गोपाल का मन दयाद्र हो उठा। आज तक वह इस घर का पहरा देता था, तव तक कोई वात नहीं थी। आज उसने नुकसान कर दिया, यह वर्दाश्त नहीं हो सकता। काकी नहीं कर सकती। कोई भी नही कर सकता।

उसका जी चाहता था, कि शेरवव्वर को गले लगाकर कहे — शेरवव्वर, आज तू भी पागल हो गया था, क्या रे ? तभी तो तुझे इतनी मार खानी पड़ी।

पागलों के लिए यह दुनिया इससे ज्यादा कुछ कर भी नहीं सकती। काकी को कोई पागल नहीं कहेगा, उस बुढिया को भी लोग समझदार ही मानेंगे—लेकिन दड भोगना पड़ेगा—तुझे और मुझे!

जो अधिक ताक़त के साथ दूसरे को पागल कह सकता है, वही जीत मे रहता है। उसे ही समझदार कहा जाता है।

तूने भी पूरव जनम मे धर्म नहीं किया, मैंने भी शायद कोई पाप किया हो। सो दड तो भोगना ही पड़ेगा। रो मत। सहते-सहते तुझे अभ्यास हो जायगा। फिर यह सब बुरा नहीं लगेगा। अब मुझे भी तो धीरे-धीरे अभ्यास हो गया है।

मन-ही-मन वह चाहे जो सोच रहा हो। लेकिन आत्मीयता की यह बात वह शेरबब्बर को कह नहीं पाता। शेर-बब्बर शायद समझ भी नहीं सकता। उसे गले लगा कर प्रेम प्रदर्शित करना भी शिष्ट समाज मे वर्जित है। सो, गोपाल चुपचाप गली पार कर गया।

शेरबब्बर अपनी सीमान्त तक उसे पहुचा कर, वापस लगड़ाता हुआ लौट गया।

उसे भी तो इस गली के सिवाय कहीं निस्तार नहीं।

अभी वह कुछ ही दूर गया होगा, कि उसे लगा, जैसे एक भारी-भरकम कुत्तों की फौज उसकी ओर बढ़ती आ रही हो।

भैंसे के रथ में आठ-दस कुत्ते प्रलाप कर रहे थे।

एक दूसरे की सूरत से ही जिन्हे असीम घृणा है, वे आज तमाम वैर-भाव भूलकर एक साथ अपना दुखड़ा रो रहे थे। कुत्तों की इस राज-सवारी के पीछे लड़कों का झुड उनकी विवशता और निष्फल क्रोध का आनन्द लेता हुआ पीछा कर रहा था। इन श्वानश्रेष्ठ प्राणियों का स्वर चाहे जितना प्रलयकारी हो, इस समय लोहे के छड़ों में बन्द विवशता के मारे बच्चों द्वारा चिढ़ाये जाने पर वे बिलकुल ध्यान नहीं दे पा रहे थे। अपने ही दुख से दुखी इन प्राणियों की मनोव्यथा बालकों के लिए कौतुक का विषय बनी हुई थी।

सुना है, कुत्तों में कोई भारी भयकर बीमारी फैल गयी है। इसलिए स्थानीय हास्पीटल की सर्वोच्च सत्तासम्पन्न, महाराजा की अनुकम्पा प्राप्त किसी स्त्री-

डॉक्टर ने यह सिफारिश की है, कि चीखने-चिल्लानेवाले कुत्तों को गिरफ्तार करके तुरन्त मंगवाया जाय। इसके बाद इन्जेक्शन लग जाने पर वापस उन्हें मुक्त किया जा सकता है। अन्यथा असीम हानि की सभावना है।

गोपाल चौकन्ना हो गया—कहीं शेर-बब्बर को भी ये कैद न कर लें? इसलिए बच्चों के साथ वह भी कुत्तो के इस विशालकाय रथ के पीछे-पीछे चलने लगा।

माधवकाका की गली से शेर-बब्बर के आर्त्त-स्वर की आवाज स्पष्ट आ रही थी। परिणाम-स्वरूप सारे हथियारों से लैस सम्बन्धित अधिकारी सैनिक, अपने रथ से नीचे उतर कर, सग्राम-क्षेत्र मे, अपने कर्तव्य की मर्यादा के अनुसार उपस्थित हो गये। सबके हाथ में आत्मरक्षा के विश्वस्त साधन मौजूद थे। एक साहबनुमा आदमी लोहे की विशालकाय सड़ासी पकड़े हुए आगे बढ़ा।

वह लम्बी सड़ासी भोंकते हुए कुत्ते के गले मे पड़ जाती और फिर उस ब्रह्म-फास मे लटकता हुआ कुत्ता अपनी जात-बिरादरी के लोगो के साथ उस पिंजरे मे प्रतिष्ठित होकर इस घनघोर अन्याय का प्रतिवाद करने के लिए स्वतंत्र हो जाता।

कुछ लोग इस विचित्र हत्याकाण्ड को देखने के लिए खड़े होकर भविष्यवाणी कर रहे थे —अब सत्त गया। राजा की मति मारी गयी। अब यह राज अधिक दिन नही टिकेगा।

और सचमुच एक दिन समय ने साबित कर दिया, कि उन सबके श्राप कितने सशक्त थे। लेकिन लोगों को यह मानने से एतराज है, कि कुत्तों के पागलपन का इलाज करवाने के इस अनुष्ठान के परिणाम स्वरूप राजस्थान मे राजा-महाराजाओं की सत्ता समाप्त हो गयी। अस्तु।

शेरबब्बर गिरफ्तार कर लिया गया। गोपाल का हृदय व्याकुल हो उठा। वह प्रतिवाद नहीं कर सका। डर लगने लगा, कि इस काण्ड पर उसके मन की व्यथा किसी दूसरे को मालूम न हो जाय। लोग यही कहेंगे, कि इसे कुत्तो के प्रति भी माया हो रही है। नहीं तो पागल कुत्तों के अस्पताल ले जाये जाने पर आज तक किसी ने रोष और दुख व्यक्त किया हो, ऐसा सुनाई तो नहीं देता।

इन पागल कुत्तों की तरह, भीखमचंदजी भी पागल हैं।

भीखमचदजी उसके पिता हैं।

दुसह्य पराजय का भार लिये जब वह वापस अपने घर लौटा, तो मा आटा पीसने बैठी ही थी। देखते ही बोली — अब आया है, गोपाल! कितनी देर कर दी तू ने।

सब कुछ याद करके गोपाल मा की गोद में मुह छिपा कर रो पड़ा।

मां ने पूछा —छाछ नहीं लाया ?

–नहीं।

–तो इसमें रोने की क्या बात है, रे ?

–मा, माधवकाका की गली में जो कुत्ता था न? उसे लोग पकड़ कर ले गये।

–अच्छा!

दस :

यह कैसी बात है, कि किसी को उसकी जरा-सी बेजा हरकत के लिए पागल कह कर आत्मप्रवंचना के लिए मजबूर कर दिया जाय ?

स्वय को समझदार प्रमाणित करने के लिए अपनी आवाज में इतना जोर लगाया जाय, कि दूसरा व्यक्ति सचमुच अपने आप को पागल ही समझने लगे। फिर उसके लिए कठिन-से कठिन दड की व्यवस्था कर दी जाय। सृष्टि के इस सनातन व्यवहार से कोई काल कभी मुक्त रह पाया हो, ऐसा याद तो नहीं आता। उदारता और क्षमा के तमाम उपदेश इस विशेषण-विशेष के सम्पर्क में आते ही निस्तेज हो जाते हैं।

फिर भी जिस पर गुजरती है, उसकी कल्पना करके, स्वय तटस्थ रह कर, कष्ट पीड़ित को देखकर यदाकदा हम भी दुख महसूस कर ही लेते हैं।

यही तो संतोष की बात है, कि मनुष्य में अभी तक इतनी उदारता शेष है।

समाज के न्यायशास्त्र की पद्धति के सम्मुख मनुष्य और कुत्ते में कोई खास प्रभेद नहीं रखा गया है।

कुत्तों के पागल होने और उस पागलपन के संक्रामक होने की संभावना के परिणाम स्वरूप शेरबब्बर को पकड़ लिया गया। उसका ठीक उपचार करने के लिए विशेष अस्पताल में भी भेज दिया गया।

गोपाल के पिता को भी उसकी बेजा हरकतों के कारण हाथ-पांव बांध कर बिठा दिया गया। दंड की यह व्यवस्था न हो, तो संसार चले कैसे ?

इसके खिलाफ कोई दलील, कोई वकालात, कोई फरियाद नहीं हो सकती।

मनुष्य ने वैसे यथेष्ट प्रगति कर ली है। फिर भी समाजशास्त्र के इस नियम में संशोधन करने की कोई आवश्यकता अभी तक महसूस नहीं की गयी। यदि संसार के किसी कोने में बैठे किसी गरीब ने इस समस्या का कोई समाधान प्रस्तुत किया भी हो, तो हम सब तक वह पहुंच नहीं पाया। अथवा अभी तक हम उसे मान्य करके, ग्रहण नहीं कर पाये।

सुना है, मानसशास्त्री कहते हैं, कि पागलपन का एक ही इलाज है—कि आदमी को पागल बनानेवाले प्रस्तुत कारणों का ही निवारण कर दिया जाय। फिर कोई खतरा नहीं।

पागलों के मारे, संसार को बदलने की बात बहुत से भले आदमियों को कुछ बेतुकी-सी लगेगी। इसलिए इस पहलू को रहने ही दिया जाय।

कुत्तों में पागलपन की बीमारी न फैले, इसके लिए जो कुछ किया जा रहा था, उसे देख कर गोपाल विचलित हो उठा। उसे मार्मिक दुख हो रहा था।

मां जब घर के काम-धंधे में व्यस्त हो गयी, तो नजर बचा कर, वह ऊपर पिता के पास पहुंच गया। देखा, भीखमचंदजी हाथों में बंधी हुई रस्सी को जमीन पर रगड़ रहे हैं।

मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति—स्वतंत्र होने की कामना—पागलपन के बावजूद भी अक्षुण्ण रहती है। इसलिए घिसते-घिसते यह पागल कभी-न-कभी

फिर रस्सी तोड़ ही डालेगा, और कोई अनिष्ट कार्य करने के लिए स्वतन्त्र हो ही जायगा।

फिर ससार अपनी गति स्थिर करने के लिए व्याकुल होकर और अधिक मजबूत रस्सी लाकर बाध देगा।

गोपाल उनके सामने घुटनों के वल वैठ गया। उनकी ओर देखते हुए उसने मुलायम स्वर में इतना ही कहा — आपासा, ऐसे मत करो।

पुत्र को देख कर पिता ने रस्सी घिसना बन्द कर दिया।

उनकी विस्फारित मौन आखों की भाषा गोपाल नहीं समझ सकता। अपनी वात कह कर समझा भी नहीं सकता। इसलिए उनकी ओर एकटक देखते-देखते उसने मन-ही-मन कहा — आपासा, लोग भविष्य की जरा-सी वात जानने के लिए अपना हाथ किसी के सामने, किसी भी समय फैला देने में सकोच नहीं करते, लेकिन अव हमारा भविष्य क्या है, बिना भिक्षा-पात्र फैलाये ही हम सव को यह मालूम हो गया है।

-अव कुछ भी नहीं किया जा सकता। न आप कुछ कर सकते हैं। न हम कुछ कर सकते हैं। दुख इतना ही है, हम अब भी इस मोटी-सी वात को मानना नहीं चाहते।

-यही तो दुख है, कि आपकी अवस्था जानते हुए भी हमें अभी भी कभी-कभी उम्मीद होने लगती है, कि यह सव ठीक हो जायगा। सव कुछ हमारे अनुकूल हो जायगा।

-तव, अपने मन की धारणाओं के प्रतिकूल स्थिति देखकर हम व्याकुल हो उठते हैं, क्षुब्ध हो उठते हैं।

-खैर, जो भी हो, यह मै अच्छी तरह से जानता हूं, कि हम कुछ भी नहीं कर सकते और आप भी कुछ नहीं कर सकते।

गोपाल के अन्तर्मन की यह वाणी सम्भवत किसी ने नहीं सुनी। फिर भी यह अस्पष्ट नहीं है, कि भविष्य को भुगतने की यह कामना—मन की समस्त कल्पनाओं के इस गतिरोध की सीमा कहा होगी, और कहा गोपाल खुद भविष्य को अगीकार करने से साफ इनकार कर देना और कव उसके मन की यह विवशता उसे पागल नहीं वना देगी यह कोई नहीं जानता।

मा ने पुकारा —क्यों रे गोपाल, आज तो स्कूल खुली है। जायगा नहीं क्या ?

पिता को छोड़ कर वह नीचे चला आया।

मा ने पूछा —ऊपर क्यो गया था ?

गोपाल ने अपराधी की तरह सिर नीचा कर लिया। जवाव नहीं दिया।

मां ने पूछा —स्कूल का समय हो रहा है न ? आ फुलके उतार देती हूं। खा ले।

–आज स्कूल की छुट्टी है।

–अच्छी वात है। खा–पी कर खेलने जा आ।

–नहीं। खेलना मेरे भाग्य मे नहीं है। नहीं जाऊंगा। इतना कह कर वह अपने पढने के कमरे मे जाकर दरवाजा वन्द करके वैठ गया। वोला —मां, मै पढ़ रहा हूं। भूख लगेगी, तव आकर खा लूंगा।

पुत्र के इस अत्यन्त वुद्धिमानीपूर्ण व्यवहार से यशोदा चौंक-सी गयी। सम्भवत वह चाहती थी, कि गोपाल अवोध वालक ही वना रहे। घर के दुख–सकट को जान–समझ न पाये।

आज गोपाल के इस छोटे से वक्तव्य से यह स्पष्ट हो गया कि उसका दुख और भी अधिक गहरा है। दुनियादारी के साधारण कष्टो को सहने का उसे जो प्राथमिक पाठ मिला है, वह काफी जटिल और दुसह्य है। —दुख को दुख मानने से क्या लाभ होगा ?—तत्व की यह वात इस रूप मे समझ कर, गोपाल के दुख की इस गम्भीरता को कम नहीं किया जा सकता।

यशोदा अव तक समझ रही थी, कि वह अपने आचल मे एक ऐसा दीप सजोये हुए है, जिसके उज्ज्वल प्रकाश मे वह रास्ते की सारी दुर्गम कठिनाइया वर्दाश्त कर लेगी। यही विश्वास अव तक यशोदा के लिए वहुत वड़ा आश्वासन वना हुआ था।

उसे आज तक विश्वास था, इस दीपक मे दुख की कोई कालिख नहीं लगेगी। इसके चारो ओर कभी किसी तरह की धुंध नहीं लगेगी। वह लगने नहीं देगी।

आज उसने अन्त करण से स्वीकार कर लिया, कि-यह उसकी मिथ्या धारणा थी। भूल थी।

गोपाल अब अबोध नहीं है। वह सब समझता है। इसलिए अब उसे इस दुखद परिस्थितियों के प्रभाव से बचाये रखने के तमाम प्रयत्न व्यर्थ हैं।

यद्यपि उसने गोपाल से कोई बहस नहीं की। उसे कुछ कहा नहीं। उसके कुछ पूछा नहीं। फिर भी आज उसे जिस भयकर सत्य का साक्षात्कार हुआ था—उसे इसी रूप मे अंगीकार करने के लिए यशोदा तैयार नहीं थी।

भिखमगा तो झोली फैला कर भीख ही मांग सकता है। जो न दे, उसके प्रति अभिशाप वह नहीं बरसा सकता। लेकिन दिन भर हाथ पसारे रहने पर भी यदि उसे कुछ भी न मिले, तो सन्ध्या के समय खाली हाथ, भूखे पेट और मजबूरी की करुणा लिये, वह किसके सामने जाकर अपना दुखड़ा रोये? कुछ इसी किस्म की दशा यशोदा की थी। भाग्य ने जो कुछ दे दिया, उसे उसने हाथ फैला कर ले लिया। पुरानी कथाओं में आता है, कि एक महात्मा ने नदी में बहते हुए बिच्छू को निकालने का जितनी बार प्रयत्न किया, उतनी ही बार उन्हे उस विच्छू के डक सहने पड़े। महात्मा ने अपनी उदारता का स्वभाव नहीं छोड़ा, बिच्छू ने डक मारना बन्द नहीं किया। उपरोक्त कथा के अन्तिम भाग के बारे में अभी तक यह जिज्ञासा बनी हुई ही है, कि उस विष-पीड़ित साधू को अपनी इस उदारता के कारण मरना पड़ा या नहीं?

यशोदा भाग्य के डक को हमेशा सहती रही है। उसका सहने का स्वभाव है। भाग्य भी डक मारने का अपना स्वभाव छोड़ नहीं सकता।

यशोदा को सत, महात्मा या ऋषि की उपाधि दी जा सकती है, या नहीं, यह प्रश्न विवादास्पद ही बना रहेगा। इसलिए विवादास्पद बना रहेगा, क्योंकि आज यशोदा भाग्य के डक को सहने से इनकार करने की चेष्टा में पति के सामने जाकर आचल फैला कर, कातर-स्वर में कहने लगी है—मुझे जो चाहे कह लो। मेरा जो चाहे कर लो। लेकिन गोपाल को बख्श दो, मेरे देवता!

भीखमचदजी यशोदा की इस प्रार्थना का कोई जवाब नहीं दे सके। उन्होंने सिर हिला कर, टागे लम्बी पसार कर, आराम से कमर सीधी करते हुए कहा—मुझे भूख लगी है। खाना ले आओ।

यदि पति इतना ही चाहता हो, तब तो सकट की कोई बात ही नहीं। आज तक उनकी आज्ञा की अवमानना कभी नहीं हुई। आज पहली बार उनकी

इन प्राथमिक आवश्यकता की पूर्ति की ओर ध्यान दिये बिना यशोदा ने पूछा — आखिर तुम चाहते क्या हो ?

-भूख लगी है। प्यास लगी है। खाना लाओ। पानी लाओ।

अपनी बात इस पगले पति को वह कभी भी समझा नहीं सकेगी। उस सर्वात्मा, अन्तर्यामी को भी वह अपनी बात आज तक समझा नहीं सकी। इसलिए अपनी भूल को स्वीकार कर, पति के चरणों मे माथा रख कर, उसने इतना ही निवेदन किया — आज, सकल-चराचर जगत के पशु पक्षी, कीट पतंगों, शत्रु-मित्रों के प्रति अब मुझे कुछ भी नहीं कहना है। कहीं कोई भी तो मेरी बात सुननेवाला नहीं है। आज से सब कुछ कृष्णार्पण किया। आज से सारा दुख उसी मुरली-मनोहर का हो गया। आज के बाद सारे सुख उसे सौंप दिये।

नीचे आकर वह रसोई मे चूल्हा जलाने बैठ गयी।

जलती हुई अग्नि की ओर देखती हुई वह पता नहीं कब तक, गुमसुम बैठी रही।

याद आया —

इसी तरह एक दिन ब्याह की साक्षी देने अग्नि जल रही थी।

पति-पग का अनुगमन करती हुई वह इस घर मे चली आई।

इसके बाद पटाक्षेप हो गया। सिर्फ अग्नि का धूंआ ही चारों ओर से दम घोटता रहा।

मन ही मन वह फुसफुसाई — हे लक्ष्मीपति, यदि आज तक मैंने मन, वचन, काय से पति की सेवा की हो, धर्म मे ध्यान रखा हो, तो हाथ जोड़ कर एक ही वरदान मांगती हूं कि इस ससार से हम दोनों को एकसाथ उठा ले!

पता नहीं कितना समय इसी तरह गुजर गया।

भीखमचंदजी 'भूख-भूख' चिल्लाते रहे। लेकिन आज वह उस ओर ध्यान नहीं दे सकी। गोपाल ने दरवाजा खोलकर मा से कहा — मा, खाना तैयार नहीं हुआ क्या ? आपासा बुला रहे हैं न ?

सिर उठा कर उसने गोपाल की ओर देखा, फिर रसोई बनाने में व्यस्त हो गई।

गोपाल ने अपना ध्यान फिर से पढाई मे लगा लिया।

यशोदा सोच रही थी — आज, इसी समय यदि भूख के मारे वे प्राण त्याग दें तो मैं भी अग्नि-समाधि लेकर उनके साथ ही चली जाऊं।

आग बुझ गयी थी। उसने कुछ लकड़िया डाल दीं। धूआं और गहरा हो गया।

अपने कमरे में बैठा गोपाल देश के महान नेताओ की जीवनिया पढ रहा था। सुकीर्त्ति-सम्पन्न, प्रतिभाशाली और अध्यव्यवसायी व्यक्तियों ने कठिनाइयों और दिक्कतों का निरन्तर सामना करते हुए इतिहास बदल दिया था।

उनकी कठिनाइयों के भयकर दृश्यों का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन पढने पर गोपाल को महसूस होने लगा, कि उसका कष्ट तो इन सबके आगे कुछ भी नहीं है।

सचमुच व्यवहारिक दुनिया के इस रूपहले स्टेज पर उसका कोई निश्चित पार्ट है — यह वह नहीं जानता। फिर भी उसे ऊंघनेवाला, या वारम्बार बीच-बीच में उठ कर वाहर चले जानेवाला दर्शक भी नहीं कहा जा सकता। सो अपने ध्येय प्राप्ति के लिए, अपने घर की प्रस्तुत स्थिति को भूल कर, पराये दुख से तुलना करके, वह पोथियों मे एकाग्र चित्त से डूब-सा गया।

किसी पुस्तक में एक बड़ी महत्वपूर्ण बात लिखी हुई थी। वह उसे हमेशा के लिए याद रखना चाहता था। इसलिए उसने अपनी कापी के एक पन्ने मे उसे लिख कर सामने की दीवार पर कीले से टाग दिया। ताकि उस पर उसकी हमेशा नजर पड़ती रहे और इस तरह से लक्ष्य-प्राप्ति के लिए किये जानेवाले प्रयत्न अधिक रामवाण साबित हो जाय। वह तथ्य यह था —

'किसी शब्द में ऐसी सामर्थ्य नहीं, जो मुझे चोट पहुचा सके!'

अपने सामने इस दीक्षित मन्त्र को टाग लेने पर उसे आश्वासन का कुछ ऐसा सहारा मिला, कि कुछ देर के लिए वह भूल गया, कि अभी-अभी वह अति तुच्छ घटना से प्रताड़ित होकर दुखी हो उठा था।

गोपाल की कथा कहने के अपराध में यहा कुछ स्पष्टीकरण देना होगा। क्योंकि सवाल उठेगा, कि इतने छोटे वालक में इतनी बुद्धिमानी आई कहां से? लोगों में अपने आप को मनोवैज्ञानिक समझने की भावना भी सुप्रचलित है। अपने अनुभवों के बल पर उन्हें ये सारी बातें असार लगेंगी। कहेंगे —पागल-पुत्र होने के नाते उसके सारे रास्ते वन्द हैं—यह जानते हुए, उसके ये सकल्प क्या मायने रखते है?

उस निरुपाय लाचार लड़के के प्रति हमारी करुण भावना को इस कथा द्वारा ठेस पहुंचाई गई है। इस बात का जवाब देना आवश्यक है; इसलिए कथा के मध्य में रुक कर, एक बात जोर के साथ कहनी होगी—कि विज्ञान ने दृग्व्य रूप से स्वीकार किया है, कि पागलों के बच्चे अधिक धैर्यशाली और बुद्धिमान होते हैं।

प्रभु की इस अद्भुत लीला से परिचित लोगों की सख्या कम नही, जो जानते हैं, कि तथाकथित बुद्धिमानों के पुत्र अकसर मूर्ख-श्रेणी के ही सिद्ध हुए हैं। लेकिन दुख के मारे इन अभागो की सतानों को, धीरज और एकाग्रता सहनशीलता, नम्रता अथवा प्रखर बुद्धिमत्ता प्रकृत्तिदत्त है। उनकी प्रारभिक साधना भी उतनी ही कठोर है।

गोपाल का उदाहरण इसीलिए दिया जा रहा है। गोपाल मायने एक प्रतीक, एक ऐसा बालक, जिसे अपनी छोटी-सी उम्र में परम्परानुगत ऐसी विरासत मिली है, जिसे अगिकार किये बिना कोई उपाय नही। ऐसी परिस्थितियों में यदि वह कोई मुक्ति मार्ग ढूढ निकालने का प्रयत्न करे, तो इसे अस्वाभाविक नहीं माना जाना चाहिए। सुना है, घिर जाने पर घबराई हुई बिल्ली भी अपने बड़े से बड़े शत्रु का सामना करने के लिए प्रस्तुत हो जाती है।

ऐसे बालक ही अपने भविष्य का निर्णय करने के सकल्प लेते हैं।

जिनकी उम्र शैशवकाल पार कर चुकी है, वे अलबत्ता यह कहेंगे कि कष्ट और दुखों के बीच, अल्प-आयु में जर्जरित बालक आगे चल कर, अपनी प्राप्त विजय का उपभोग कर पायेगा कि नहीं?

सभव है, वह न कर पाये। मुमकिन है, कि कर पाये। दोनो अवस्थाओं में जीवन-सघर्ष की भूमिका अदा करने वाले इन पात्रों के प्रति जिन लोगों के मन मे करुणा है, उनका आशीर्वाद ही सतोषपूर्ण है।

गोपाल में अब कुछ गंभीरता आ गई है। अब वह मां का दुलार पाने के लिए समय-असमय पर यशोदा के पास नहीं चला आता। न अब पिता के निष्फल उपद्रव का विभिन्न प्रकार से अर्थ निकालने की ही चेष्टा करता है। काकी के साथ ताश खेलने के सुख से भी वह विरक्त-सा हो चुका है। माधवकाका को अपनी प्रचण्ड पढ़ाई से प्रभावित करने की कोशिश में, इधर-उधर की बातचीत मे रस नहीं लेता। दिनरात अंग्रेजी की अटपटी व्याकरण समझने की कोशिश करता

हुआ, भूगोल की सीमाओं में भ्रमण करता हुआ, इतिहास का मूल्यांकन करता हुआ, गणित के निश्चित परिणामों का मनन करता हुआ, वह सारा दिन गुजार देता।

साथ ही भीखमचदजी के उपद्रव उसी गति से चलते रहे। उनमे किसी तरह का परिवर्तन नहीं हुआ। नित्य की भाति अब भी मा गीता-पाठ करती है। पति की सेवा करती है। पुत्र का ख्याल रखती है।

इसी तरह इस परिवार के दिन गुजरते जा रहे हैं।

परीक्षाए हो चुकी हैं, और अब गर्मियों की छुट्टिया है। पढाई करने में जो घनघोर श्रम विद्यार्थियों को करना पड़ा है, उस के एवज मे शिक्षा-शास्त्रियों ने मिल कर उनके आराम करने के लिए छुट्टियो का जो समय निर्धारित कर दिया है-गोपाल उस समय का भी लाभ उठा लेना चाहता है। इसलिए इन दिनों वह एक दूसरी स्कूल में जाने लगा है। छुट्टियों के दिनों में चलने वाली इन स्कूलों में इन दिनों काफी भीड़ है। कारण यह, कि बच्चों के माइतों और शिक्षा-शास्त्रियो के मत मे काफी अन्तर है। बच्चों के अभिभावकों की यह मान्यता है, कि दो महीने की इन लम्बी छुट्टियो में लड़के बिलकुल तीन कौड़ी के हो जाते हैं। दिन भर गोधे लड़ाने और इधर-उधर घूमने के अलावा कुछ भी नहीं करते। इसलिए इन बन्दरों को किसी स्कूल में बन्द किये बिना, उनके पागलपन को बर्दाश्त किया नहीं जा सकता। विद्यार्थी, उम्र में छोटे और अधिकारों मे असमान होने के कारण, अपने बुजुर्गों का विरोध कर नहीं पाते। लिहाजा कुछ देर से पहुंच कर, बार-म्बार स्लेट धो कर, आपस में विचार-विमर्श करते हुए, बीच्-बीच में अनेक प्राकृतिक जरूरतों को पूरा करने के बहाने से वे इधर-उधर चले जाते हैं। इसी तरह यह कैद हमेशा से भोगी जाती है।

गोपाल इसी जेल में होते हुए भी कैदी इसलिए नहीं है, कि वह स्वेच्छा से यहां पढ़ने आया है। एकाग्र-चित्त से विद्याध्ययन करके, दो सालों का इम्तिहान एक साथ पास करने का उसके पास और कोई उपाय नही है। क्योंकि, घर की परिस्थिति ऐसी नहीं है, कि उसके लिए मास्टर रखा जा सके।

उस दिन गोपाल अपनी कक्षा में बैठा मन लगा कर पढ रहा था। एक अध्यापक अपनी सद्य-परिणीता वधु को लिवाने के लिए दो दिन की छुट्टी पर गये हुए थे। इसलिए प्रस्तुत पीरियड खाली था।

अध्यापक की अनुपस्थिति मे विद्यार्थियों में स्वतंत्रता की भावना अधिक जोर मारने लगती है। इसलिए चारो ओर गुल-गपाड़ा मचा हुआ था। ऐसा लगता था कि भगवान रुद्र के अनुचर श्मशान घाट पर, अपने स्वामी की अनुपस्थिति में क्रीड़ा-मग्न हो। डरने वालों के ललाट पर पसीना आ जाय, यह दूसरी बात है, मगर इस से इन घटकों की क्रीडा-किल्लोल प्रभावित नहीं हो सकती।

छोटे से कमरे मे ३०-४० विद्यार्थी इतने जोर से चीख-चिल्ला रहे थे कि उन्हे देख कर यथेष्ट आशा होती थी, कि देश के ये कर्णधार भावी नेतागिरी सभालने के लिए पूरी योग्यता प्राप्त करने के हेतु अच्छा अभ्यास कर रहे है। इस गगनभेदी हाहाकारी चिल्ल-पो के बावजूद भी गोपाल अपनी पढाई मे तल्लीन था।

इसी समय एक सहपाठी ने गोपाल के पास आकर सूचना दी —अरे गोपाल, तेरे पिता तो घर से भाग गये!

अध्ययन मे डूबे हुए गोपाल ने सर उठा कर आगन्तुक की ओर देखा। सदेश-वाहक ने कुछ अधिक जोर से इस महत्वपूर्ण समाचार की पुनरावृत्ति कर दी।

गोपाल ने कोई हड़बड़ाहट नहीं की। इस बात को सुनकर कोई व्याकुलता प्रकट नहीं की। कुछ पूछा भी नहीं। मन ही मन सभवत वह यही कहना चाहता था —मुझे दिक मत करो। यदि वे चले भी गये हो, तो मै क्या कर सकता हू? मै ससार के किसी भी प्राणी को अपनी इच्छा के अनुसार नहीं सुधार सकता। यदि मैं अपना ही सुधार कर लूं, तो ही काफी होगा। मुझे दिक मत करो। बख्श दो। सच, मैं पागल का बेटा हूं, और इस कलंक को धोने के लिए मुझे एकाग्र-चित्त से पढ़ने दो!

सदेशवाहक को गोपाल की यह मूढ़ता बेहद नापसन्द थी। इसलिए समाचार पर टिप्पणी दी गयी —अरे, तो बहरा हो गया है क्या? सुनता नहीं है, क्या कह रहा हू?

दूसरे ने कुछ मीठास से कहा —घर जा भई। तेरे पिताजी सड़क पर इधर-उधर भाग रहे हैं। जाकर सभाल। नहीं तो गधे पर बैठ जायगे।

सारी क्लास की मुक्त हंसी दूर-दूर तक फैल गयी।

गोपाल ने पोथी बन्द कर दी। उठ कर बाहर चला आया।

घर आकर देखा, मा वर्त्तन माज रही थी। ऊपर से पिता की आवाज सुनाई दे रही थी।

पुत्र को असमय आया देखकर मां ने पूछा —आज जल्दी आ गया रे ?

इस प्रश्न का अर्थ था—कोई खास दुर्घटना नहीं हुई।

गोपाल लड़कों की इस भयंकर मजाक को समझ गया। लेकिन मा से इतना ही कहा —एक किताब लेने आया था।

वापस क्लास में पहुंचते ही लड़के चिल्लाये —अप्रेल-फूल! अप्रेल-फूल!!

सिर नीचा करके गोपाल अपने आसन पर जाकर बैठ गया। किताब खोल कर, आखों के सामने रख ली, और दांत भीच कर रुलाई रोके रहा।

आज अपेल का पहला दिन है।

पता नहीं, किन-किन देशों मे, किस तरह इस दिवस का समारोह मनाया जाता है, और लोग इसका कितना आनन्द उठा लेते हैं—इसका हवाला दिये बिना ही, भारतीय अनुकरण की इस सजगता की प्रशसा किये बिना नहीं रहा जा सकता।

अप्रेल के प्रथम दिवस पर जो मस्ती और मादकता किन्हीं विशिष्ट देशों में पचलित है, वह तो सभवत यहा न भी हो, लेकिन लोग धीरे-धीरे उन्नति-उद्योग करके, स्थिति-विशेष तक पहुचने का निरन्तर प्रयास कर रहे हैं—कि एक निश्चित दिन किसी को इस तरह मूर्ख प्रमाणित किया जाय, कि वह जिन्दगी भर सर उठाने लायक न रहे।

बच्चों में भी यह सुखद प्रयास काफी लोकप्रियता प्राप्त कर रहा है। इससे देश की सास्कृतिक प्रगति की पर्याप्त आशाए हैं।

जो हो, आज के मूर्ख-दिवस के उपलक्ष में गोपाल अत्यन्त आनन्ददायक पात्र साबित हुआ।

इस क्रूर मजाक से उस बालक के हृदय पर कितनी चोट पहुंची, इसे सम्भवत अन्तर्यामी के अलावा और कोई नहीं जान सके हों। इस मजाक के प्रत्युत्तर में वह नादान बालक कोई रुचोट उत्तर नहीं दे सका। अपने क्रोध को व्यक्त नहीं कर सका। इसलिए फीस गया। अपने आसन पर, हथेलियों में मुंह छिपाकर रोने लगा।

इस उल्लासपूर्ण कर्म-काण्ड का अनुष्ठान करने वाले प्रवल पराक्रमी वालक इस समय चरम-सीमा का उत्कृष्ट आनन्द लेने के लिए जमीन पर लोट-लोट कर मजा ले रहे थे। विचारे अपनी हंसी रोक ही नहीं पाते थे!

इसी समय एक ने कहा·— अरे, औरतों की तरह रोता है!

दूसरे ने कहा·— तेरा वाप पागल नहीं है। विल्कुल नहीं। वह तो नगरसेठ है। नगरसेठ!

तीसरे ने कुछ समझदारी के लहजे में कहा·— अवे, रोना ही है तो घर जाकर रो धो लेना। इस तरह मजाक में कोई रोता होगा? यदि मास्टरजी ने सुन लिया तो फिर किसी की खैर नहीं! सवके प्राण लेगा क्या?

रास्ता न पाकर भागती हुई विल्ली भी गुर्रा कर सामने खड़ी हो जाती है।

गोपाल ने आसुओं से भीगा हुआ चेहरा ऊपर उठाकर हिचकिया लेते हुए कहा·— मै पागल का वेटा हूं, यह वात सारी दुनिया को मालूम है। मै औरतों की तरह रोता हूं। यह भी ठीक। लेकिन जानवरो की तरह किसी को दुख नहीं देता। इस तरह किसी मरे हुए को नहीं मारता। मास्टरजी को मैं सारी वात कहूंगा, और जरूर कहूंगा।

सारी क्लास मे एकवारगी नि·स्तव्धता छा गयी। मानों सवने अचानक किसी विकराल भूत के दर्शन कर लिये हों। इस भय का कारण है।

जिस जमाने की यह वात है, उस समय मास्टरों को दंड देने के वे तमाम अधिकार प्राप्त थे, जो आज के स्वतंत्र भारत में किसी अच्छे-खासे अधिकारी को भी मुयस्सर नहीं। लिहाजा लड़कों मे आतंक भी रहता था। मास्टरों के डंडों के जरिये माता सरस्वती ठीक उनके भेजे मे समा जाती थी। लिहाजा, आज की तरह न तो विद्यार्थी आन्दोलन होते थे, न विद्यार्थियों की मानसिक अवनति की दशा पर किसी तरह के कमीशन विठाने की व्यवस्था की जरूरत ही पड़ती थी। सव कुछ कुशल-मंगल था। उन दिनों अध्यापक 'देवो भव·' माने जाते थे। देवों की तरह उनकी प्रतिभा भी चतुर्दिक। विभिन्न प्रकार के दंडों की ऐसी व्यवस्था थी कि कोई उनकी नजरों से वच कर रह ही नहीं सकता था।

सो, रोते हुए गोपाल द्वारा मास्टरजी को किसी व्यक्ति विशेष का नाम वताये जाने का अर्थ था—फासी की सजा—अथवा इतनी ही दारुण यंत्रणा देनेवाली मुर्गा वन कर डंडे खाने की योजना। सव के सामने भारी तिरस्कार का

सामना। बिना किसी अनिवार्य आवश्यकता के, शांति-भग करके कोई इस विपत्ति को निमन्त्रित करने की हिम्मत कैसे कर पाता ?

सो, सधि की वातचीत करने के प्रयत्न किये जाने लगे। नाना प्रकार के प्रलोभन दिये गये। इस जरा-सी वात की नि सारता का तत्त्वज्ञान भी प्रस्तुत हुआ। अकेले गोपाल के सामने सघठित विद्यार्थियों का यह प्रवल आन्दोलन ! फिर भी गोपाल राजी नहीं हुआ। यही कहता रहा —कहूगा। जरूर कहूगा। कहूगा क्यों नहीं ? मास्टरजी को आने तो दो।

पता नहीं, उसे मास्टरजी की न्यायप्रियता पर ऐसा विश्वास कैसे प्राप्त हुआ ?

क्लास में उठ रहे इस भयकर अनियन्त्रित शोर-गुल से हेड-मास्टरजी की निद्रा-मग्न समाधि भग हो गयी। दक्ष-यज्ञ विध्वस के लिए जिस आवेश के साथ भगवान शकर के प्रमुख गण लाल-लाल नेत्र करके, लम्बे-लम्बे डग भरते हुए, अपने लक्ष्य-स्थल पर पहुच गये थे, ठीक उसी तरह धम-धम करते हुए प्रधानाध्यापक ने क्लास में प्रवेश किया।

टेबल पर छड़ी पीट कर चिल्ला कर पूछा —यह सब क्या है ?

नि स्तब्ध शाति ! किसी ने कोई जवाव नहीं दिया।

—यह क्लास है, या कवड्डी का मैदान ?

कवड्डी का मैदान नहीं है, इस बात से सबने सहमति प्रकट की।

आगे पूछा गया —इतना शोर क्यों मचा रखा है ? जवाव न पाने पर, सामने वैठे एक लड़के को खड़े होने का आदेश देते हुए वे फिर गर्जे —कौन-कौन शोर मचा रहा था ?

अभाग्य का मारा वह लड़का रो दिया। कुछ वोल नहीं पाया। गोपाल की ओर हाथ से इशारा करते हुए उसने किसी तरह इतना ही कहा —मैं—मैं—मैं

मास्टर-साहव साकेतिक भाषा समझने में प्रवीण थे। इसलिए उस लड़के की पूरी वात सुनने की उन्होंने आवश्यकता नहीं समझी। गोपाल के सामने खड़े होकर वोले —हाथ फैलाओ !

गोपाल पूरी वात कहना चाहता था। लेकिन अवसर नहीं था। कह नहीं पाया।

मास्टरजी फिर चीखे —कहता हू, हाथ फैलाओ।

गोपाल ने डरते-डरते हाथ फैला दिया।

सड़-सड़-सड़।

हाथ पर बेंत बरसने लगे। हाय-हाय करता हुआ गोपाल वहीं लोटने लगा!

-खबरदार।' इतना कह कर मास्टर साहब प्रत्येक लड़के को बेंत का एक-एक प्रसाद प्रदान कर, सामने की कुर्सी पर जाकर बैठ गये। बोले :—पेज नंबर २३ से ३३ तक पढो!

खटर-पटर की ध्वनि सुनाई दी। अनेक पुस्तके बन्द थैलों में से बाहर निकल आई। उपस्थित विद्यार्थी विद्याध्ययन में तल्लीन हो गये। बालकों की इस आज्ञापालन से सतुष्ट होकर टेबल पर टागे फैला कर, कुछ देर तक तो वे विद्यार्थियो की ओर देखते रहे। मानो उन सबको आखों ही आखों द्वारा लील जायंगे। इसके बाद क्रोधाग्नि बुझ गयी, और अपनी इस सहजावस्था मे उन्हे सहज ही दिवा-स्वप्न दिखाई देने लगे।

गोपाल इस अत्याचार के प्रति विद्रोह व्यक्त करने के लिए साहस एकत्रित कर रहा था। किसी तरह उठ कर उसने कहा —मास्टरजी!

विद्यादानी अध्यापक निद्रावस्था में सासारिक बातों मे विशेष दिलचस्पी नहीं रखते थे। इसलिए उसी तरह पड़े रहे।

गोपाल ने भर्राए हुए कंठ से कुछ और जोर लगाकर कहा:—मास्टरजी!

क्लास के अन्य विद्यार्थी गोपाल के इस दुस्साहस को चकित नेत्रों से देखने मे पुस्तकें पढ़ना भूल गये।

गोपाल के एक बार और पुकारे जाने पर मानों भूचाल आ गया। मास्टरजी हड़बड़ा कर उठ बैठे। परिणाम-स्वरूप कुर्सी चरमरा उठी। छड़ी पर हाथ रख कर किसी प्रबल आक्रमण का मुकाबला करने के हेतु उन्होंने मुंह फाड़ कर पूछा —क्या है?

गोपाल तन कर खड़ा हो गया। बोला.—मैं जानवरों के साथ नहीं पढ़ना चाहता।

मास्टरजी को जैसे बिजली छू गयी।

सुना है, कि किसी युग मे इसी तरह एक जिद्दी लड़का यम के दरवाजे पर कुछ सवाल पूछने चला गया था। उस दिन देवाधिदेव यमराज को जितना

आश्चर्य हुआ था, उससे कम दुख, क्षोभ और आश्चर्य, गोपाल के इस दुस्साहस को देखकर प्रस्तुत अध्यापक को निश्चित रूप से नहीं हुआ।

वे तड़प कर उठ बैठे। उसके पास आकर चिल्लाये—क्यों बे, तू तो आदमी है—और ये सारे के सारे जानवर! हूँ? मैं भी जानवर हू? मास्टर को गाली देता है! सारे दात तोड दूगा! हाथ खोल। खोल हाथ। बिना मार खाये तेरा दिमाग दुरुस्त नहीं होगा! बहुत गर्मी आ गयी है। मैं समझता था—

गोपाल ने पूरी बात नहीं सुनी। उनकी बात काटते हुए कहा—नहीं खोलूगा। भले आप मुझे मार ही डालिये!

मास्टर साहब इस तरह के प्रतिवाद सहने के आदी नहीं थे। उन्होंने उस बालक की इस उद्दडता का जड़मूल से नाश करने के लिए बेंतो से उसे बुरी तरह धुनना शुरू किया। न सही हाथ, कमर, कधे, सिर, पैर ये तो हैं ही। इन पर मारने से भी कुछ न कुछ सतोष तो हो ही सकता है। दड देने के विधान में यह सब वर्जित नहीं।

गोपाल हाय-हाय करता हुआ कुछ देर तक तो मार खाता रहा। इसके बाद अपनी किताबें उठा कर प्राण बचा कर भागते हुए कहता गया—मेरा नाम काट दीजिये। मैं यहां पढ़ने नहीं आऊगा!

अत में मास्टरजी निष्फल क्रोध, क्षोभ और लज्जा के मारे बड़बड़ाने लगे — गधा कहीं का! ऐसे लड़कों की हमें कोई जरूरत नहीं।

अपमान लाछना और मार की पीड़ा से दुखित गोपाल जब घर पहुंचा तब घर के पास माधवकाका खड़े बिजली का खभा लगवा रहे थे। तार खींचे जा रहे थे। आज से इस घर में बिजली की रोशनी आ गयी।

बहुत दिनों से जिस चीज की वह प्रतीक्षा कर रहा था, आज उसे प्रस्तुत देख कर भी उसे कोई खास खुशी नहीं हुई। अभी-अभी जो दुर्घटना हो चुकी थी, उसकी चर्चा करके अपने अभाग्य की बात वह स्वय के सामने दुहराना नहीं चाहता था। इसलिए, एक क्षण के लिए खड़े रह कर, इस नूतन विद्युत-प्रतिष्ठा-कार्यक्रम को वह चुपचाप देखता रहा।

माधवकाका ने पूछा — आज जल्दी ही छुट्टी हो गयी क्या?

-हा। आज अप्रेल-डे है, इसलिए।

राधामाधव ने उत्साहित होकर कहा — देख गोपाल, आज से अपने घर बिजली आ गयी। अब तुझे मिट्टी के तेल के लालटेन के प्रकाश में पढना नहीं पड़ेगा। अब तो बस, बटन दबाया कि घर चादनी-सा चमकने लगा!

उसने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। काम करनेवालों को देखता रहा। माधवकाका कामगारों के साथ इधर-उधर की बातचीत कर रहे थे।

अपना काम खत्म करके बख्शीश के लिए मजदूरों ने अपना हाथ फैला दिया। यशोदा बाहर आ गयी थी, राधामाधव ने भौजाई की ओर देखते हुए कहा.— लो भौजाई, बिजली तो लग ही गयी है। अब गोपाल की जनेऊ भी पड ही जायगी।

गोपाल की ओर देखकर मा ने पूछा — जल्दी आ गया गोपाल?

मा की गोद मे मुंह छिपाकर अपने दुख को पूरी तरह व्यक्त करने के लिए एकबारगी तो वह व्याकुल हो उठा। लेकिन जब्त कर गया। फिर बिना जवाब दिये, चुपचाप अन्दर जाकर अपने कमरे में अनमने मन से पुस्तक खोल कर, सामने रख कर, अन्धेरे में चुपचाप देखता हुआ कुछ सोचने लगा।

सोचने यह लगा, कि यह दुर्घटना क्या सिर्फ अप्रेल-डे के दिन की ही है, या हमेशा यही सब चलता रहेगा? सुना है, मा और मास्टर की मार तो विद्या-ग्रहण की प्राथमिक सीढी है। अब तक वह इस प्रसाद से वञ्चित था। इसीलिए विद्याग्रहण के इस प्रथम नियम से उसका पूरी तरह से परिचय नहीं हो सका था। वह इस बारे में नहीं सोच रहा था। सोच रहा था यह, कि यदि वह स्कूल नहीं जायगा, तो घर में बैठा करेगा क्या? हो सकता है, कि किसी दूसरे अध्यापक की स्कूल मे चला जाय। लेकिन वहा पर भी तो यही सब होता होगा? ऐसे ही मास्टर होंगे. .ऐसे ही सहपाठी! फिर?

एक दिन उसने किसी पुस्तक मे पढे एक अंश को काट कर सामने की दीवार पर चिपका दिया था कि किसी शब्द में इतनी ताकत नहीं कि उसे चोट पहुंचा सके। उस स्वयं-लिखित सिद्धान्त-वाक्य को बारम्बार पढ़ने पर भी बेत की चोट मार के दुख को कैसे भूला जाय, यह वह नहीं समझ सका।

अनेक महापुरुषों की जीवनिया उसने पढ़ी थी। लेकिन मार की चोट से दुखी न होने वाला कोई उदाहरण उसे याद नहीं आया।

निरपराध मार खाने की बात याद करके, उसकी आखो मे पानी भर आया।

चूंकि बिजली की फिटिंग हो चुकी थी, इसलिए बटन दबाते ही सारे घर मे बिजली के बल्ब जलने लगे।

गोपाल ने चौंक कर अपना सर ऊपर उठाया—उसे किसी ने इस तरह रोते देख तो नहीं लिया ? कुर्ते की बाह से आसू पोंछ डाले।

–भई राधामाधव, अब मेरी कोई जिम्मेवारी नहीं रही।' कहते हुए मगन–मास्टर ने इसी समय घर मे पदार्पण किया।

–आइये मगन–मास्टर ! कैसे चल रही है गोपाल की पढाई ? आजकल तो खूब मन लगा कर पढ़ रहा है। अजी, रात–दिन !

–होगा। लेकिन स्कूल में तो गाली–गलौज करता रहता है। आज कह आया है कि मेरा नाम काट दो। मुझे पढना ही नहीं है। मैने समझाया, कि भइया, पढोगे नहीं, तो करोगे क्या ? इस पर अटसट बकता हुआ भाग कर घर चला आया।

–नहीं जी, मेरा गोपाल ऐसा कर ही नहीं सकता।

–इसी दुलार से तो बच्चे बिगड़ जाते हैं। किसी को कुछ गिनते ही नहीं। कहने लगा, कि स्कूल में सब गधे हैं। जानवर हैं। मुझे भी गाली देने लगा ! बच्चा तुम्हारा है, चाहे बिगाड़ो, चाहे सुधारो ! मेरा तो फर्ज था कहने का, सो मैने कह दिया—कि भइया रे, हम जानवर ही सही, लेकिन अब हमसे ऐसे लड़के पढ़ाये नहीं जायगे।

–मै उसे समझा दूगा। कल वह स्कूल आ जायगा।

–यही तो मैं भी कह रहा हू, कि भाई रे, या तो उसे समझा दो कि पढना–लिखना है, तो गुरू का आदर करना भी सीखे। या फिर रसोई–बसोई बनाना सीखे। ब्राह्मण का लड़का है, इस में कोई शर्माने की बात तो है नहीं।

अभी तक एक जगह बल्ब लगाना बाकी रह गया था। राधामाधव स्टूल खींच कर उस पर खड़े होकर लट्टू लगाने का प्रयत्न कर रहे थे। उनका ध्यान उस ओर होने के कारण, सभवत मास्टजी की सलाह उन्होंने सुनी ही नहीं। सिर्फ हा–हां कहते रहे।

मगन-मास्टर को इतना धीरज कहा ? बोले —अच्छा भई राधामाधव, मैं चल दिया। मैं तो इतना ही कहने आया था, कि उसके यही लच्छन रहे, तो पढाना-लिखाना वेकार है। किसी काम-धंधे में डाल दो। चलूं ?

-मगन-मास्टर, तुम भी यार बातें बहुत करते हो। अभी तक आदत नहीं गयी। ठहरो, मैं भी चौक तक साथ चलता हूं।' कहते हुए वे अध्यापकवर के साथ बाहर चले गये।

यशोदा ने मास्टरजी का उलाहना सुना, तो उसकी आखें कपार पर चढ गयीं। भ्रुकुटिया सिकुड कर एकाकार हो गयी। सीधे गोपाल के कमरे मे गयी। गोपाल अनमने मन से किताब पढने मे लगा हुआ था। उसने सिर उठा कर मा की ओर देखा।

मा ने बेटे से एक बात भी नहीं पूछी। पास ही पड़े जाले साफ करनेवाले वास को उठाकर उसने गोपाल को धुनना शुरु किया। गोपाल हड़बड़ा कर, सावधान होकर बैठ गया। मा क्यों मार रही है, इस ओर ध्यान दिये विना वह, अव तक के उत्तप्त दुख को प्रचण्ड रूप से महसूस कर जमीन पर लोट-लोट कर हा-हा खाते हुए कहने लगा'—मार डालो। सब मिल कर मुझे मार डालो !

मा ने आज तक उस पर हाथ नही उठाया था।

यशोदा रोती जाती, गोपाल को पीटती जाती। कहती रही —स्कूल नहीं जायेगा, तो सड़कों पर आवारों की तरह फिरता फिरेगा ? मैं जान से मार डालूंगी, लेकिन मेरे देखते यह नही होने दूंगी।

राधामाधव सभवत' घर के आसपास ही कहीं खडे थे। गोपाल के रोने-चिल्लाने की आवाज सुनते ही दौड़ कर अन्दर चले आये। यशोदा के हाथ से वास छीन कर बोले —यह क्या कर रही हो भौजाई ?

-नहीं'—यशोदा रुक गयी। क्रोधित आखो से पुत्र की ओर देखती रही। राधामाधव के सामने 'मेरा पुत्र है' कह कर वह गोपाल को पीट नहीं सकती। इसलिए लिहाज कर गयी। वरना क्रोध के मारे पता नहीं वह क्या कर बैठती ? हथेली से आसू पोंछती हुई, गोपाल को वहीं छोड़ कर वह बाहर आ गयी।

उसकी छाती धक् से रह गयी। सामने खड़े उसके पति लाल-लाल खूंखार आखों से उसकी ओर चुपचाप देख रहे थे। आज उन्होंने फिर घिस-घिस कर

हाथों में वधी रस्सी तोड़ डाली थी। गोपाल का करुण-चीत्कार सुन कर वे नीचे चले आये। उनकी आखों से चिनगारिया निकल रही थीं। नसें तनी हुईं और मुट्ठिया वधी हुईं!

पलक झपकते ही यशोदा सभल गयी। दया हुआ क्रोध फिर प्रचण्ड हो उठा। चिल्लाकर बोली — चलो ऊपर। ऊपर चलो। मैं कहती हू ऊपर चलो।

भीखमचदजी आगन के ठीक वीच में अचल खड़े रहे।

गोपाल को छोड़कर राधामाधव वाहर निकल आये।

राधामाधव को देखते ही वे वापस मुड़ कर ऊपर जाने लगे। आज उन्होंने किसी का कोई प्रतिवाद नहीं किया। किसी से कुछ भी नहीं कहा। चुपचाप सीढ़िया चढने लगे। अचानक दो-दो सीढिया लाघ कर वे ऊपर तक पहुच गये। मुड़ कर चीखे — मार डाल, सवको मार डाल! चडालिनी!

राधामाधव ने देखा कि वे अपने कमरे में जाने के वजाय छत पर चढ़ने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे उन्हें पकड़ने के लिए दौड़े।

राधामाधव उनके पास पहुचे तब तक वे छत से नीचे छलाग लगा गये।

कलेजा थाम कर सबने देखा, विजली के खमे को पकड़कर वे आत्मरक्षा के लिए वापस ऊपर चढ़ने के लिए छटपटा रहे हैं और इसी कोशिश में उन्होंने बिजली के तार दोनों हाथों से पकड़ लिये।

करेंट का तगड़ा-सा झटका लगते ही वह पागल, दुखी व्यक्ति इस जीवन की समस्त लीलाओं को समेट गया।

राधामाधव बाहर की ओर दौड़े। लाश को अन्दर उठा लाये। छाती पीट-पीट कर चिल्लाने लगे — मैंने ही बिजली का खभा लगवाया। मेरे ही हाथ से छूट कर भईजी ने अपने प्राण त्यागे।

सारे मुहल्ले में तुरन्त सारा समाचार फैल गया।

पारो ने आकर गोपाल को अपनी गोद में भर लिया।

राधामाधव ने लाश को आगन में लिटा दिया। घुटनों में मुह छिपा कर सिर धुनते हुए छाती पीट-पीट कर कहने लगे — तुम्हारी जबान से भावी* वोल रही थी भौजाई। तुमने बिजली लगाने से मुझे मना किया था। तुम्हारे

* भविष्य

हजार मना करने पर भी मैंने यह सब किया। मुझमें पाप वैठा था, रे। यह सब मैंने किया! यह सब मैंने किया।

यशोदा ने भी यह सारा दुस्काण्ड देखा।

वह रोई नहीं, चीखी नहीं।

मन ही मन उसने इतना ही कहा·— हरि ओम् तत्सत्!

इस आत्म–निवेदन मे प्रस्तुत उपसहार के प्रति करुण विराम था। पति के चरणों के सामने वह घुटनों के वल वैठ गयी। माथा नवाया। पद–धूलि ली। अपनी चूड़िया उतार कर उनके चरणों के पास रख दीं। माथे की टीकी हथेली से पोंछ डाली।

थोड़ी देर तक मृत व्यक्ति का शात चेहरा वह देखती रही। इसके वाद उठ कर अन्दर से एक नया रेशमी दुपट्टा निकाल लायी। पति को ऊपर से नीचे तक ढक कर उनके पास ही पालथी मार कर वह वैठ गयी।

सम्भवत अभी तक गीता की शिक्षा सम्पूर्ण नहीं हुई थी, इसलिए अन्तिम अध्याय खोलकर वह पढने वैठ गयी। राधामाधव से सिर्फ इतना ही कहाः— देवरजी, उठो। जो होना था, वह हो गया। प्रभु की यही इच्छा थी। अव जाओ, सारा इन्तजाम करो।

–भौ. जा. .ई!' इससे अधिक राधामाधव से वोला नहीं गया।

गोपाल इस सारे अग्न्युत्पात को फटी हुई आखों से, विह्वल–भाव से देख कर जोर–जोर से रो पड़ा। इस ससार में दो चार प्राणी ही उसके सगी–साथी थे। उनमें से भी आज एक चला जा रहा है।

–मर्द होकर जी ओछा मत करो, देवरजी। उठो। आज से गोपाल तुम्हें सौंपा। मै सती होऊंगी। इनके साथ ही ससार मे रही, इनके साथ ही चली जाऊंगी!

'मै सती होऊगी' इतनी-सी वात मे कितना अटल निश्चय, कितनी अचल दृढ़ता और सुदृढ सयम है—इस ओर सम्भवतः किसी का ध्यान नहीं गया। राधामाधव उसी तरह विलाप करते रहे।

यशोदा ने देवर से 'न रोने के लिए' भी अधिक नही कहा।

गीता के पुनीत–श्लोकों का गुरु गंभीर स्वर समस्त हाहाकार को चीर कर सृष्टि के सनातन व्यापार की टीका के चरम सत्य के नीचे दव–सा गया।

उच्च स्वर में वह पाठ करने लगी —

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।

सती होन का अर्थ गोपाल समझता है।

पिता की इसी मृत्यु की कल्पना और कामना उसने अनेक बार की है। लेकिन मां की छत्रछाया के विना वह अकेला कैसे रह पायेगा, यह उसने कभी सोचा नहीं था।

यशोदा को आज प्रस्तुत मृत्यु के प्रति कोई शिकायत नहीं। सुना है सती सावित्री यमराज से अपने पति सत्यवान को जीवित करवा लायी थी। मगर आज यशोदा ने यमराज की जो कृपा हासिल की थी, उसका मूल्य चुकाने के लिए कृतज्ञ भाव से वह अपने प्राण अर्पण करने को प्रस्तुत थी।

गोपाल सोच रहा था —आज का दिन कितना अभागा है! अप्रेल के इस प्रथम दिवस में भाग्य ने उसके साथ कितनी करुण हसी की है! इस हसी से अप्रेल के प्रथम-दिवस का निर्माता भी प्रसन्न होकर किलक सकेगा, इसमें सदेह ही है।

आखिर राधामाधव अपने को समाल कर किसी तरह उठ कर खड़े हो गये। यशोदा ने गीता से विना ध्यान उठाये धीरे से कहा —-देवरजी, दो आदमियों का इन्तजाम करना होगा!' और वह फिर तत्वोपदेश को अगीकार करने के हेतु श्लोक पढने में तल्लीन हो गयी।

राधामाधव को अव ध्यान आया—भईजी के साथ भौजाई भी सती होगी।

क्षण भर में बीकानेर के तमाम लोगों को मालूम हो गया-भीखमचदजी की वहू सती होगी!

जिस किसी ने सुना, आकाश की ओर हाथ उठाकर, नमस्कार करके प्रभु की लीला के प्रति नम्रता प्रकट करते हुए, यशोदा की प्रशंसा की।

भीखमचंदजी के इस अन्तिम सौभाग्य के प्रति उस दिन ईर्ष्या करनेवालों की कमी नहीं थी।

आते-जाते लोग आपस में वातें करते —कलि काल आ गया है। लेकिन मत-जत अभी तक वना हुआ है। तमी सूरज ऊगता है, चन्द्रमा अस्त

होता है। सोचो तो सही, भीखमचंद ने अपनी बहू को कौनसा सुख दिया था ? फिर भी वही है धीरजवन्ती, जो अपने इसी पागल पति के साथ जी, और उसी के साथ इस संसार से जा रही ।

कोई कहता —भीखमचंद की बहू खुद तो मर कर मुक्त हो जायगी। पर बिचारे गोपाल का क्या होगा ?

जवाब देने वाले भी मौजूद थे। कहते —कहने को तो राधामाधव के पास वह रह जायगा। लेकिन बिना मा के बच्चे की सुगति थोड़े ही होगी !

तब बीच में बात काट कर कोई कहता —आखिर तो राधामाधव जात का मोदी है। कल को पड़ेगी उसके जनेऊ—फिर तो वह उनके हाथ का खा-पी भी नहीं सकेगा !

किसी अनुभवी आदमी ने सिर हिला कर कहा :—कहते क्या हो जी ? सती होना कोई सहज है ? उड़ती बातें हैं। हमने तो पिछले बीस सालों में किसी को सती होते नहीं देखा। एक वही सती होगी ?

जितने मुंह, उतनी बातें।

ऐसे कहने वाले भी थे —भीखमचंदजी थे, तब तक तो राधामाधव के साथ उनकी बहू का अच्छा खासा 'निभाव' हो जाता था। मरने के बाद कैसे चलता ! जानते नहीं, राधामाधव का सोना-उठना, खाना-पीना, सब कुछ वहीं तो चलता था। वही तो सारा खर्च चलाते थे। सो—समझे ?

समझदार आदमियों का दुनिया में अकाल नहीं।

पढ़े-लिखे लोगों ने कहा :—फूलों की सेज मान कर चिता पर भी पति के साथ चली जाने वाली भारतीय रमणी ही हो सकती है। यही भारतीय संस्कृति है। इसका गौरव अन्तहीन है।

कहते हैं, चरम-सीमा पर आकर हृदय की गति रुक जाती है। क्रिया-प्रतिक्रिया का व्यापार समाप्त हो जाता है। संभवत: इसीलिए यशोदा शान्तमना अंदर जाकर अपने शृंगार में व्यस्त हो गयी। इस शृंगार का कोई अर्थ नहीं। स्त्री-स्वभाव की प्रसन्नता प्रकट करनेवाले ये कुछ अलंकार, सुहाग-चिह्न यदि आज न पहने जायं, तो सती होने के आनंद की गरिमा कम हो जाय। इस तरह का विधान जिन्होंने रचा था, वास्तव में उनके अति-बुद्धिमान होने में कोई संदेह नहीं।

देह के शृंगार से सम्भवत मन की प्रसन्नता व्यक्त हो जाय—तब पति के साथ जल मरने की बात हो जायगी—त्याग ! रोते-कलपते मरने पर तो वह हत्या ही मानी जायगी। देखने-सुनने में भी यही लगेगा।

इन तर्क-कुतर्कों की विषद बात यशोदा नहीं समझती। इस देह का अंतिम शृंगार करते समय, न उसे अपनी खुशी जाहिर करने की उत्सुकता है, न ही अपना दुख छिपाने की आतुरता। बल्कि, हृदय की जो सुन्नता है, उसमें इस संसार के विधि-विधानों में से किसी के प्रति किसी तरह की अवज्ञा न हो जाय—बस कुछ इसी किस्म की बात समझिये।

रात हो चुकी है। इसलिए आज अग्निदाह नहीं हो सकता। सुबह ही होगा।

मुर्दे के पास तीन-चार आदमियों का बैठे रहना जरूरी है। लेकिन घर में भीड़ फटी पड़ती है।

सम्पूर्ण शृंगार सहित यशोदा पति के पास बैठी गीता का पारायण करती रही। आज लाज-शर्म, संकोच, मिथ्या अभिमान, रीति-रिवाज, सब समाप्त हो गये। वह मुक्त-कंठ से गीता के श्लोकों का शुद्ध उच्चारण करके इस संसार से विदा हो जाने वाले व्यक्ति की मुक्ति की प्रार्थना करती रही।

सुबह होते न होते क्वांरी कन्याएं आकर इस असीम धीरजवन्ती सती के चरणों को छू कर मौन आशीर्वाद ग्रहण करने लगीं।

बड़े बूढ़ों ने भी उम्र की मर्यादा को भूल कर प्रणाम निवेदन किये।

नौजवानों ने भावुकता के मारे हाथ जोड़कर अपनी श्रद्धा प्रकट की।

अर्थी सजाई गयी। धूमधाम से शव बाहर निकला। यशोदा पति के साथ ही बाहर निकल आई।

राधामाधव रात भर जागते रहे। हाल-बेहाल हो गये थे। मृत्यु के इस भीषण दुखदायी काण्ड में भी उनका सीना गौरव से फूल रहा था — उनकी भौजाई सती होगी। इसलिए अन्तिम क्रियाकलापों की व्यवस्था में वे किसी तरह की कमी नहीं आने देना चाहते थे।

करनेवालों ने चन्दन का इन्तजाम किया। डेथ-सर्टिफिकेट भी हाथोंहाथ मिल गया। किसी सेठ ने सती के लिए तीन मन घी भिजवा दिया, जो कि उनकी चिता के साथ जलेगा। दस बजे के लगभग एक बड़ा भारी जलूस निकला।

जिस ओर से अर्थी गुजरती, दरवाजों, छज्जों, खिड़कियों और चौकियों पर नर-नारियों की भीड़ लग जाती। फूल वरसते। देवताओं की जयजयकार के नारे लगते। हाथ जोड़ कर श्रद्धानत मस्तक से, विदा हो गये एक व्यक्ति के लिए, तथा विदा होने वाली सती के लिए परम-पद प्रदान करने की परम-पिता परमात्मा से प्रार्थना करते। सती की जयजयकार के गगनभेदी नारे वीच-वीच में सुनाई दे जाते।

आज उस पागल की अर्थी के साथ हजारों व्यक्ति 'राम नाम सत्य' की दुहाई देते हुए क्षण-क्षण पर कधा वदल रहे थे।

राधामाधव हैं सवसे आगे। हाथ मे अग्नि-दाह के लिए अगारों से भरी हुई हंड़िया लिये गोपाल उनके साथ ही चल रहा है। उसकी आखों से आसू अवश्य वह रहे हैं। लेकिन मुंह फाड़ कर आज वह रो नहीं पाता। राधामाधव राम-नाम-सत्य की वात का उच्चारण इतने जोर से कर रहे हैं कि उनके मन का दुख इस गौरव के नीचे दव-दव जाय।

पिता की मृत्यु की वात गोपाल ने अनेक वार सोची है। लेकिन मा के सह-मरण का दुख सहने की कल्पना उसने की नहीं थी। इसे देख कर उसका हृदय फटा जा रहा था। लेकिन पागल का पुत्र होने के कारण, किसी तरह की नादानी न वताने के अपने सकल्प के अनुसार, वह चुपचाप जलूस के आगे-आगे अग्नि-पात्र लिये धीरे-धीरे कदम वढ़ाता जा रहा है। उसने सहना सीखा है। उसे इसका अभ्यास हो गया है।

फिर भी अपने चारों ओर फैले घनीभूत अन्धकार में अपनी लंबी जीवन-यात्रा किस के सहारे पूरी करेगा? इस प्रश्न का उत्तर सभवतः वह मा से पूछना चाहता था कि—'पिता और मा के साथ पुत्र के सहमरण की कोई विधि हमारे धर्म-शास्त्र में नही है?

पूछने का कोई उपाय नहीं था। अवकाश नहीं था।

श्मशान-घाट काफी दूर है। इसलिए लोग वार-वार कन्धा वदल रहे हैं। यशोदा माथा नीचा किये चली जा रही है। जीवन भर विना घूंघट के वह घर से वाहर एक कदम नहीं निकली, पर आज सारी लोक-लज्जा से ऊपर उठ कर वह इतने लम्वे रास्ते को पार कर आई।

श्मशान आ गया। अर्थी कधों से उतार कर नीचे रख दी गयी। चारों ओर धूल और राख फैली हुई है। इधर-उधर अधजले लकड़ी के टुकड़े पड़े हैं। कहीं बैठने की जरा-सी जगह नहीं। फिर भी भीड़ है, कि फटी पड़ती है—सती को देखने के लिए, सती होते हुए किसी स्त्री को देखने के लिए। कुछ लोग एक ओर बैठ कर सतियों की स्तुति गा रहे हैं। भजन-कीर्तन चल रहा है। सती की जयजयकार के गगनव्यापी नारे बीच-बीच मे सुनाई दे रहे हैं।

जो चर्चा सारे शहर में फैल चुकी थी, वह पुलिस के कानों तक कुछ देर से पहुची। वैसे, इस तरह की घटनाओं से पुलिस को विशेष दर्द नहीं होता। क्योंकि उनमें से प्रत्येक को मालूम है कि इन सबसे किसी राज्य-शासन की कोई हानि होने वाली नहीं है। बल्कि राज्य में धर्म की प्रतिष्ठा ही मानी जायगी। इस तरह की दुर्घटनाओं के बन्द हो जाने से देश में महिलोद्धार हो जायगा, ऐसा विश्वास भी इन लोगों का नहीं।

मगर इन्हीं दिनों वहा पोलिटिकल-एजेन्ट के दौरे पर आ मरने के कारण, यह जरा-सा मामला किसी न किसी तरह से कोई राजनीतिक पहलू अवश्य प्रस्तुत कर सकता था। लिहाजा, पुलिस के हथियारबन्द सिपाही श्मशान-घाट पर 'देर आयद दुरुस्त आयद' के हिसाब से पहुच गये। आते ही अधिकारी ने गभीर स्वर में घोषणा की —सती नहीं हुआ जा सकता! यह नहीं हो सकता। कानूनन जुर्म है। मना है।

शव-यात्रा के साथ आई भीड़ के कुछ आदमी पुलिस के सामने तर्क-युद्ध करने को प्रस्तुत हो गये। धार्मिक जोश के कारण उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति इस काण्ड को लेकर मरने-मारने तक को तैयार हो गया। अनेक लोगों का समवेत स्वर सुनाई पड़ा —बड़े आये हैं, सती को रोकने! देखें, कौन है माई का लाल!

राधामाधव सबसे आगे थे। बोले —कौन किसी की मौत को रोक सकता है? जरा सूरत तो देखू उसकी? मरने से रोक सकते हो, तो जिला तो दो मेरे भाई को? नहीं होगी भौजाई सती। शहर में चोरी-चकारी भी बहुत होती है, रोक सकते हो, तो जाकर उसे रोको। यहां पचायत मत करो। चुपचाप चले जाओ। नहीं तो कहे देता हू—अच्छा नहीं होगा।

एक व्यक्ति आगे आया। नौजवान था। बोला —सती तो सती होगी ही, तुमने अधिक ची-चप्पड़ की, तो तुम्हें भी भून देंगे।

पुलिस-सार्जेन्ट ने गंभीर स्वर मे इतना ही कहा —कानून कानून है। उसके खिलाफ कोई नहीं जा सकता। आप लोग लाश को जला डालिये, और सती को वापस घर ले जाइये।

भीड़ का क्रोध प्रतिक्षण उत्तेजित होता जा रहा था। सार्जेन्ट की बाते सुनने का धैर्य किसी मे नहीं था। बात करते-करते किसी ने उसे धक्का दे दिया। सार्जेन्ट का टोप नीचे गिर पड़ा। शासन-सत्ता का इस तरह घनघोर अपमान सम्पादित होते ही पुलिस ने अपने सहज स्वाभाविक कर्तव्य के अनुरूप लाठिया सभाल लीं। हुक्म दिया गया —पाच मिनट के भीतर-भीतर आप यहा से हट जाइये। वर्ना किसी भी तरह की दुर्घटना के लिए हम जिम्मेवार नहीं होंगे।

-अब क्या होने वाला है—यह जानने के लिए इस कोने से उस कोने तक आतंक फैल गया।

बात बढ गयी है, और खून-खराबा होने की नौबत आ गयी है, यह खबर तुरन्त चारों ओर फैल गयी। लोग अपने धार्मिक-जोश मे शहीद होने के लिए तैयार थे।

कई लोगों की आवाज एक साथ सुनाई दी —देखते हैं, तुम क्या कर लेते हो ?

यशोदा भीड़ चीरती हुई उभय-पक्ष के बीच आकर खड़ी हो गयी। शान्तभाव से पूछा —मैं सती नहीं हो सकती ?

सार्जेन्ट एक हाथ से टोप सभालते हुए, उसकी मर्यादा निभाने मे व्यस्त थे। बोले —नहीं!

-नहीं कैसे ?

एक सिपाही आगे आकर नम्र स्वर मे कहने लगा —मा-जी कानून किसी के सत को कभी नहीं रोक सकता। हम इतना ही चाहते है कि आपका सत्त कानून को न तोड़े। आपको देख कर इतने लोगों के मन मे जो श्रद्धा-भक्ति उमड़ रही है, वह किसी के लिए बडे लोभ की चीज हो सकती है। इसलिए उन लड़कियों की बात भी सोचो, जिन्हे लोग इस तरह से पति के साथ जीते-जी जला कर मार डालेंगे।

–बिना उसकी इच्छा के ?' यशोदा ने पूछा।

–हा मा–जी !' 'युवक ने आगे कहा। वह सम्भवत नया-नया ही पुलिस मे भर्ती हुआ था। उसका विश्वास था, कि सारा मामला समझाने–बुझाने से ही सुलझ जायगा। इसलिए और विनीत होकर उसने आगे कहा —हा, बिना उनकी इच्छा के ! पति के साथ सहमरण के पुण्य का लोभ बता कर, एक दिन ऐसा ही होता था—जब लोग स्त्री को पति के मरने पर उसके साथ जबर्दस्ती जिन्दा जला डालते थे।

'तब देश के महाप्राण व्यक्तियों ने इस पशुता को बन्द करवाने के लिए सारी लाछना सही। तब जाकर यह नर-बलि बन्द हो सकी। आज आप फिर उसी का श्रीगणेश कर रही हैं। मैने देखा तो नहीं, लेकिन किताबों मे पढा है, कि निरपराध बालिकाए, जीवन के प्रति अपरम्पार मोह से प्रताड़ित, सती होते समय जब करुण–चीत्कार किया करतीं तो अनेक तरह के वाद्य बजाकर, उनकी चीखों को सुनने नही दिया जाता। कहते, इस चीख को सुन लेने पर कल्याण नहीं होता। क्यों नहीं होता, सो तो वे ही जानें। लेकिन इस अकल्याण के भय से मनुष्य जानवर होने से बाज नहीं आता।

सिवाय यशोदा के किसी ने इस लम्बे प्रवचन को ध्यान से नहीं सुना।

लोगों ने आवाज लगाई —बन्द करो ये लेक्चरबाजी !

यशोदा एक क्षण तक सारी बात पर गौर करती रही। इसके बाद उसने शान्त भाव से कहा —तुम्हारी ये सारी बातें मै नहीं जानती। जानने की अब इच्छा भी नहीं। अब मेरा जीना नहीं हो सकता। मेरा इस ससार से अजल-दाना उठ गया। सो, मुझे कोई कानून नहीं रोक सकेगा। मेरा रास्ता छोड़ दो। किसी पर जोर–जुल्म मत करो। मरते हुए आदमी की अन्तिम कामना तो कोई नहीं ठुकराता ? फिर मेरा अन्त–समय इस तरह मत बिगाड़ो।

पुलिस–दल सती को घेर कर खड़ा हो गया। दूसरी ओर चिता सजाने का उपक्रम हो रहा था।

युवक सिपाही ने कहा —सती की बात तो कोई किसी जमाने में रोक नहीं पाया मां–जी। हाथ जोड़ कर मुझे इतना ही कहना है, कि सतीत्व के इस दिखावे से कानून तोड़ कर, पुराने जमाने के जिस जगलीपन को एक बार खत्म किया जा चुका है, उसकी फिर से प्रतिष्ठा मत करो।

यशोदा सोचती रही :—सचमुच यदि कल से यही विधान वन जाय, कि पति की मृत्यु के वाद, पत्नी की हत्या कर दी जाय, तो ?

वह इस समय किसी भी वात पर विचार करना नहीं चाहती थी। अन्तिम समय मे किसी को कुछ कहने की उसकी प्रवृत्ति भी नहीं थी। पति की मृत्यु के वाद उसने एकवार भी गोपाल की ओर देखा तक नहीं। राधामाधव के सामने किसी भी प्रकार की चिन्ता व्यक्त नहीं की। इस ससार को छोड़ते वख्त किसी भी लेन-देन, लौकिक-व्यवहार की ओर उसने ध्यान नहीं दिया था। फिर भी आज उसे सहज मृत्यु भी नसीव नहीं हो सकी।

सहज स्वर मे उसने सती होने का निश्चय प्रकट किया था।

इसके वाद, गीता के पुण्यश्लोको का अन्त मन से स्मरण करती हुई, इस सारी दुनिया से वह अपना नाता-रिश्ता तोड़ लेना चाहती थी। इन प्रस्तुत परिस्थितियों से वह चौंक गयी। इसलिए नहीं, कि कानून की मर्यादा के प्रति वह जागरूक हो गयी थी। वल्कि, इसलिए, कि उसने देखा—पुलिस से लड़-मरने के लिए कई लोग उतावले हो रहे हैं। चारों ओर शोर-गुल हो रहा है। पुलिस वाले अपने नियत-समय के व्यतीत होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

दो चार व्यक्ति आगे वढे। पुलिस-अधिकारी को लक्ष्य करके वोले :—तुम पापविष्ठाओं को सती से वात करने की हिम्मत पड़ी कैसे ? उसे वहका-फुसला कर, स्मशान आई हुई को, वापस घर भेजना चाहते हो ?

पुलिस-वालो ने इस वात का चाहे जो उत्तर दिया हो, लेकिन यह अस्पष्ट नहीं रहा, कि एकाध दुर्घटना अवश्य होगी।

यशोदा ने स्थिर स्वर मे कहा,—इस समय किसी तरह का झगड़ा मत करो। मैं सव लोगों को हाथ जोड़ कर यही प्रार्थना करती हूं। कानून किसको क्या इजाजत देता है, यह मुझे मालूम नहीं। लेकिन मुझे निमित्त वना कर, यहा कोई दुर्घटना मत करना। तुम सव शात रहो। मैं आज सती नहीं होऊंगी। मेरा पुण्य इतना प्रवल नहीं।

फिर उस युवक सिपाही की ओर मुखातिव होकर वोली—मैं तुम्हारे कानून की मर्यादा भंग नहीं करूंगी। अव तुम सव जाओ।

चिता की पूरी तैयारी हो चुकी थी। पिता के सामने खड़े गोपाल के हाथ से अग्नि-पात्र लेकर यशोदा ने कुछ घास जला कर पति की चिता में आग लगा दी।

धू-धू करके सुगन्धित चन्दन और घी से बुझी हुई लकड़िया जलने लगीं।

सती का वक्तव्य और उसकी यह कर्म-लीला देख कर, भीड़ की उत्तेजना की सीमा नहीं रही। औरत कितनी झूठ, मक्कार और दग़ाबाज हो सकती है—छि छि ! घर से जो सती होने का सकल्प लेकर निकली थी, वह पुलिस के अदने से सिपाहियों के बहकावे में आकर वापस घर लौटने की बात कहती है—फिर यह धोखा नहीं, तो है क्या ?

पुलिस की उपस्थिति में और मर्द होने के दर्प में यशोदा पर तो किसी ने हाथ नहीं छोड़ा, लेकिन पुलिसवालों से कुछ लोगों की भिड़न्त जरूर हो गयी। अब तक पुलिस द्वारा दिया गया अल्प-समय व्यतीत हो चुका था। सती के वक्तव्य ने उनके निर्णय को पुष्टी दे दी। इसलिए पुलिसवाले भी अपने कर्तव्य-पालन और मर्यादा निभाने के लिए तत्पर हो गये।

जो नवयुवक सिपाही यशोदा से बात कर रहा था, उसे जनता जनार्दन द्वारा इतना पीटा गया, कि एम्बूलेंस बुलाकर उसे अस्पताल ही भिजवाना पड़ा।

लोगों का थू-थू का उच्चघोष प्रबल होता गया, और दूसरी ओर पागल का शव अग्नि की लपटों में जलता रहा।

यशोदा चुपचाप चिता की ओर देखती रही।

इस सारे उपद्रव के मध्य राधामाधव अपनी भौजाई के पास ही, उसकी रक्षा के लिए खड़े रहे।

कुछ लोग लौटने लगे। मारे घृणा के श्मशान की छूत से मुक्त होने के लिए स्नान करना तक वे भूल गये।

जिसने चन्दन भिजवाया था, वह हिसाब लगाने बैठा, कि कितने रुपये पानी में गये।

जिसने घी की व्यवस्था की थी, उसे एक ही बात से सतोष था कि घी असली नहीं था, नहीं तो पता नहीं कितना नुकसान हो जाता !

युवा-सिपाही पर किये गये आक्रमण के परिणाम स्वरूप पुलिसवालों का क्रोधित होना स्वाभाविक था। इसलिए जो भी सामने आया, उस पर डडो की

वह वर्षा हुई कि लोग धर्म-शास्त्र के मोह को छोड़कर विरक्त-भाव से अपनी जान ले-ले कर भागने लगे। पुलिस का हाथ उठते ही श्मशानघाट भगवान रुद्र की क्रीड़ास्थली वन गया। इस लज्जाजनक काण्ड को जिसने अपूर्व धीरज के साथ सहा, उसका सत्त सचमुच चिरस्मरणीय रहेगा।

क्षुब्ध भीड सारे वीकानेर मे घृणित चर्चा का विस्तार करती हुई लौट आई।

ग्यारह :

कुछ देर के लिए आत्मगौरव के वल पर नूतन जीवन की जो सुनहली भूमिका गोपाल के सामने वन रही थी, वह पल मात्र मे छिन्न-भिन्न हो गयी। सो, इस दुष्काण्ड से सवसे अधिक लज्जित भी वही हुआ था। उसे महसूस हुआ, कि अव उसकी वदनामी और निन्दा की कोई सीमा नहीं रहेगी। पिता और माता की मृत्यु—और उनके वियोग के कारण उसकी आखो मे आसू जरूर आये थे। लेकिन सारे शहर की श्रद्धा-भक्ति लेकर, दुखित मा के अन्तिम ऐश्वर्य को देखकर, गौरव से उसका सीना फूल उठा था। मा को श्मशान से वापस आते देखकर, वहा पर पुलिसवालों का उपद्रव देख कर और लोगो की आलोचना-प्रत्यालोचना सुन कर—उसने सच्चे हृदय से, मा के मर जाने की कामना की। छिः, इस अपमान के वाद, सारे शहर की निन्दा और लाछना सहते हुए, जीया जायगा कैसे?

अविचलित थे एक राधामाधव। इस सारे विवाद, वदनामी और चर्चा की तुच्छता के तमाम आवरणों को भेद कर भी, अपनी भौजाई के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा अक्षय थी। घर आने पर पारो से उन्होंने यही कहा—लक्ष्मी, भौजाई ने जो कुछ किया है, उसे समझने की सामर्थ्य हम-तुम मे हो नहीं सकती। वह है देवी। हम इस नर्क के कीड़े। प्रभु की लीला समझने के लिए किसी ने इतना पुण्य किया ही नहीं तो कोई समझेगा कैसे?

यशोदा सुन्न मन से घर वापस आ गयी। मृतक के घर मे किस तरह के औपचारिक कर्म-काण्ड होने चाहिये, इस ओर उसने ध्यान नहीं दिया।

अपने छोटे से मन्दिर के सामने वह फिर गीता खोल कर बैठ गयी। गोपाल घर में ही था। किसी ने अब तक अन्न-जल ग्रहण नहीं किया था। राधामाधव घर के बाहरी हिस्से में सहानुभूति के लिए आने-वाले दो चार आदमियों के साथ बैठे, इस दुखद काण्ड की विविध प्रकार से, दुखित मन से चर्चा कर रहे थे।

दोपहर ढल गया।

सन्ध्या हुई।

आंगन के एक कोने में बड़ा-सा दीपक मृतक के नाम पर जलता रहा।

राधामाधव ने गोपाल को अपने पास बिठा लिया। अभी तक दोनों ने अपना सर नहीं मुड़ाया था, नाई द्वारा दोनों के सिर घोट दिये गये।

रात हुई।

सन्नाटा फैल गया। कोतवाली की घड़ी के टकोरे बजते रहे।

गोपाल एक कोने में जाकर चुपचाप लेट गया।

यशोदा रात भर जागती रही। जीवन की क्षणभगुरता का पाठ पढती रही।

रात ढलती गयी। तारे डूबते रहे, उतरते रहे। सन्नाटा अधिक घनीभूत होने लगा। गोपाल की नींद घुलती रही। दीपक मन्द होने लगा। रोशनी कम हो गयी। फिर भी यशोदा गीता के श्लोकों का मनन करती हुई अपनी समाधि में अचल बैठी रही।

भोर होने आई। अठारहवें अध्याय को समाप्त करके उसने गीता बुझते हुए दीपक के सामने रख दी। हाथ जोड़कर, सिर धरती पर टेक कर, विश्वनियन्ता को प्रणाम निवेदन किये।

अब तक जिन झंझावातों, तूफानों और कठिनाइयों के बीच से बारम्बार पराजित होकर भी उसका जीवन अपनी दिशा की ओर निरन्तर बढता रहा था, आज उन तमाम पराभूत चीजों से अलग होकर, मानों वह थक गयी हो। जैसे निश्चित मजिल पर पहुचने पर पूर्ण विराम मिल गया हो।

गोपाल के प्रति अब तक की सजोई हुई सारी ममता निर्विकार हो गयी। फिर भी बुझे हुए मन से अपने एक मात्र पुत्र को उसे एक सफाई देनी थी।

इसलिए गोपाल के पास जाकर, उसके सर पर हाथ फेरते हुए उसने स्नेहविगलित कंठ से कहा.—प्रदर्शन की गरिमा से सतित्व की महिमा भंग हो जाती है। जाते समय जो गलती कर गयी हूं, उससे यदि मुझे मुक्ति न मिले, तो तूं हमारी गति करवा देना। अपने मा-बाप की अस्थिया गयाजी जाकर विसर्जित कर देना।

नींद में सो रहे गोपाल ने महाप्रस्थान के पथ पर जा रही यशोदा की बात नहीं सुनी। सम्भवत' इस वक्तव्य का मर्म और अर्थ भी वह नहीं समझ सकेगा।

वह उसी तरह नींद मे सोता रहा।

और एक प्राणी इस विशाल ससार से स्वेच्छा से विदा होने के लिए सम्पूर्ण वैराग्य सहित प्रस्तुत हो गया।

पति की मृत्यु के वाद यशोदा ने एक क्षण के लिए भी मन को चंचल नहीं होने दिया। पति के साथ सहमरण का निश्चय करने के वाद भी उसने गोपाल की ओर एक वार देखा तक नहीं!

इतना भीषण काण्ड घटित हो गया। फिर भी एक वार भी उसने छोटापन महसूस नहीं किया। लज्जा अथवा अवसाद प्रकट नहीं किया। यह विराम और यह विराग उसके लिए स्वत सिद्ध हो गया।

उसने कुडी में से पानी निकाला। स्नान की। तत्पश्चात कपडे वदले। सफेद कोरी धोती पहनी। फिर आगन मे आकर सीधी चित्त लेट गयी। ऊपर विस्तीर्ण आकाश में भोर का तारा अभी भी चमक रहा था।

अन्तरिक्ष मे उपस्थित परमात्मा को उसने नमस्कार करके, अनन्त दूरी तक फैले हुए नीलाम्वर की ओर देखा और सकल ससार से भूलचूक के लिए माफी मागी। अन्त करण से सवको क्षमा कर दिया।

– त्वमेव शरणम् मम देवदेव'—कह कर उसने आखे मूंद लीं।

सुना है, कि आदमी यदि अपना दुख रो-चिल्ला कर व्यक्त न कर दे, तो इसका भयंकर असर उसके मस्तिष्क पर पड सकने की संभावना है। यदि अधिक देर तक दुख का उत्ताप हृदय मे घुटता रहा, तो व्यक्ति की मृत्यु अवश्यम्भावी है!

शरीर-विज्ञान के वेत्ताओं द्वारा प्रमाणित इस तत्व को सत्य माना जाय, अथवा परमात्मा द्वारा यशोदा की अन्तिम प्रार्थना स्वीकृत होने की सभावना को स्वाभाविक माना जाय, यह अपनी-अपनी रुचि की बात है। इस सम्बन्ध मे किये जाने वाले विवाद से कोई स्पष्ट सूत्र हाथ नहीं लग सकेगा।

धीरे-धीरे उसके निढ़ाल शरीर की चेतना लुप्त होने लगी।

उसे महसूस हुआ, कि चारों ओर अन्धकार फैल रहा है, और उसमे किसी एक ओर से तीव्र प्रकाश दिखाई दे रहा है।

सुन्न शरीर को एक क्षण के लिए लगा, कि मानों दिमाग फट रहा है। असह्य वेदना हुई।

फिर यह पल भी व्यतीत हो गया, और पति की मृत्यु के बाद जीवन-त्याग देने वाली यशोदा अपने अटल विश्वास के अनुसार पति-पग का अनुगमन करती हुई, अक्षय स्वर्गलोक को चली गयी।

निबिड़ निस्तब्ध वातावरण मे उसने किसी तरह के भय की सृष्टि नहीं की। उस एक अतिथि ने जाते समय मानों कोई हड़बड़ाहट नहीं की। कुछ लेने-लिवाने की भागदौड़ नहीं की। वह चुपचाप चली गयी।

गोपाल सो रहा था, वह सोता ही रहा।

भगवान सूर्यनारायण ने दर्शन दिये। दूसरे दिन का अविर्भाव हुआ।

गोपाल आखें मलता हुआ उठ खड़ा हुआ।

प्रभात जितना सुन्दर रोज हुआ करता है, उतना ही आज भी था। जीवन के प्रति जिस प्रकार सबकी सजगता कल तक थी, आज भी वह कायम है। लोग नित्य-कर्म में व्यस्त हैं। बाहर कौओं-चिड़ियों का कलरव सुनाई दे रहा है।

उसका अनुमान था, कि मां यहीं कहीं पास में सो रही होगी, अथवा गीता-पाठ कर रही होगी।

सामने देखा, आगन में खूब पानी फैला हुआ है। ठीक मध्य में उत्तर की ओर सिर किये, सिर से पैर तक सफेद कोरी साड़ी ओढ़े यशोदा लेटी पड़ी है।

पास जाकर उसने पुकारा —मां!

इस मार्मिक सम्बोधन का प्रत्युत्तर देनेवाला अब चेतन नहीं था। वह इस संसार से विदा ले चुकी थी। दान-प्रतिदान के समस्त नियमों से मुक्त हो चुकी थी।

चेहरा खोलते ही उसने देखा, मां की आंखें खुली हैं। चेहरे पर शांति है। शरीर तन गया है।

पलक-झपकते ही वह समझ गया—मां चली गयी। मर गयी।

कल जिसकी मृत्यु-कामना उसने सर्वान्तःकरण से की थी, उस अभिशाप के इस प्रत्यक्ष रूप की भयंकरता देख कर वह रो पड़ा।

थोड़ी देर तक तो वह मा के पास बैठा रोता ही रहा। फिर धीरे-धीरे चुप हो गया। मा के प्रसन्न-मुख की ओर देखकर सोचने लगा.—मा, तुम्हें जाना ही था, तो कल चली जातीं। मैं गर्व से सबको कह सकता—मेरी मा सती थी। वह अपना सत्त समेट कर चली गयी। लेकिन जाते-जाते जो बदनामी और लाञ्छना मेरे सिर लाद गयी हो, मैं अकेला उसे संभालूंगा कैसे?

मन और भाषा का निवेदन व्यर्थ था।

वह मा के चरणों मे लोट गया। जाते-जाते मुझे आशीष तो दे जातीं। बता तो जातीं—मैं क्या करू?

एकाएक उसे लगा, जैसे मृत मां का पैर हिला हो! मृत-व्यक्ति हिल नहीं सकता, यह वह जानता है। इस काल्पनिक दृश्य को देखते ही उसके शरीर का समस्त रक्त एकत्रित हो गया। स्नायु तन गये। बाल कांटों की तरह खड़े हो गये। वह बुरी तरह डर गया।

जिस मा के वियोग में उसकी सारी करुण वेदना अब तक सिसक रही थी, उसी मा से डर कर वह कहीं भाग जाने के लिए व्याकुल हो उठा।

उठकर, दरवाजा खुला छोड कर वह बाहर निकल आया। कुछ निश्चिन्तता की सांस लेकर उसने सोचा—अरे, मैं मा से डर गया? छि छि!

वह वापस नहीं लौटा। सीधा राधामाधव के घर की ओर चला गया। वे रात भर मकान के बाहरी हिस्से की चौकी पर पडे रहे थे। सुबह होने पर नित्य-कर्म सम्पादित करने के लिए घर गये ही थे। पीछे-पीछे गोपाल पहुंचा।

राधामाधव की गली मे आज शेरखब्बर नहीं है। स्वास्थ्य-विज्ञान ने जिन इन्जेक्शनों का आविष्कार कर डाला है, उससे पूरी आशा है, वह अब पागल नहीं

हो सकेगा। उसे अब कोई सक्रामक बीमारी नहीं लगेगी। आज गोपाल के हाथ मे तपेली नहीं है। काकी से लड़-झगड़ कर छाछ मागने भी नहीं आया है। न राधामाधव का स्नेह प्राप्त करने के लिए आज वह कोई उपद्रव ही करेगा। आज वह आया है—अपनी मा का मृत्यु सवाद सुनाने।

और इसके बाद वह यहा आ जायगा, आश्रय की भिक्षा मागने।

रास्ते में दो-एक आदमी मिले। गोपाल ने किसी की ओर ध्यान नहीं दिया। डर-सा लगा। सोचा—शायद ये सब मन-ही-मन कह रहे होंगे—देखो तो, यह है वह गोपाल, जिसका पागल पिता कल मर गया था—और जिसकी मां श्मशान घाट से सती होने का सकल्प लेकर लौट आई थी।

जी किया, कि इस तरह की आलोचना करनेवालों के कानों के पर्दों के पास जाकर वह बुलन्द आवाज से यह समाचार दे दे—यदि इस बात से तुम्हें तसल्ली हो सकती है, तो सुनो, मेरी मा कल नहीं— तो आज इस ससार से चली गयी। मर गयी।

राधामाधव अपने आगन के एक कोने मे बैठे दातुन कर रहे थे। गोपाल धीरे-धीरे आकर माधवकाका के सामने खड़ा हो गया। बोला—काका, मा मर गयी!

उसकी आखों से आंसू बह रहे थे। फिर भी रो-धो कर गली मुहल्ले के लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते हुए उसे लज्जा का बोध हो रहा था। लज्जा का बोध इसलिए हो रहा था—क्योंकि अब वह पागल का बेटा नहीं है। पागल इस ससार से विदा हो चुका है। अब वह अकेला है, जो कि पागल नहीं है। उसके किसी काम की आलोचना पागल के रूप में नहीं की जा सकती।

राधामाधव जैसे बैठे थे, उसी तरह चौंक कर दौड़ते हुए भौजाई को सभालने के लिए भागे। पीछे-पीछे पारो गोपाल का हाथ पकड़े वहां पहुच गयी।

सामने देखा—यशोदा आगन के बीचोबीच चित्त लेटी हुई है। चारों ओर अभी भी पानी फैला हुआ है। अन्दर कोई कुत्ता अवसर देख कर घुस गया था। इन प्राणियों के आगमन की सूचना मिलते ही, दुम दबा कर वह भाग गया।

पारो ने श्रद्धा सहित अपनी जिठानी को नमस्कार किया। वह सती थी, आज अपने तेज मे विलीन हो गयी। भगवान, मुझे भी ऐसी ही सुबुद्धि देना—यह कामना करते हुए उसने नीचे तक झुक कर जिठानी को प्रणाम किया।

कल तक इसी जिठानी के प्रति तिरस्कार के मारे वह स्वयं संकुचित हो रही थी। उस अभागिन की मौत से सचमुच पारो आज अत्यधिक विचलित हो उठी। मरनेवाला जी उठे, और फिर मर जाय, तो शोक अधिक घनिष्ट नहीं होता। लेकिन जिसे श्राप दिया जाय; और वह उसी के कारण नष्ट हो जाय, तो अपनी क्षमता का गर्व शायद उतना नहीं होता, जितना, कि अभागे के प्रति करुणा; संभवत अपने क्रोध के प्रति लज्जा का भी बोध होता हो।

यह समाचार भी जल्द ही सारे शहर मे फैल गया।

कल जिसकी शव-यात्रा मे जाने-अनजाने अनेक लोग एकत्रित हो गये थे, आज उसकी लाश उठाने के लिए चार आदमियों को ढूंढ निकालना मुश्किल हो गया।

इसका कारण था·—

आज पुलिस वालो ने देर नहीं की। यशोदा की मृत्यु का समाचार सुनते ही वे ठीक समय पर, सीधे मृतक के घर ही चले आये। सवाल उठा, कि इस औरत ने आत्महत्या की है, या किसी ने जहर देकर उसे मार डाला है?

राधामाधव इस प्रश्न का क्या जवाब दे, समझ नहीं पाये। यही कहा —देख तो रहे हो, मर गयी! कैसे मर गयी, इस बात का उत्तर तो यमराज ही दे सकते हैं।

लेकिन यमराज से सीधा सम्पर्क न होने के कारण पुलिस के अधिकारी ने इस दलील को स्वीकार नहीं किया। सिर हिलाकर यही कहा —बिना डाक्टरी-सर्टिफिकेट के लाश को नहीं उठाया जा सकता।

—तो डाक्टर को क्यों नहीं बुला लेते? फरसोत्तमजी मेरे दोस्त हैं। वे सर्टिफिकेट दे देंगे। यह तो सब को दिखाई दे ही रहा है, कि यह मर गयी। बिना डाक्टर के कहे इसे मरा हुआ भी तुम लोग नहीं मान सकते? आखिर तुम सब आदमी हो या राक्षस?

इस विशेषण से पुलिस के अधिकारी महोदय प्रभावित नहीं हुए। न उनके इस प्रश्न का कोई उत्तर ही दिया गया। वे अपनी ही बात कहते रहे:—सरकारी

डाक्टर से सर्टिफिकेट हासिल करना होगा, कि इसने आत्महत्या की है। या किसीने इसे मार डाला है? पोष्टमार्डम होगा। फिर लाश जलाने को मिल सकेगी।

राधामाधव को क्रोध आ गया। बोले —दुश्मनी करनी हो, तो और किसी मौके पर करते। किसी की मिट्टी खराब करने से तुम्हें क्या लाभ हो जायगा? इस औरत ने सारी जिन्दगी तकलीफें उठाई हैं। एक दिन उसे किसी तरह का सुख नसीब नहीं हुआ। अब मर जाने पर तो उसे शांति से जाने दो।

लेकिन अधिकारी महोदय अड़े रहे। लाश बिना सरकारी डाक्टर के सर्टिफिकेट नहीं उठाई जा सकती—अपने इस अटल निश्चय पर वे डटे रहे।

एकबार तो राधामाधव को जोश आया कि ऐसी कड़वी बात करने वाले का सर फोड़ दिया जाय। लेकिन जिस भौजाई ने कल इतना तिरस्कार सह कर भी, किसी पर क्रोध नहीं किया, उसी भौजाई की लाश के सामने इतना बड़ा अपराध करते उनसे नहीं बना। इसलिए कुछ देर तक तो वे पुलिस अधिकारी की ओर देखते रहे, इसके बाद आखों मे आंसू भरकर उनके पांव पड़ गये। बोले —महाराज, मुझ पर तुम्हारा गुस्सा हो, तो मै पांव पकड़ कर माफी मांग लेता हूं। बख्स दो। चारों ओर से दुख-सकट हैं, तुम भी इस तरह बदला मत लो। तुम्हें मुझ पर दया नहीं आती हो, तो न आये, इस लड़के पर ही मेहरबानी कर दो। देखो, इस बिचारे ने कितना कुछ बर्दास्त किया है। मा-बाप जैसे-कैसे भी थे, छोड़ कर चले गये। अब इसका इस पृथिवी पर कोई नहीं रह गया। इतनी मुसीबतें सहता हुआ यह कहीं पागल न हो जाय। सार्जेन्ट-साहब, मैं आपके पात्र पड़ता हू। आज तक भगवान शकर के अलावा मैने किसी के पांव नहीं छूए, उनके ही नाम पर बख्स दो। वह सती थी, उसे उसके सम्मान के साथ इस ससार से विदा होने दो। वर्ना ससार में कहीं धर्म नाम की कोई चीज नहीं रह जायगी।

सार्जेन्ट बड़े ध्यान से राधामाधव की बात सुनता रहा। बीच-बीच में अपने पाव छुड़ाने की भी चेष्टा करता। लेकिन राधामाधव ने उसके चरण छोड़े नहीं।

राधामाधव जैसा अक्खड़ आदमी एक-एक करके सब अधिकारियों के पात्र पड़ गया। मगर कानूनी फर्ज के सम्मुख कोई उन पर दया नहीं कर सका।

कुछ भले आदमी यशोदा की मृत्यु का समाचार सुनकर आये भी, तो पुलिस को देख कर धीरे-धीरे सरकने लगे।

थोड़ी देर मे अेम्बूलेंस आ गयी। शव पुलिस के सरक्षण मे पोस्टमार्डेम के लिए अस्पताल भेज दिया गया। वहा से यह प्रमाणित होने पर, कि इस औरत की मृत्यु स्वाभाविक रीति से हुई है—लाश को जलाने की इजाजत मिल जायगी।

अस्पताल के वाहरी वरडे मे बैठे-बैठे गोपाल, राधामाधव और उनके चार-पाच भंगेरी मित्र लाश के सम्वन्ध में डाक्टरी अभिमत जानने का इन्तजार करते रहे। अन्त में डाक्टरो ने काफी वहस-मुसाहवा करके यह मान लिया, कि इस औरत की मृत्यु विना किसी के जहर दिये, अथवा आत्महत्या के सम्वन्ध में विना किसी लिखित वक्तव्य के भी हो सकती है

लाश को जलाने की इजाजत मिल गयी। वहा के एक आदमी ने यह सकेत भी कर दिया, कि इसे अधिक हिलाना-डुलाना मत । टाके कच्चे हैं, वीच रास्ते में टूट सकते है।

इस सती-साध्वी स्त्री को जीवन भर की तपस्या के वदले में यही दुर्गति नसीव होगी—यह जान कर राधामाधव की रुलाई रोके नहीं रुकती थी। आज उन्हे सारे देवी-देवताओं पर, सारे नियम-शासन पर, सारे मित्र परिवारवालो पर से आस्था उठ गयी। मन की यह वात उन्होंने किसी से छिपाई भी नहीं। जो भी आस-पास से गुजरते, उनकी इस मनोव्यथा को सुनकर ठंडी सास लेकर रह जाते।

शव का चेहरा खुला रखा गया था। गोपाल ने आसू पोछ कर अपनी माता के अन्तिम दर्शन किये। इसके वाद चार-पाच आदमियों के साथ लाश को घर पहुंचाने की व्यवस्था अस्पताल की ओर से कर दी गयी। वहा अर्थी सजाई गई।

सन्ध्या हो रही थी। सूर्यास्त से पहले दाह हो जाना जरूरी था। जगह-जगह नश्तर से चीरे हुए शरीर को अधिक देर तक रखा भी नहीं जा सकता। लिहाजा जाति-धर्म की वात छोड़कर, राधामाधव के मित्रों के कंधों का सहारा लेकर ही मृत यशोदा श्मशानघाट तक जा सकी। ब्राह्मण-कन्या और इसी उच्चकुल की वधु का विजातीय लोगों द्वारा अतिम सस्कार किये जाने

पर स्वर्ग-नर्क भेजने का निर्णय करने वाले ने क्या फैसला किया होगा, यह तो वे ही जाने, लेकिन इस धरती और समाज के लोगों की उपेक्षा के कारण राधामाधव और गोपाल सारे रास्ते अपना सर ऊपर नहीं उठा सके।

राधामाधव दुपट्टे से आसू पोंछते हुए 'राम-नाम-सत्य' का नारा दुहराते हुए मन ही मन सोच रहे थे — वह देवी थी। अपने सत्त मे समा गयी। लोग इस बात को नहीं समझ सकते, तो उनके पागलपन का इलाज कैसे किया जाय? यदि इस चराचर जगत पर सचमुच किसी परमात्मा का शासन है, तो एक दिन वे इस दुर्घटना की परीक्षा के परिणामों पर अवश्य गौर करेंगे!

आज फिर गोपाल अपने हाथ में अग्नि-पात्र लिये शव के साथ-साथ चल रहा था। गली रास्ते में कल जो भीड़ एक स्त्री के त्याग और वलिदान से प्रभावित होकर, श्रद्धा-भक्ति से झुकी जा रही थी, आज उसने सिर्फ आश्चर्य से उस ओर देख कर, मुह मोड़ लिया। मरनेवाला मर जाता है, लेकिन जरा-सी देर हो जाने पर मौत इतनी वदनसीव हो सकती है!

स्वय-मृत्यु यदि त्याग का पर्याय है, तो आज उसमे कहीं रंच-मात्र भी त्रुटि नहीं थी, लेकिन इसके वदले में जो कीर्ति प्राप्त हो सकती है, वह आज अनुपस्थित है।

कल जिसकी प्रशसा के गगनभेदी नारे सुनाई दे रहे थे, आज उस सतित्व की समस्त महिमा खामोश है। निन्दा रुक गयी है। इसलिए नहीं, कि वह आलोचना की पात्र नहीं। वल्कि सिर्फ इसलिए, कि अव निन्दा करते दया आती है। लोग कहते विचारी कल चली जाती, तो अक्षय पुण्य मिल जाता, वैकुण्ठ चली जाती।

स्मशान-घाट से वापस आकर मरने पर, पाप-पुण्य का हिसाव-किताब रखनेवाला किस प्रकार का न्याय देता है, इस सम्बन्ध में प्राचीन पुस्तकों में कोई उदाहरण न मिलने के कारण, लोग अज्ञानान्धकार में ही हैं। लिहाजा, विश्वास नहीं होता कि इस सतित्व के कारण, इस स्वयंप्राप्त मृत्यु के कारण, उसकी मुक्ति हो ही जायगी।

किसी ने कहा — भगवान किसी की मिट्टी इस तरह खराव न करवाये।

किसी ने कहा — अव धर्म गया। राजा धर्म-कर्म में भी वाधा देने लगा। यह सव अंग्रेजों की शिक्षा का प्रताप है।

किसी ने कहा — सती तो सती ही है, उसे श्मशानघाट तक पहुंचाने जाते, तो पुण्य ही होता, लेकिन पुलिसवालों से माथा कौन लगावे? पता नहीं, क्या सवाल-जवाब पूछे?

किसी ने कहा — मा, तुम हमें क्षमा करना। हम इसी नर्क के कीड़े हैं, तुम्हारी कद्र नहीं कर सके। भूलचूक से यदि तुम्हारे प्रति कोई दोष हो गया हो तो बाल-बच्चों की रक्षा करना।

किसी ने कहा — पुलिस वाले आये थे — इतना बड़ा दल बल लेकर। श्मशानघाट से सती को ले भले आये हों, लेकिन फिर उसकी मौत को थोड़े ही रोक सके? धर्म किसी के रोके, आज तक रुका है?

लोगों ने चाहे जो कहा हो, गोपाल मन ही मन यही सोच रहा था — मां, कल तुम्हें कितना सम्मान मिला था? आज कितनी उपेक्षा, कितना तिरस्कार, और कितनी क्षुद्र दया तुम्हे सहनी पड़ी है! तुम तो मुक्त हो गयीं। अब तुम्हें कुछ भी सहना नहीं होगा। सहना होगा मुझे—जीवन भर!

चाहे जो हो, नियति के विधान मे मीनमेख निकालने से कोई लभ नहीं। वे कुछ ऐसे ही होते हैं। क्यों होते हैं, यह मीमासा से परे की बात है। होते ह, बस होते है। उन्हे स्वीकार करने के अलावा कोई उपाय नहीं!

श्मशानघाट आ गया। सूर्यनारायण अस्त हो रहे थे। पास से गायें गुजर रहीं थीं। उनके खुरों से उड़नेवाली धूल की धुंध मे जल्दी-जल्दी चिता चुनी गयी। इसके बाद साधारण विधि-विधान जो कुछ किये जा सकते थे, सम्पादित हो गये। गोपाल ने आगे बढ़ कर चिता मे आग लगा दी।

इस छोटी-सी जिन्दगी मे गोपाल को मा के रूप मे जो दिव्य-निधि प्राप्त हुई थी, आज उसे विसर्जित करने का साक्षी भी वही है। रिक्त, दुखी, विवश गोपाल अब अकेला है। जीवन भर अपने पागल पिता के गुनाहों का वह प्रायश्चित करता रहेगा। इतना ही नहीं—मा की मृत्यु के समय हुए सर्व-व्यापी दुष्काण्ड की चिर-स्मृति को भी उसे आजीवन अंगीकार किये रहना होगा।

शव जल रहा था। लाल-लाल लपटे आकाश की ओर उठ रही थीं। सती अपने जीवन की सम्पूर्ण निष्ठा और वैराग्य सहित अन्तरिक्ष मे विलीन हो गयी।

इस सृष्टि मे उसने अपना यश भी नहीं छोड़ा। वह उसे भी अपने साथ ही लेती गयी।

सबने स्नान की। राधामाधव के साथ गोपाल घर वापस लौट आया। गली के मोड़ पर रुक कर, उसने एक पल के लिए विचार किया'— मेरा घर कौनसा है ?

माधवकाका ने तब उसका हाथ पकड़ कर इतना ही कहा —चलो, घर चलें।

उनका घर ही आज से गोपाल का घर है, यह निश्चित हो गया।

पुराने घर में अब कुछ भी नहीं रहा। वह पागल उपद्रवशील पिता, वह शान्त और स्नेहमयी माता, दोनों अब नहीं रहे। फिर चूने-मिट्टी की दीवारों से कैसा नाता-रिश्ता ?

अवसाद के मारे राधामाधव का सिर दर्द करने लगा। दो दिन के भीतर जो प्रलय-काण्ड उनके सर पर से होकर गुजर गया था, उन्होंने इसे किस तरह सह लिया, यह तो वे ही जाने। लेकिन अब अधिक सहा नहीं गया। इसलिए घर जाकर, सर पर हाथ रख कर, गोपाल को अपने पास बिठा कर वे लेट गये।

पारो व्याकुल होकर पति की तीमारदारी में व्यस्त हो गयी।

इसी समय एक नवागन्तुक ने घर में प्रवेश किया। धोबी था। चौट्टे की दुकान का किराया लेकर आया था। राधामाधव के पास बैठते हुए बोला — तबीयत ठीक नहीं है, क्या माधवजी ? देखो तो, प्रभु की लीला कैसी है ? कल क्या था, आज क्या होगा ? शरीर का कोई भरोसा नहीं ? गोपाल की मां तो सती थी, ऐसी औरत इस पृथिवी पर और हैं ही कितनीं ? भवर की मा ने तो जब से सुना है रो रही है। मेरा भी अभाग तो देखो, रोज ठीक एक तारीख को किराया दे जाता हू। अबकी दो दिन की देर हो गयी, तो सती के दर्शन नहीं कर सका।

राधामाधव आंखें बंद किये पड़े रहे। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया।

धोबी ने आगे कहा —किराया लाया हू। रख लो। फिर खर्च हो जायगा।

राधामाधव इस पर भी ध्यान नहीं दे सके। गोपाल ने हाथ आगे बढ़ा कर रुपये ले लिये।

–अच्छा, मै चलूं ?

–माधवकाका की तबीयत ठीक नहीं है। आप फिर कभी आकर इनसे मिल लीजियेगा। अभी जाइये।' गोपाल ने कहा।

उसके चले जाने के बाद पारो दूध गरम कर लायीं। पति से कहा —थोड़ा-सा पी लो।

राधामाधव ने आखें खोलकर पारो की ओर देखा, इसके बाद पूछा —गोपाल को दिया ?

पारो को अपनी भूल मालूम हुई। लज्जित होकर बोली, उसका दूध गरम हो रहा है। पहले तुम पी लो।

राधामाधव ने हाथ मे गिलास ले लिया। गोपाल की ओर बढा कर बोले —पी ले, गोपाल। मेरे लिए दूध गर्म होकर अभी आ जायगा।

पारो काकी को गोपाल इस समय लज्जित नहीं करना चाहता था। इसलिये माधवकाका के पास जाकर उसने कहा—धोबी रुपये दे गया है। मैंने ले लिये हैं। ये लो।

–अपनी काकी को दे दे।

पारो दूध गर्म करने चली गयी थी। उसके पास जाकर गोपाल ने रुपये देते हुए कहा—काका ने तुम्हें देने को कहा है। रख लो।

काकी ने स्नेह सहित गोपाल को अन्दर के कमरे में ले जाकर, छोटा-सा एक आला दिखा कर कहा—गोपाल, आज से यह तेरा है। अपने रुपये पैसे, पोथी-पत्रे इसी मे रखना। हैं ?

–रुपये तुम अपने पास नहीं रखोगी ?

–तुझे भी तो चाहिएंगे कि नहीं ? इसलिए, यहीं रखना।

गोपाल ने इस बात का जवाब नहीं दिया। इसलिए नहीं दिया, कि मा होती तो यह प्रश्न ही नहीं उठता। काकी के इस अति कृपापूर्ण सहज प्रस्ताव द्वारा अलगाव की बात स्पष्ट होकर सामने आ गयी थी। इसे गोपाल नहीं समझ सका हो, ऐसी बात नहीं। उसने धीरे से कहा—मा तो अपने ही पास रखती थी। मेरे हाथ से कहीं खो गये तो ?

–खोयेंगे क्यों रे ? तू अब हो गया है इतना बड़ा। फिर यह आला है घर के भीतर। यह तो कहीं भाग नहीं जायगा ?

गोपाल ने अधिक विवाद नहीं किया। समझ गया, यहा काकी पर सपूर्ण भार रख कर मुक्त नहीं हुआ जा सकता। मां की तरह, उसकी हर चीज को वह अपना नहीं मान सकती!

उसे अपने कर्तव्य का भान हुआ:—

'मै फिर लोगों से आशाए करने लगा? अरे, मै हूं अकेला। अवधूत। जब सब कोई छोड़ कर चले गये, तो अब जिस किसी के सामने मै ही क्यों हाथ पसारता रहू? अब किस बात के लिए रोना-कलपना, गिड़गिड़ाना, किसके सामने प्रेम की भीख मागना? किसके सामने तरह-तरह के स्वाग बना कर नाटक रचना?

बारह :

धीरे-धीरे माधवकाका स्वस्थ हो गये। बीते दिनों के दुख का घाव भी धीरे-धीरे भरने लगा। टाग कट जाने के कुछ अर्से के बाद जिस प्रकार लूला आदमी उस ओर ध्यान देकर चिन्ता नहीं किया करता, बल्कि उसे स्वीकार करके जिस प्रकार वह अपने प्रस्तुत स्वरूप को अगीकार कर लेता है—उसी तरह से गत घटनाओं को भूल कर, नूतन स्थिति को धीरे-धीरे गोपाल ने भी अगीकार कर लिया है।

एक दिन माधवकाका ने हस कर गोपाल से कहा — सुन रे, अब मै जल्दी ही बूढ़ा होने वाला हू। पढ़-लिख कर कमाना शुरू कर दे, भइया। फिर बुढ़ापे में साइकिलों की दूकान पर जाना न पड़े।

हमेशा की तरह 'दूंगा' यह उससे अब नहीं कहा जाता। क्योंकि वह नितान्त अबोध नहीं है। कि भोलेपन की बातों में सदैव भरमाया रह सके।

वह चुप रह गया।

काकी द्वारा प्रथक्किकरण की जो साधारण घटना घट चुकी थी, उसके भावी तिक्ततम स्वरूप की कल्पना करके उसने उसे स्वीकार कर लिया।

दुखती आख को हवा भी बुरी लगती है। पारो ने सम्भवत सहज रूप से ही प्रथक आले की बात कही हो। लेकिन इस जरा-सी बात से गोपाल को जिस भयाक्रान्त एकान्त का बोध होने लगा था—उसका कोई उपाय नहीं।

मृत्यु-सस्कार जिस किसी प्रकार टेढ़े-मेढे रूप मे हो सकते थे, हो गये।

एक दिन गोपाल ने माधवकाका के पास जाकर कहा — अब मै स्कूल जाऊगा।

-हा, हा। स्कूल तो जाना ही होगा। खूब मन लगा कर पढ़ना। सीधे घर आ जाना। अच्छा, गोपाल यह बता, तूं मेरे साथ सोयेगा या काकी के?

भोलेभाले निर्बोध बालक के रूप मे सम्बोधित किया जाना गोपाल को अब अच्छा नहीं लगता। लेकिन साथ ही कोई कटु बात नहीं कहनी चाहिए, यह भी वह जानता है। इसलिए उसने धीरे से इतना ही कहा — तुम्हारे पास ही सोऊंगा, काका।

माधवकाका ने पत्नी की ओर कटाक्ष करके कहा — अच्छा ही तो है। नही तो तेरे माथे में भी जूंएं रेंगने लगतीं। सुन तो पारो, इसे दो पैसे दे दे। ले गोपाल। आलतू-फालतू की चीज मत खाना। जा अपने पोथी-पत्रे ले आ। मै मास्टरजी को भोलावन दे आता हूं। चल, भर्ती करवा आता हूं।

पोथी-पत्रों का बस्ता माधवकाका के घर पर ही पड़ा था। झाड़ पोंछ कर गोपाल उसे उठा लाया। माधवकाका उसे अपने साथ जाकर वापस उसी स्कूल में भर्ती करवा आये।

मास्टर साहब से कहा—यह अपनी मर्जी के मुताबिक पढ़ेगा। इसे डाटना फटकारना मत। नर्मी से काम लेना।

गोपाल फिर विद्याध्ययन में मग्न हो गया। सारी कक्षा मे फर्स्ट आकर वह यह साबित कर देना चाहता था, कि पागल का बेटा होते हुए भी वह क्लास के अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा कही अधिक समझदार और बुद्धिमान है। ताकि भविष्य में उसकी ओर अंगुली उठा कर कोई यह न कह सके, कि यह है पागल का

बेटा—और यह है, वह गोपाल-जिसकी मा श्मशानघाट से सती होने का संकल्प लेकर लौट आई और कुमौत मरी! सम्भवत इसी तरह अपने बुजुर्गों के अभाग्य का प्रायश्चित वह कर ले।

स्कूल के अध्यापक और सहपाठी भी गोपाल की बदकिस्मती से भली-भाति परिचित थे। कई साथियों ने दयार्द्र होकर उससे मित्रता करने की कोशिश की। लेकिन आज वह हाथ बढा कर बड़े से बड़ा दान भी लेना नहीं चाहता था। लिहाजा, सिवाय अध्ययन और उसके परीक्षागत परिणामों के, उसकी किसी अन्य चीज में रुचि ही नहीं रही।

फिर परीक्षाओं के दिन आ गये। सारे विद्यार्थी जिस समय इम्तिहान पास करने की सरलतम विधि का आविष्कार करने में दत्तचित्त थे, तब गोपाल अपने बल-विक्रम पर उत्तीर्ण होने का आत्मविश्वास प्राप्त कर रहा था।

परीक्षाए हुईं। रोते हुए विद्यार्थियों ने घोषणा की — पर्चे अत्यन्त कठोर थे। पास होना असभव है। फला अध्यापक ने बदला लेने के लिए इतने दुर्बोध पर्चे दिये हैं— फलां अध्यापक अत्यन्त उग्र होकर पर्चे जाचेगा— जब इस किस्म की चर्चा सारे विद्यार्थियों में सुनाई देती, तब गोपाल अपनी आगत परीक्षा के परिणामों की कल्पना करके, मन ही मन आनन्दित होकर आत्मविभोर हो जाता।

जिस दिन परीक्षा-फल सुनाया गया, सारे विद्यार्थियों की तरह, वह भी नये कपड़े पहन कर स्कूल गया था। धड़कते हृदय से उसने सुना—सचमुच, अपनी कक्षा में वह सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुआ था। परीक्षा-परिणाम सुनाने के साथ ही साथ पुरस्कार-वितरण समारोह भी सम्पादित हो गया। प्रधानाध्यापक ने जब उसका नाम लेकर पुकारा, तो मच पर जाकर विनम्रता सहित अपनी सफलता पर गौरव से मस्तक ऊचा करके, वह पुरस्कार ले आया।

मच से उतरते समय उसने देखा, कि अनेक विद्यार्थी फेल हो जाने के परिणाम स्वरूप रो रहे हैं—और उनके माइत 'अगले साल मेहनत करके पास हो जाने' का उपदेश और ढाढ़स बधा रहे हैं। एक क्षण के लिए उस दृश्य को देखकर उसे असीम तृप्ति का बोध हुआ। मन में आया, कि वह उच्च कठ से कहे —कि इनमें से किसी का पिता पागल नहीं है, और ये तमाम फेल हुए हैं। इन सबका दिमाग ठीक से काम नहीं करता।

और मैं हूं पागल का बेटा, जिसे, सर्व-प्रथम आने पर पुरस्कार मिला है।

आत्मगौरव से उसका सीना फूल गया।

राधामाधव पीछे खड़े थे। गोपाल के मंच से उतरते ही उन्होंने उसे गोद में उठा लिया। चुम्बनों से भर-सा दिया।

पल भर में उसे याद आया, इसी स्कूल के अध्यापक द्वारा प्रताड़ित और व्यर्थ दण्डित किये जाने पर, मा ने उसे प्रथम और अन्तिम बार पीटा था। उस घटना के बाद ही दुखद काण्डों की सृष्टि होती गयी। मा ने उस दिन कहा था —पढ़ेगा नहीं, तो क्या आवारागर्दी करेगा? उससे पहले मैं तुझे जान से मार डालूंगी।'

आज वह इस संसार में नहीं है। लेकिन वह जहा कहीं होगी, पुत्र की इस सफलता से निश्चय ही प्रसन्न हुए बिना नहीं रहेगी। लेकिन उस दिन गोपाल ने जो व्यर्थ दंड भोगा था, उसकी सफाई, इस प्रत्यक्ष प्रमाण के बावजूद भी वह किसे दे?

राधामाधव अपनी प्रसन्नता छिपा नहीं सके। पीछे से ही चिल्लाये —अजी वाह! ओ मगन-मास्टर, जीते रहो। जुग-जुग-जीओ। सुना तुमने, मेरा गोपाल बिल्कुल फर्स्ट क्लास आ गया है। पहले नम्बर पास! भैरुंनाथ की दया है। देखना, एक दिन यह लड़का सारे बीकानेर का नाम रोशन करेगा! ओ मगन-मास्टर, आज शाम को खाना इस गरीब के घर पर ही खाना। भूलना मत।

भरी सभा में मास्टरजी को सम्बोधित करके, दिये गये इस अभद्र-निमंत्रण को गुरुजी ने अस्वीकार नहीं किया।

गोपाल का हाथ पकड़े राधामाधव वापस घर लौटते वक्त खुशी के मारे फूले नहीं समाते थे। रास्ते में जो भी मिल जाता, उसे रोक कर कहते —सुना तुमने, मेरा गोपाल बिल्कुल फर्स्ट-क्लास आया है। पहले नम्बर। यह देखो, यह इनाम मिला है। अंग्रेजी की किताबें हैं। खूब पढ लेता है। दिन रात मेहनत की थी इसने!

यहा तक कि एक सजातीय बुजुर्ग को अंग्रेजी पुस्तक का एक पैराग्राफ पढ कर भी गोपाल को सुनाना पड़ा। उसका भावार्थ वे चाहे समझे हों, या न समझे हों; फिर भी यह स्पष्ट हो गया, कि जरा-सा लड़का अंग्रेजी किस फर्राटे से पढ़ डालता है। अब तार पढाने के लिए मोहता-अस्पताल के कम्पाउन्डर के पास दौड़ कर जाना

नहीं पड़ेगा। लिहाजा आशीर्वाद देते हुए उन्होंने कहा—ऐसा ही होशियार था भीखमचंद! लेकिन भाग्य की बात! भगवान, इस पर कृपा बनाये रखना!

गोपाल को बुजुर्ग का आशीर्वाद अखर गया।

एक और सज्जन के मिलने पर राधामाधव फिर गोपाल की स्तुति गाने लगे। उन्होंने पूछा—यह भीखमचद का ही लड़का है न?

—पूछो इससे। मैं तो कहता हू आपका ही है। आप छुट्टी दे दें, तो इसे गोद ले लू?

—गोद ही तो लिया हुआ है। खाता-पीता तो तुम्हारे ही यहा होगा?

—अजी, अभी जनेऊ कहां हुई? मोदी के हाथ की छूत थोड़े ही लगती है?

—मानों तब तो है ही। न मानों तो कुछ भी नहीं। अब, जब भीखमचदजी ही नहीं रहे तो जनेऊ डालो तो क्या और न डालो तो क्या? फिर आजकल के लड़कों को जनेऊ की चिन्ता ही कौनसी है?

इस भद्र-पुरुष का यह दुख देखकर गोपाल को हसी आ गयी।

राधामाधव ने तो यही कहा—चलो आपने बात चलाई है, तो उसे निबटा ही लेते हैं। आप हैं राज-ज्योतिषी। कोई नजदीक का मुहूर्त बता दीजिये। विधि-विधान बता दीजिये। कल ही जनेऊ डाल देता हूं। ब्राह्मण हो जाय, तो इसके खाने-पीने की व्यवस्था अलग से कर दूगा! लेकिन पिता की जगह बैठना आपको ही होगा? आप भी कोई पराये तो हैं नहीं। भीखमचदजी की चचेरी बहन ही तो आपको ब्याही हुई है। कोई दूर का रिश्ता थोड़े ही है? आपके होते हुए पिता के आसन पर दूसरा कोई थोड़े ही बैठ सकता है? व्यवस्था आप कर दीजिये। खर्चा मैं सभाल लूगा।

मगर राज-ज्योतिषी को इतना अवकाश कहां, कि वह इन छोटे-मोटे फालतू के धंधें में फसें। फिर भीखमचदजी, उनकी पत्नी तथा गोपाल ऐसे विवादास्पद विषय हैं कि इस पचायती में न पड़ना ही उत्तम। इसलिए किसी तरह जबान मीठी करके यही बोले—मुझे फुर्सत कहा है भाई? पता नहीं महाराजा के साथ कब विलायत चले जाना पड़े। नौकर आदमी ठहरे, हुक्म के ताबेदार। मैं तो कहूगा राधामाधव, आसारामजी से बात-चीत कर लो।

शास्त्रीय आदमी हैं। संस्कृत के परम विद्वान। कर्म-काण्ड, जनेऊ-संस्कार उनसे उत्तम करनेवाला और कोई नहीं।

गोपाल ने धीरे से पूछा—आप ब्राह्मण हैं—नाते रिश्तेदार भी। आपको मेरी दीक्षा की बिलकुल चिन्ता नहीं? फिर माधवकाका तो जात के मोदी हैं—इनसे अधिक उम्मीद करना नितान्त मूर्खता है!

–वाह, वाह, क्या मधुर वाणी बोले हो, बेटा। जीते रहो। खूब उन्नति की है। धन्य हो। देख लिया, राधामाधव, यह है अंग्रेजी पढ़ने का प्रभाव। छोटे-बड़े का कोई कायदा नहीं। जो जबान मे आया, सो बक गये। अरे, और सब तो ठीक, मगर जो तुमसे उम्र में बड़े हैं उन्हे गाली-गलौज तो मत दो। लेकिन इन्हे समझाये कौन? कलिकाल मे इन्हीं उद्योगों में तो सारी बुद्धि नष्ट होती है। देख लेना, यही गोपाल जनेऊ पहन कर, जूते पहने खायेगा, भंगियों के साथ जीमेगा, और बड़े-बूढों की मजाक उड़ायेगा।

इस वृद्ध का यह अभिशप्त गुस्सा देखकर राधामाधव को भी हंसी आ गयी। बोले –आप भी नरोत्तमजी हद्द कर देते हैं। आपकी बातें सुनकर तो मेरी हंसी रोके नहीं रुकती! अजी, ब्राह्मण के लड़का और फिर गोपाल जैसा होशियार लड़का, कभी ऐसा कर सकता है? नहीं जी, नहीं। कभी नहीं। क्यों रे गोपाल तूं जूते पहने खायेगा? भंगियों के साथ जीमेगा?

–हां माधवकाका। जिन ब्राह्मणों को मेरी जाति की चिन्ता नहीं, उनसे मेरा भी कोई सरोकार नहीं। जिस दिन मा मरी थी, तब ये सारे लोग पुलिस के डर से लाश उठाने तक नहीं आये थे। जिन्दगी भर में इस बात को भूलूगा नहीं। खैर, महाराज, आपको प्रणाम करता हूं। आप पधारिये। आपका समय व्यर्थ नष्ट हो रहा होगा।

–देख लिया, राधामाधव। यह है—आजकल के छोकरों की जबान! प्रभु, तेरी इच्छा! जैसा जमाना तू दिखायेगा, सिर नीचा करके वैसा ही देखेंगे!'

इतना कह कर प्रत्युत्तर की अपेक्षा त्याग कर वे महाशय तुरन्त रवाना हो गये। जाते-जाते सिर हिलाते गये। क्षोभ प्रकट करते हुए बारम्बार उनके मुंह से निकल पड़ता:—हा, कलिकाल!

उनके चले जाने पर गोपाल ने कहा—माधवकाका, इन्होंने धर्म-शास्त्र पढा ही नहीं। मैंने कुछ किताबे पढ़ी हैं। उनमें लिखा हुआ है कि जाति कर्म के

हिसाब से होती है। ब्राह्मण बनने के लिए तो बड़ी तपस्या करनी होती है। इनकी ओछाई पुराने जमाने के ऋषि-मुनि देख लेते तो इनके लिए शूद्रों से भी नीचा कोई दूसरा दर्जा उन्हें बनाना पड़ जाता।

–ऐसी बातें नहीं करते, गोपाल !

–अच्छी बात है। नहीं करूंगा। साथ ही माधवकाका, मैं जनेऊ भी नहीं पहनूंगा।

–अरे, ऐसा भी कहीं होता है ?

–इससे क्या लाभ ? मुझे तो इस न्यात-गंगा से कोई लेना-देना नहीं है। इन्होंने हमारे साथ जो कुछ किया है, वह मैं भूलूंगा थोड़े ही !

–लेना-देना कैसे नहीं है ? तुझे नहीं होगा, मुझे तो है ! मुझे तो इसी न्यात में से तेरे लिए लड़की ढूंढ कर लानी है।

–उसमें अभी बहुत देर है माधवकाका। फिर कभी ऐसा संकट-काल उपस्थित हुआ, तो मैं गले में जनेऊ डाल लूंगा।

राधामाधव ने हंसकर कहा —अब जल्दी चल। बड़ी बातें बघारने लगा है। अरे, यह भी कोई दूकानदारी है, कि माल की खपत होने लगे, तो मंगा कर धर लिया जाय। तुझे पसंद हो या न हो, मुझे तो जनेऊ डालनी ही पड़ेगी। गोपाल, आजकल लोग न्यात को सुधारने की बातें कहते हैं। कहते-कहते खुद दूर चले जाते हैं। इस तरह से न्यात का सुधार थोड़े ही होगा ? न्यात का सुधार होगा, उसी में रहने पर। उनके साथ समझौता करने पर !

–अच्छी बात है। आप जैसा कहेंगे, कर लूंगा। लेकिन खाना मैं काकी के हाथ के सिवाय किसी के हाथ का नहीं खाऊंगा।

–अजी, काकी से भी बढ़िया खाना पकानेवाली नौकर रख दूंगा ! समझा ?

–समझ गया। लेकिन उससे काम नहीं चलेगा। वे होती है गन्दी ! मिनट-मिनट पर खुद नहाती रहती हैं, और दूसरों को भी नहलाती रहती हैं।

–तब तो देखता हूं, तेरा ब्याह जल्दी ही करना होगा। फिर साफ-सफाई भी रह जायगी और भ्रष्टाचार भी चल जायगा।

गोपाल ने माधवकाका की इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। क्योंकि धार्मिक विधिविधानों के बारे मे उसकी इतनी सूक्ष्म धारणा अभी तक बनी नहीं है।

घर पहुंचने पर पारो को परीक्षा की इस अति महत्वपूर्ण सफलता की सूचना दे दी गयी। भैरूंनाथ के भोग लगाने की व्यवस्था के बारे में एक बार दोनों में लड़ाई होते-होते बाल-बाल बची।

अन्त में जिन-जिन मन्दिरों तक जाना था, उनकी सूची दोनों ने एकमत होकर स्वीकृत कर ली। खाने-पीने की यथेष्ट सामग्री लेकर, मांगे हुए तांगे में बैठ कर, तीनों प्राणी अपने देवताओं के प्रति कृतज्ञता निवेदन करने पहुंच गये। इस यात्रा का एक गुप्त उद्देश्य पारो के मन में और था कि प्रभु, सब कुछ तूने दिया है। लेकिन यह गोद अभी तक रिक्त ही है।

नागणियोंजी तथा पंचमुखे हनुमानजी की पूजा उनके गौरव के अनुकूल ही हुई। मूर्ति के दर्शन करके, मन्दिर से उतरते हुए सीढियों पर बैठे गोपाल ने सोचा.—यदि इसी तरह मैं पढने में सफल होता गया, तो पन्द्रह साल की उम्र में मैट्रिक पास कर लूंगा। इसी हिसाब से पढता रहा, तो इक्कीस साल का होते-होते एम० ए० का इम्तिहान भी पास कर लूंगा। इस दिव्य-कल्पना से प्रमुदित होकर बालक ने माधवकाका से कहा.—काका, जो मैं इसी तरह पास होता गया, तो इक्कीस साल की उम्र मे एम० ए० का इम्तिहान पास कर लूंगा। यह सबसे ऊंची परीक्षा होती है। बीकानेर भर में किसी ने इतनी छोटी उम्र मे आज तक एम० ए० नहीं किया।

—अच्छा! एम० ए० में कितनी क्लासें होती हैं, गोपाल?

—सोलह।

—बस? फिर इसके आगे कोई पढाई नहीं होती? होती हो, तो तूं उसे भी पास कर डालना।

—बस! इसके आगे कुछ भी नही होता। सबसे ऊंची पढाई यही है। शायद थोडी-बहुत पढाई और होती हो, लेकिन वह मुझे नहीं मालूम। मगर बीकानेर भर में आज तक किसी ने इतनी छोटी उम्र में एम० ए० नहीं किया माधवकाका!

—तब तो तूं जरूर करेगा, गोपाल। मैं हर साल इसी तरह माताजी के धोक चढ़ाने आऊंगा।

—एम०ए० पास कर लेने पर बहुत बड़ी सरकारी नौकरी भी मिल सकती है।

—अच्छा!

हां। फिर तो वहुत वड़ी तनख्वाह मिलेगी। फिर हम मोटर ले लेंगे। यहा मोटर में ही आया करेंगे।

–वाह, यह तो वहुत वढिया वात है रे !

गोपाल आत्मविभोर होकर वोला — काका, तुम्हें तो फिर मैं राजा वना दूगा। विल्कुल राजा।

राधामाधव को यह अन्तिम वात कुछ वेतुकी-सी लगी। वोले — गोपाल यह वात किसी को कहना मत। नजर लग जाती है न, इसलिए !

गोपाल अचानक रुक गया।

–कहीं मुझे ये पागल तो नहीं समझ रहे हैं। आठवीं क्लास में पास होनेवाला लड़का एम ए पास करने की वात सोचे, इतना ही नहीं—अफसर वन जाने की कल्पना करे, मोटर लेकर यहा आने की योजना तक निश्चित कर ले, तो लोग पागल ही तो समझेंगे !

वह चुप हो गया। रास्ते भर एक शब्द भी नहीं वोला। मदिर के सामने एक टीले पर वैठकर सवने भोजन किया। राधामाधव अपने स्वभाव के अनुसार पारो को लक्ष्य वनाकर अनेक उपालम्भ देते रहे। वीच-वीच में गोपाल भी हसी में योगदान देता रहा। लेकिन इन सारी चर्चाओं में एक ही वात कांटे की तरह अन्दर ही अन्दर चुभती रही, दुख देती रही — कि मेरी वहुत अधिक सफलता भी तो पागलपन हो सकती है !

रवाना होने से पहले तांगे में से मुड़कर मन्दिर की ओर देखते हुए गोपाल ने माताजी को हाथ जोड़कर मन ही मन प्रार्थना की — मेरी यह पागलपन की वात एक दिन जरूर सच्ची निकले। मा, यही आशीर्वाद दो।

मन्दिर की ओट में विराजमान नागणियोंजी की भव्य मूर्ति पर वालक की इस कातर प्रार्थना का क्या प्रभाव पड़ा, इस वात को जाने भी दिया जाय, लेकिन यह निर्विवाद सत्य है, कि उन्होंने इस वालक के इस दिवा-स्वप्न का विरोध नहीं किया।

तांगेवाला घोड़े की थकान से क्षुब्ध, उसे उत्तेजित करने के लिए उच्च स्वर में ललकार रहा था।

और गोपाल के मन में वैठा कोई वारम्वार उसे सावधान कर जाता — यह वात किसी से कहना मत। कोई वात किसी से मत कहना। लोगों की नजर लगे या न लगे, लेकिन लोग उसे पागल अवश्य समझने लगेंगे।

किसी भी हालत में वह पागल नहीं वनना चाहता।

तेरह :

एक दिन एकान्त पाकर पारो ने राधामाधव से पूछा:— एक बात कहूं ?

राधामाधव समझ गये, इस प्रश्न में इजाजत लेने की कामना नहीं, वल्कि किसी खास किस्म की कृपा करने की आकांक्षा है। वोले.— कह दो!

पता नहीं, क्या सोच कर पारो नीची नजर करके चुप हो गयी। वोली·— जाओ, नहीं कहती।

राधामाधव ने कुछ-कुछ अन्दाज लगाया। कहने लगे — अच्छा, जाने दो। औरतों की गुप्त वातों मे कौन पड़े!

पारो ने जाने नही दिया। कहा —लोग कहते हैं,' इतना कह कर, पति की ओर देखकर वह मुसकरा दी। फिर वोली.—यह तुमने क्या किया ?

–मैने तो कहीं कुछ भी नहीं किया।

–ओ हो, वड़े भोले वनते हो! जैसे कुछ समझते ही नहीं!

–मत मानो। लेकिन वताओगी भी, वात क्या है ? रात को विल्ली दूध पी गयी क्या ? दरवाजा खुला छोड़ने का अपराध मेरे सिर पर सही!

–अव रहने दो। मैं कहती हूं—लोग कहते हैं—मुझे 'आशा' है!

–अच्छा ही तो कहते हैं। आशा पर ही तो सारी दुनिया टिकी हुई है। जानवूझ कर, अनजान वन कर, वे कहने लगे –अब इस गोपाल को ही देख लो। इसी तरह वह प्रत्येक इम्तिहान मे पास होता गया, तो इक्कीस साल की उम्र में संसार भर की सारी पढ़ाई पढ़ डालेगा।

गोपाल को इस प्रकार अप्रासंगिक रूप से वीच में आते देखकर पारो चिढ़-सी गयी। वोली.–एक गोपाल को तो तुम ले ही आये; दूसरे को भी न्योता दे दिया।

अव भी राधामाधव ने प्रकट नहीं किया, कि वे पारो की सांकेतिक भाषा का कुछ मतलव भी समझ सके हैं। वोले —न्योता ? ना रे, ना! लक्ष्मी, मैं

किसी को न्योता नहीं दे सकता। फिर तुम्हारे घर मे मौजूद होते हुए? तुम भोली हो भगवती, बिलकुल भोली। तुम्हारा पति इतना कमजोर नहीं। विश्वास न हो, तो किसी से पूछ लो, मोदी कितने कंजूस होते है! असम्भव बात मत किया करो, वणियाणी!

पति के कंधों पर हाथ रख कर, इस छल का पूरा आनन्द लेते हुए पारो ने कहा —अजी, छुन्नू की मां कहती है, कि आकाशवाणी भले झूठी हो जाय, लेकिन उसकी कही हुई बात झूठी नहीं हो सकती।

—तब तो उस नीली-छतरीवाले की तमाम भविष्यवाणिया वही किया करे, तो अच्छा रहे। मैं सब समझ गया हू। चलो बधाई। एक ही प्रार्थना है, पहले पहल बेटी पैदा मत कर देना। और उस छुन्नू की मा को भी समझा कर कह देना, कि जो कुछ होगा, वह इस राधामाधव के पुण्य प्रताप से ही।

—यह भी कोई कहने की बात हुई?

—इसे ही कहते हैं, जस न मिलना। खैर। गोपाल का इस घर मे आना शुभ रहा। नहीं तो तुम जिद्द किये बैठी ही रहती, तो पितर बिचारे प्यासे ही मर जाते!

—तुम्हारा क्या, मुसीबत तो मुझे भुगतनी पड़ेगी!

—तुम्हारी पीड़ा मैं भुगतने को तैयार हूं। कुछ वन्दोवस्त कर सकती हो? इसी मुसीबत को भुगतने के लिए तो अपना पीहर छोड़कर तुम यहां तक चली आई हो। खैर। एक बात का ध्यान रखना भगवती, कि साक्षात नारायण भी इस घर में अवतार ले लें, फिर भी गोपाल को मत भूलना। वह पेट के जाये से भी अधिक हमारा अपना है।

पारो ने प्रतिवाद नहीं किया।

दूसरे दिन गोपाल के अध्यापक, मगन-मास्टर अपनी पाच कन्याओं सहित राधामाधव के यहां भोजन करने उपस्थित हो गये।

गोपाल ने आकर उनके चरण छूए।

मगन-मास्टर की पत्नी अन्दर पारो के पास चली गयी। वे ऊपर राधामाधव के कमरे में प्रतिष्ठित हो गये। पता नहीं राजाजी की कीर्ति गाते-गाते दोनों किस प्रकार गोपाल को चर्चा का विषय बना बैठे।

राधामाधव कहने लगे —मास्टर-साहव, इस गोपाल को देखकर मेरी छाती फूल जाती है। दिन-रात अपनी पढाई मे लगा रहता है! यहा तक कि धर्म-शास्तर के वहुत से ग्रंथ भी इसने पढ डाले हैं। हा! अच्छा मगन-मास्टर, यह इसी तरह पढ़ता रहा, तो कितने साल में एम.ए. कर लेगा? यही तो सवसे ऊंची पढाई होती है न?

-पढाई का तो अन्त नहीं, राधामाधव। वैसे यह एम ए. भी ऊंची पढाई है। ज्यों-ज्यों ऊंचाई आती जाती है, पढाई सख्त होती जाती है। दो-चार वार फेल हो जाना तो कोई वड़ी वात ही नहीं। यदि एक वार भी फेल न हो तो गोपाल ७ साल मे एम ए कर सकता है।

-वस, सात ही साल मे?

-मगर फेल नहीं हो तो।

तव तो गोपाल जरूर इक्कीस साल की उम्र में तुम्हारी यह एम.ए. कर डालेगा। बीकानेर में अभी तक किसी ने इतनी कम उम्र में एम.ए. नहीं किया होगा!

मास्टर-साहव कुछ दुखित हो उठे। कारण, वी.ए. की परीक्षा में वे पिछले चार सालों से लगातार वैठते रहे हैं, और पढाई की दुर्गम चढाई उन्हें हमेशा पतन-मार्ग की ओर ढकेल देती है। परिणाम स्वरूप नियम-निष्ठा सहित वे फेल होते आ रहे हैं। लिहाजा, राधामाधव का यह सहज-स्वप्न उन्हे कुछ कष्टदायक महसूस होने लगा। ऐसा लगा, जैसे उनका ही अपमान करने के लिए ही यह सारा पड्यन्त्र रचा जा रहा हो। सो जोर देकर वोले —आगे की पढाई इतनी मुश्किल होती है, माधवजी—कि क्या कहूं? वडी मुश्किल। लोग ६-६ वार फेल होते देखे गये हैं।' 'उनके इस वक्तव्य से जाहिर होता था, कि अभी तक दो साल फेल होने तक का धैर्य तो उनका विलकुल स्वाभाविक है।

राधामाधव को मगन-मास्टर की अन्दरूनी हालत मालूम नहीं थी, इसलिए वे अपनी ही धुन मे कहने लगे:—एक क्लास मे ६-६ वार। अजी, अपना गोपाल तो इस वार विल्कुल फर्स्ट-क्लास आया है। फर्स्ट क्लास!

-यह वात दूसरी है। नहीं तो ऊंची क्लासों में ६-६ वार फेल होना तो मामूली वात है माधवजी। **विल्कुल मामूली!**

–अपना गोपाल उन गधों में नहीं। वह मन लगाकर पढ़ता है। कभी फर्स्ट–क्लास न आये, यह दूसरी बात है, लेकिन फेल वह नहीं हो सकता। देख लेना।

राधामाधव की यह जिद्द मास्टरजी को कुछ आपत्तिजनक लगी। झुंझलाकर कहने लगे·—शरीर की ताकत से अधिक पढ़ाई करने पर आदमी का माथा खराब हो जाता है। मेरे साथ ही एक लड़का पढ़ता था। नाम था नन्दलाल जोशी। दिन कहो तो, रात कहो तो–बस, पढ़ाई मे लगा रहे। मां–बाप मना करते–करते थक गये। लेकिन वह माना ही नहीं। बस, फिर क्या था? कुछ ही दिनों में उसका दिमाग खराब हो गया। अब घर के एक कोने मे बैठा सिर हिलाया करता है। घरवालों ने हजारों रुपये पानी की तरह इलाज करवाने में बहा दिये। पर कुछ भी नहीं हुआ। पिछली बार उससे मिलने गया था। साथ ही पढ़े, साथ ही रहे—लेकिन उसने पहचाना तक नहीं। अब बताओ माधवजी, यह पढ़ाई किस काम आई?

इतना कहते–कहते उन्होंने टांगें पसार कर आराम से बैठते हुए मन ही मन सोचा — न सही बी ए की परीक्षा—पागलपन से तो बच गया!

राधामाधव मगन–मास्टर की बातों से अत्यधिक प्रभावित होकर, इस सभाव्य की कल्पना–मात्र से ही विजड़ित-से हो गये। मास्टर–साहब अपने फेल होने की अयोग्यता छिपाने के लिए जिस अदृष्ट नन्दलाल का उदाहरण दे रहे थे, उसकी भयंकर मूर्ति की कल्पना करके ही राधामाधव दुखित हो उठे। यह उदाहरण सत्य था या नहीं, इस बात को जाने भी दिया जाय, लेकिन मास्टर–साहब ने उन उदाहरणों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं समझा, जिसमें लगन और मेहनत के साथ पढ़ने वाले विद्यार्थियों ने ही आगे चल कर देश का अधिनायकत्व ग्रहण किया था।

उन्होंने चिन्तित स्वर में पूछा — स्कूल में पढ़ने के बाद, घर पर कितने घंटे और पढ़ना चाहिए, मगन–मास्टर?

–इन छोटी–मोटी क्लासों में, ज्यादा पढ़ लेने पर भी कोई हर्ज नहीं होता। क्योंकि दिमाग पर ज्यादा जोर नहीं पड़ता न? इसलिए! लेकिन बाद में—कालेज की पढ़ाई होती है, बड़ी भयकर तब अधिक पढ़ाई नुकसान करती है। इसीलिए तो लोग एम ए, बी.ए, पास करने की उतावल नहीं करते

फेल हो जाते हैं। देखते नहीं हो, इन ऊंची क्लासों में कितने लड़के पास होते हैं? बिलकुल कम। क्यों? इसलिए कि एक-एक साल की पढाई दो-दो साल मे करनी होती है!

गोपाल पास ही बैठा चुपचाप सारी बातें सुन रहा था।

सोच रहा था —

–तो यह सारी तपस्या निष्फल है? तो क्या तमाम रास्ते उसके लिए बन्द हैं? फिर वह क्या करे? आज तक उसने जिन महापुरुषों की जीवनियां पढ़ी हैं, उनमे कोई भी तो अधिक मेहनत करने के कारण पागल नहीं हुआ? और मेहनत तो सबने ही खूब की। पढाई सबने ही खूब की। लेकिन यदि मैं पागल हो गया तो. मुझे भी बंध कर रहना होगा। वही दारुण यंत्रणा भुगतनी होगी?

–क्या पता, यह मास्टर बिलकुल झूठ ही बोल रहा हो?

बहुत कोशिश करने पर भी राधामाधव की समझ मे यह बात नहीं आई कि रोग-सन्ताप भी पढ़ाई की ऊचाई-नीचाई के हिसाब से ही लागू होते हैं। पर प्रतिवाद करने लायक कोई बात भी उन्हें नहीं सूझी। इसलिए:— 'अब चलें। खाना ठंडा हो रहा होगा!' कहते हुए वे इस अतिथि महोदय के साथ गोपाल को लिए नीचे रसोई के सामने आकर बैठ गये।

चूंकि पारो पाक-विद्या में सर्वश्रेष्ठ है, इसीलिए मगन-मास्टर को अपने पेट पर अत्याचार करना ही पड़ा। मास्टरजी इस बात का विशेष ध्यान रख रहे थे कि गृहस्वामी उनके कम खाने से कहीं नाराज न हो जायं। फिर भी शिष्टाचारवश बीच-बीच मे उन्हें बारम्बार 'अब बस, नहीं भई नहीं। बहुत हो गया' आदि कहना ही पड़ता था।

इस रसना-लोलुप व्यक्ति की ओर गोपाल देखता रहा। जो, ना-ना, कहते हुए भी बड़े-बड़े कौर मुंह मे ठूंसता ही जा रहा था।

वह मास्टरजी की कन्याओं के साथ बैठा भोजन कर रहा था। उन कुमारियों ने, जितना खाना परोसा हुआ था, उसमें से आधा तो खाया, और उतनी ही मात्रा में थाली के चारों ओर स्मृति-चिह्न के रूप में झूठन फैला दी। उनका यह फूहड़पन और गन्दगी देखकर गोपाल को बड़ी अरुचि-सी महसूस होने लगी।

उसे याद आया कि यही वह मास्टर है, जिसने एक दिन उसे विना मतलव के पीटा था। यही वह मास्टर है, जो माधवकाका को डरा रहा था, कि अधिक पढाई मत करवाना। सकट है। उसका भावी-मार्ग रुद्ध करने की चेष्टा भी यही व्यक्ति कर रहा था।

यही वह मास्टर है, जो 'ना-ना' कहते हुए भी खाता ही जा रहा है।

उसके वच्चे ऐसे फूहड़ और गन्दे।

गोपाल थाली से उठ गया।

काकी ने पूछा —अरे, इतने में पेट भर गया?

-बस।

राधामाधव मगन-मास्टर की मनुहार करते रहे —अभी तक हुआ ही क्या है मास्टर। दो रसगुल्ले तो और ले ही लो। ले भी लो यार। यों मनुहार मत करवाओ।

मगन-मास्टर विरोध करते रहे —अब अधिक जवर्दस्ती मत करो। पेट ठीक नहीं है। अजी, चार नहीं, बस दो। दो। अजी कोई सकोच की वात थोड़े ही है? यह तो अपना ही घर है। मांग नहीं लूगा? वस, माधवजी आप तो हद कर देते हैं।

अपनी वात कहते-कहते उन्हें सहधर्मिणी की चिन्ता हुई। थाली पर वैठे-वैठे चिल्लाये.—अजी ओ, तुम भी खा-पी लो! घर पहुंचते-पहुचते सन्ध्या हो जायगी।

उनकी कन्याओं की माता अन्दर वैठी भोजन ही कर रही थी। वहीं से वुलन्द स्वर में जवाव दिया गया'—तुम अपनी चिन्ता कर लो। यहां हम अपनी फिकर खुद कर लेंगे।

राधामाधव हो-हो करके हंसते हुए कहने लगेः—देखा, औरतें आजकल मर्दों के कान काटती हैं, मगन-मास्टर।

प्रत्युत्तर में मास्टरजी कुछ इस किस्म से मुसकराये, कि गोपाल का सारा अग प्रत्यग जल-सा उठा।

खा-पी चुकने के वाद मगन मास्टर को लेकर जव राधामाधव ऊपर के कमरे में पान सुपारी खिलाने के लिए ले गये, तो गोपाल वहीं वैठा रहा।

मगन-मास्टर की वहू ने पारो से पूछा·—क्योजी, गोपाल के मा-वाप मरते वख्त इसके लिए कुछ छोड़ गये है कि नहीं ?

गोपाल की उपस्थिति मे पारो इस प्रसग से व्याकुल होकर निरीह दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी। इस प्रश्न से इस अभ्यागत ने घर आकर गोपाल और उसकी काकी का जो मार्मिक अपमान किया था, उससे वह तिलमिला उठा। उससे रहा नही गया। वोला·—वहुत सारा धन छोड़ गये हैं। लेकिन आलतू-फालतू आदमियों को हिसाव देने से मना कर गये हैं।

पारो लज्जित होकर वोली —छि, गोपाल। चुप रहो।

-क्यों चुप रहूं ? ये टके के आदमी घर आकर जो मन मे आयेगा, वह कह जायंगे और मैं चुप रहूंगा ? इनसे कहो, कि अपने घर की पंचायत पहले सभाल लें, तव दूसरों की फिक्र किया करें!

'टके के आदमी' कहने में मास्टर-वधु को गलत मूल्याकन हो जाने का सताप महसूस होने लगा। इसलिए वे और भी उग्र स्वर मे कहने लगीं·—अरे, वाह! क्या मीठी जवान है रे वेटा। जीओ। जुग-जुग जीओ। पराई रोटी का एहसान मत मानना।

-हां, है पराई रोटी। और तुम सव लोग यहा आकर जो ढेर-सारा खा-पी गये हो, वह तो अपने घर से शायद वाध लाये थे।

गुरु-पत्नी मारे क्रोध के कापने लगी। प्रचण्ड स्वर मे चिंघाड़ती हुई वोली —घर वुला कर गुरु का अपमान करते हो ? मै कहती हूं निर्वंश हो जाओगे !' इतना कहते हुए उसने सामने रखी थाली उठा कर आगन मे फेंक दी।

सारे घर मे झूठन फैलाती हुई थाली आगन के एक खम्भे से छन्नाती हुई टकरा गयी।

गुरु-पत्नी के श्राप से सन्त्रस्त विचारी पारो मारे डर के पीली पड़ गयी। धीमे स्वर में हाथ जोड़कर वोली —यह वच्चा है, वुरा मत मानो। मै तुम्हारे पाव पड़ती हू।

-नहीं, मैं अव एक पल के लिए भी यहा नहीं ठहर सकती। अरी ओ छोकरियों, तुम सव देख नहीं रही हो ? खाये जा रही हो। चलो उठो।

पच-कन्याओं मे से सवने माता की आज्ञा का पालन किया। मगर दो छोटी कन्याओं ने थाली से उठते-उठते दो-चार रसगुल्ले हाथ में रख लिये।

–यह रहा रास्ता। चली जाओ। आगे से ख्याल रखना, कि किसी के घर जाकर क्या वोलना चाहिए, और क्या नहीं वोलना चाहिए।

–अजी ओ, सुनते हो। नीचे पधारो। यहां आग लग जाय तो भी तुम्हें परवाह थोड़े ही है? नीचे उतरो। चलो यहां से। रास्ता वता दिया है, तुम्हारे चेले ने। मै तो पहले ही कहती थी, कि मुझे यहा मत लाओ। जैसा अन्न खाओगे, वैसी ही गति होगी।

मास्टरजी वदहवास से नीचे उतर आये। उनकी समझ मे कोई वात नहीं आई। राधामाधव का हाथ पकड़ कर, आखों मे आंसू भर कर वोले —माधवजी, इनका स्वभाव कुछ उग्र है। इसलिए मै इन्हें कभी कहीं नहीं ले जाता। पढ़ी-लिखी नहीं है न, इसीलिए। लेकिन किया क्या जाय? माफ कर देना।

राधामाधव ने अनेक अपढ़-स्त्रियों को देखा है। मगर ऐसी भयकर हिडम्बा को नहीं। वे कुछ नहीं वोले।

गुरु-पत्नी ने अपने पति से कहा —दो रोटी के लिए किसी के आगे हाथ पाव पसने की जरूरत नहीं। नहीं होगा तो भूखों मर जाऊगी, लेकिन इस तरह भिक्षा-पात्र नहीं फैलाऊगी। कुछ भी हया-शर्म हो, तो सीधे से चल दो।

–लेकिन कुछ कहोगी भी, आखिर हुआ क्या?

–हुआ मेरा सर!

इसमे गुरुदेव को कोई विशेष आपत्ति नहीं थी। वे कुरुक्षेत्र मैदान के ठीक मध्यभाग में स्थित दिग्विमूढ़ अवस्था में एक क्षण के लिए खड़े रहे। इसके वाद उनके पार्थ ने घोड़ों की रास सभाली और अध्यापक-प्रवर 'मामेकम् शरणम् गम' के अनुसार उसके पीछे-पीछे चल दिये।

पारो ने गोपाल को डांटा — गोपाल तूं चुप नहीं रहेगा क्या?

–मै चुप ही था काकी। लेकिन कोई कोड़े लगाता जाय और रोने भी न दे, सो नहीं होगा।

गुरु-पत्नी दरवाजे पर खड़ी होकर, मुड़कर गृहलक्ष्मी को सुना गयी — तुम्हारा अन्न खाया है न, सीधे नहीं पचेगा। मुंह से ही उगलना होगा।

पारो सोच रही थी, क्या से क्या हो गया?

माधवकाका ने सारी वात सुन कर, उसका कुछ अश समझ कर, इतना ही कहा — गोपाल, यह स्कूल छोड़ दे भइया। दूसरी स्कूल में कल से ही तुझे भर्ती

करवा दूंगा।—नाराज होकर गया है, तो जाने दो। उसकी मर्जी। मेरा वह विगाड़ ही क्या सकता है?

इसी समय एक स्त्री ने आकर दरवाजे पर से ही इत्तला दी—भीखमचदजी के लड़के को औसर जीमने का न्योता है।' कहते हुए वहीं से स्थान, काल, तिथि वगैरह सब कुछ उसने सिलसिलेवार वता दी।

पड़ोस के एक वयोवृद्ध व्यक्ति की मौत हो जाने के कारण, उनके मृत्यु-भोज मे गोपाल को जाना होगा। निमंत्रण देने आई, नाई-पत्नी अपना सदेशा सुना कर चली गयी।

गोपाल ने माधवकाका से कहा—मैं कहीं नहीं जाऊगा।

–क्यों?

–मै कहीं नहीं जाऊंगा।

–अरे, ऐसा भी कहीं होता है? न्यात-गंगा से हम लोग कोई अलग हो सकते हैं?

–मैं नहीं जाऊंगा, माधवकाका।

–जायेगा नहीं, तो लोग क्या कहेंगे?

–लोग चाहे जो कहें। वे यों भी तो कहे विना मानते नही।

राधामाधव को इस जिद्द के पीछे एक दूसरी ही वात दिखाई दी। पत्नी को लक्ष्य करके कहने लगे—हमने भी तो भाई-भौजाई का औसर-मौसर नहीं किया। कर देना चाहिए।

–नहीं माधवकाका, वह भी नही होगा।

–हां, हा, तेरी सलाह लेकर ही मैं सब कुछ किया करूंगा। जरा बड़ा हो जा, दाढ़ी-मुंछें आ जाएं। घर-द्वार सभाल ले— फिर जो जी मे आये करना। अभी नहीं।

–माधवकाका, मा का पुण्य होगा, तो उन्हे स्वर्ग प्राप्त हो गया होगा। नहीं तो औसर-मौसर करने से भी कुछ नहीं होगा।

यशोदा ने कम पुण्य किया है, यह तो राधामाधव हर्गिज नही मान सकते। लेकिन यह सब किया क्यों नहीं जाय, यह वात उनकी समझ में नहीं आई। बोले—भइया, तूं कुछ ज्यादा पढ़ लिख गया है। मुझे जरा समझा दे, जिन्हें

२३

सगे भाई से भी ज्यादा मानता था, उनका औसर मैं नहीं करूंगा तो अच्छा दीखेगा क्या ? यह तो मेरा फर्ज है ! सो तो करूंगा ही। हमें तू कंधा दे आये, फिर तेरी जो मर्जी हो, करना।

–माधवकाका, लोग कहते हैं—औसर-मौसर करना किसी काम का नहीं। फिजूल-खर्ची है !

–कौन कहते हैं ? अंग्रेजी पढ़े-लिखे न ? सो कहने दो। उनके कहने से क्या होता है ? रीति-रिवाज थोड़े ही बन्द हो जाते हैं ?

–मैं किसी औसर-मौसर में नहीं जाऊंगा। भले आपासा और मां का ही क्यों न हो ? किसी की मृत्यु के नाम पर पकवान उड़ाना जिह्वा-का लोभ नहीं, तो और क्या है ?

राधामाधव का एक स्वभाव-दोष है। वह यह, कि वे स्वयं जिद्द करके, अड़कर, कोई काम नहीं कर सकते। इस निश्छल प्रकृति के आदमी के लिए इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं, कि जो होता जाय, उसकी साक्षी देने के लिए इन्हें पकड़ कर उपस्थित कर दिया जाय। बस। अपनी ओर से किसी तरह का संशोधन परिष्कार उनसे नहीं होता।

उस दिन तो बात आई-गई हो गयी।

गोपाल औसर में नहीं गया, सो नहीं ही गया।

किसी ने राधामाधव से जवाब-तलब किया—गोपाल को औसर में नहीं भेजा ?

–नहीं आया ? अच्छा। आजकल पढ़ने-लिखने में लगा हुआ है न ? नहीं आया होगा ?

–सुना है, तुम उसे जात-न्यात में नहीं रहने दोगे। लोगों की जबान तो कोई रोक नहीं सकता। कहने वाले कहते ही हैं कि न तो भीखमचंदजी की गति ही करवाई। न पूरी तरह से मृत्यु-संस्कार।

पल मात्र में उस दिन का सारा दृश्य राधामाधव की आंखों के सामने घूम गया। मन की विरक्ती छिपाकर बोले—आप तो जानते ही हैं क्या हालत थी ! करता भी तो, कोई आता नहीं !

–आता क्यों नहीं ! गोपाल की मां मरी, तो उस दिन भी लोग आने को तैयार थे। लेकिन पुलिस का मामला ठहरा ! डरें नहीं, तो क्या करें ? तुम्हारी तरह सब की तो छाती है नहीं ?

–खैर, मैं भी सोचता हूं कि जो प्रभु को मंजूर था, वह तो हो ही गया, उन्हें अपने सत्त के बल पर अक्षय लोक की प्राप्ति भी हो गयी। अब पुरानी बातों को भूल जायं, तो अच्छा। याद करता हूं, तो दुख होता है।

–तो औसर-मौसर उठ जायं!

–वह तो आप जानें। मैं क्या कहूं?

–दीखता तो यही है। बड़े-बूढे तो गधे ही थे, जो यह सारी व्यवस्था कर गये हैं।

इस बारे में राधामाधव की कोई स्पष्ट राय नहीं थी। इसलिए चुप रह गये।

तब समाज के सर्दारों ने असहाय दीर्घ श्वास लेकर घोषित किया—जमाने पर ही हवा बह गयी है।

गोपाल अपने कर्तव्य के प्रति जितना जागरूक हो गया है, उतना ही अपनी बात को प्रस्थाप्ति करने के लिए दृढ़ भी। इस प्रवृत्ति के कारण कभी-कभी उसमें चिड़चिड़ापन आ जाता है।

उस दिन धोबी और सब्जीवाला जब दूकानों का किराया ले कर आये, तो गोपाल ने हमेशा की तरह अपने सुरक्षित आले में रुपये रख दिये।

पारो ने हंस कर कहा:—गोपाल, तूं तो अब सेठ हो गया है। बहुत सारे पैसे जमा कर लिये हैं।

–हां, काकी, बहुत हो गये हैं। एक बात पूछूं?

–बोल?

–मैं ये तमाम रुपये खर्च करना चाहता हूं। कैसे करूं?

घर गृहस्थी में रोज ही तो रुपये खर्च होते हैं। लेकिन इतने सारे रुपये गोपाल कैसे खर्च करे, इस सवाल का जवाब पारो नहीं दे सकी। कारण, खाने-पीने, कपड़े-लत्तों अथवा पुस्तकों के लिए जो कुछ खर्च होता है—और हो रहा है— उसके अलावा गोपाल इन पैसों को कहां और कैसे खर्च करे, यह उसकी समझ में नहीं आया।

लेकिन जवाब तो देना ही था। इसलिए बोली:—जब तेरा ब्याह हो जाय, तब रुपयों की जरूरत होगी कि नहीं? जब घर में छम-छम करती हुई बहू आ जाय, तब उसे दे देना!

फिलहाल उस खर्च की संभावना नहीं। सो गोपाल चुप ही रहा।

आज एक वात और स्पष्ट हो गयी। फिर एक दिन उसे इस घर को भी छोड़ देना होगा। नयी घर-गृहस्थी वसानी होगी। उस दिन पता नहीं, कहां से एक लड़की आकर इन रुपयों को अपनी मुट्ठी में वन्द करके खर्च करने के तमाम तरीके उसे समझा देगी। तव, उस दिन, इस पारो-काकी, माधवकाका को छोड़ कर, फिर वह किसी नये घर-ससार की सृष्टि करेगा। पता नहीं, उस नाटक का अन्त कैसे होगा? जैसे कोई भी चीज स्थाई नहीं हो। किसी भी चीज का निश्चित स्वरूप अखडित रहनेवाला न हो।

सव कुछ अस्त-व्यस्त, वेमेल ही तो दिखाई देता है।

जिन्होंने आज आश्रय दिया है, उनके मन में प्रेम है—यह वह जानता है। लेकिन मन की भाषा तो स्पष्ट नहीं, व्यापक नहीं। उसे तो कोई समझ नहीं सकता। एक है ब्राह्मण—दूसरा है मोवी—वैश्य।

कुछ दिनों के वाद यज्ञोपवित-सस्कार सम्पादित हो जायगे, तव इनके हाथ की कच्ची-रसोई खाना भी वर्जित हो जायगा। पता नहीं, किन सत-महात्माओं द्वारा वनाये गये नियम-कानून आकर उसके इस सहज जीवन को विश्रृखलित कर देंगे। इतना ही नहीं, इसके वाद इस नाटक का दूसरा अक आरंभ होगा। व्याह हो जायगा। किसी अनजानी कन्या का हाथ पकड़े, इतने वड़े ससार में सव कुछ विसर्जित करके, फिर उसे सोचना होगा आगे क्या किया जाय?

भविष्य के बारे में कुछ भी न जानते हुए यह यक्ष-प्रश्न सदैव बना ही रहेगा।

माधवकाका ने एक दिन घोषित किया:— गोपाल, अगली वूज को तेरी जनेऊ पड़ेगी।

एक दिन गोपाल ने इसी वात का विरोध किया था। इसके वावजूद भी यदि माधवकाका का यही निर्णय है, तो वार-वार 'नहीं' कहते हुए उसे लज्जा आती है। इसलिए उसने सिर्फ इतना ही कहा — अच्छा!

जी खोल कर राधामाधव ने खर्च किया। धूमधाम से यज्ञोपवित-सस्कार सम्पन्न हो गये। आवश्यक नेगदस्तूर होने के वाद, बगल में कमण्डल, हाथ में मृगछाला, दावात, कागज लिये, द्वार पर जलते हुए दो दीपकों को उलटकर,

पाव के खड़ाऊओं से उन्हें तोड़कर, गुरु के निर्देशन के अनुसार भागता हुआ, वह भैरूंजी के छोटे से मन्दिर मे पहुंच गया। परम्परानुसार गली-मुहल्ले के लड़के उसके पीछे-पीछे दौड़े—कि कहीं भागता हुआ यह ब्रह्मचारी काशी जाकर ही दम न ले। इसलिए उसे पकड़ ही लेना चाहिए।

वह किसी के हाथ नहीं आया। भैरूंजी को धोक देकर, हांफता हुआ वह दम लेने लगा। इसी समय राधामाधव और गली के तमाम समवयस्क बच्चे भी आ गये। माधवकाका ने हंस कर मनुहार की'—बेटा, वापस घर चलो।

ये सनातन प्रश्न और उनके निश्चित उत्तर उसे पहले-से ही समझा दिये गये थे। इसलिए, पहले तो उसने यही कहाः—नहीं, हम तो काशीजी जायंगे।

गोपाल ने मन ही मन सोचा, सचमुच यदि वह इसी समय यहा से काशीजी के लिए रवाना हो जाय, तो ? ब्रह्मचारी रह कर विद्याध्ययन करे। पंडित बन कर वापस लौटे—तो ?

यज्ञोपवित-सस्कार के समय किये जाने वाले इस नाटक अथवा परिपाटी का जिस किसी ने सूत्रपात किया, उसका बुद्धिकौशल अत्यन्त प्रशंसनीय है। सचमुच विद्याध्ययन के सकल्प लेने पर, घरवालो का पीछे दौड़ना हमेशा बाधक बन जाता है। लोग पीछे दौड़ते हैं, कि कहीं सचमुच पलकों की ओट होकर वह पंडित न हो जाय। लोग भागते हुए ब्रह्मचारी का पीछा भले करते रहे, लेकिन उसे भैरूंजी की साक्षी देकर यही कहना होता है—हम तो काशीजी जायंगे।

विद्यानुरागी ब्रह्मचारी को तब, किसी की बात न सुनकर काशीजी चले जाना चाहिए।

मगर अब तो यह सिर्फ परिपाटी मात्र रह गयी है।

गोपाल को सुनी हुई एक कथा याद आ गयी। एक लड़के ने बड़ी जिद्द की। वह सचमुच काशीजी चला गया। बारह साल बाद, शिक्षा समाप्त करके ही लौटा। उस ऐतिहासिक विद्यार्थी की तस्वीर याद आते ही, उसकी भी इच्छा हुई, कि सब कुछ छोड़-छाड़ कर, वह भी काशीजी के लिए रवाना हो जाय ?

यदि वह ऐसा करे, तो लोग इसे पागलपन ही कहेंगे।

फिर सबको समझाना मुश्किल हो जायगा, कि सचमुच मैं हृदय से यही चाहता हूं।

राधामाधव ने प्रलोभन देते हुए कहा —बेटा घर चलो। तुम्हारे विद्याध्ययन का प्रबन्ध यहीं हो जायगा। काशीजी के महापण्डित को ही यहां बुला लेंगे।

गोपाल अभी तक कह सकता था, कहा —हम तो काशीजी जायगे।

–अच्छा बेटा, तेरे लिए सोने जैसी बहू ला देंगे। घर लौट चल।

एक बुजुर्ग बीच में पड़े —वचन दो, साक्षी दो, तब ब्रह्मचारी लौटेगा।

गोपाल ने जवाब दिया—मै ब्रह्मचारी हू। मुझे शादी ब्याह से क्या लेना-देना ? मैं तो काशीजी जाऊगा।

अनुष्ठान करने वाले पुरोहित ने कहा —अब जल्दी करो। देर हो रही है।'—अर्थात इस नाटक का यह अक अब जल्द ही समाप्त हो जाना चाहिए।

परिणाम स्वरूप प्रत्येक ब्राह्मण-पुत्र जिस प्रकार वधु-प्राप्ति के प्रलोभन मे भैरूजी के मदिर को छोड़कर, काशीजी जा कर विद्यार्जन करने की योजना को डिसमिस करके लौट आया करता है— ठीक उसी तरह गोपाल को भी चले आना पड़ा।

एक दिन का उपवास करके, ब्रह्मतत्व की उच्च मर्यादा से सयुक्त होकर, गोपाल वापस जब घर लौटा तो उसे एक नूतन समाचार मिला — कि एक वृद्धा रसोईदारिन हमेशा के लिए उसकी रसोई बनाने के लिए रख ली गयी है।

अर्थात, आज के बाद से वह इस अपरिचित, मगर धर्म-रक्षा में सबल, वृद्धा के हाथ की रसोई ग्रहण करके शुद्ध ब्राह्मण बन जायगा। इस वृद्धा द्वारा परोसा हुआ अन्न खाकर ही उसका शरीर पोषित होगा। उसमें पारो-काकी के वर्ण-दूषित प्रेम की जरूरत शायद न रहे। ब्राह्मणत्व तो सुरक्षित रह जायगा!

आज से पारो काकी के हाथ का खाना वह नहीं खा सकेगा। वह जिद्द करेगा, तो माधवकाका यही कहेंगे —ना रे भइया, धर्म की मर्यादा हम भंग नहीं करेंगे।

यह सारा झूठा आडम्बर पागलपन नहीं है, तो और है क्या ?

इस मिथ्याचार की व्यर्थतता की घोषणा करने की सामर्थ्य गोपाल में नहीं है। नहीं है, इसीलिए वह समझदार है। अन्यथा चारों ओर से विरुद्ध शोर एकत्रित होकर उसे निश्चित रूप से पागल करार कर देगा!

एकान्त मिलने पर, गोपाल ने माधवकाका से पूछा,—काका, आजकल आपके औघड़बाबा कहा हैं ?

–वे तो सदा से चुरू ही रहते हैं।

–माधवकाका, वे जात-न्यात मानते हैं?

–वे तो सन्त आदमी हैं, गोपाल। उनके लिए क्या तो जात और क्या न्यात? वे तो इन सबसे ऊपर हैं!

–माधवकाका, उनके दर्शन कैसे हो सकते हैं?

–हो क्यों नहीं सकते? चल, कल ही चुरू जा आवें। मैं भी सोचता था, तेरा यज्ञोपवित हो गया। अब जाकर बाबा की आशीस ले आवें।

–औघड़बाबा कैसे हैं माधवकाका?

–अरे, वे हैं सन्त। तपस्वी! उनकी महिमा अपरम्पार। विभूति हैं। सर्दी में बिना कुछ ओढ़े, नंग-धड़ंग बैठे रहते हैं। गर्मी की तपती दोपहरी में धूनी जमाये जमे रहते हैं। तुष्ट हों, तो कंगाल को कुबेर का कोष दे दें। नाराज हो जायं, तो सर्वनाश निश्चित है। पहले मैं तो उनके पास ही रहता था। तुम्हारे जितना था, तबसे! ऐसा सत्संग होता था, गोपाल, कि तुझे क्या कहूं? अब तो वे तमाम बातें पुरानी हो गयीं।

गोपाल तन्मय होकर इस महापुरुष की कथा सुन रहा था।

सोच रहा था.—ऐसे आदमी को पागल नहीं कहा जाता?

पिता के सारे लक्षण ऐसे ही तो थे। मगर उनको रखा जाता था, बांध कर। इस नंग-धड़ंग व्यक्ति के चरणों में सिर झुकानेवाले लोगों की तो कमी ही नहीं। ऐसे अद्भुत भाग्यशाली प्रतापी व्यक्ति के दर्शनों की उत्कंठा के कारण उसने प्रार्थना के स्वर में कहा —एक दिन उनको जरूर बुलाओ, माधवकाका।

–सच्चे दिल से भक्ति होने पर उनके दर्शन अवश्य होंगे, गोपाल

गोपाल ने चुप रह कर, मानों स्वीकार कर लिया, कि वह सच्चे हृदय से भक्ति करके उस महाभाग के दर्शन अवश्य करेगा— जो नितान्त पागल होते हुए भी लोगों की असीम श्रद्धा का पात्र बना हुआ है।

खाना तैयार हो जाने के कारण दोनों की बुलाहट हुई।

एक मोदी अपनी पत्नी के सामने थाली पसार कर बैठ गया।

दूसरा ब्राह्मण, सगोत्रीय श्रद्धेय महिला की परोसी हुई थाली में भोजन करने लगा।

–मिर्चें बहुत हैं। आटा रद्दी है। साग अच्छा नहीं बना। फुलके चींदे हो गये।' इत्यादि कहता हुआ उग्र रूप से आलोचना करते हुए, वह किसी तरह पेट में कुछ डाल कर उठ खड़ा हुआ।

राधामाधव को भी यह सब कुछ बड़ा अटपटा-सा लगा। पारो ने कहा — गोपाल से यह खाना खाया नहीं जायगा। जरा-सा खाकर उसने हाथ धो दिये।

–देख तो रहा हू। लेकिन किया क्या जाय ?

पारो समाधान नहीं दे सकी। राधामाधव निष्कृति का उपाय सोचते रहे। अन्त में बोले — पारो, तेरी तबीयत भी आजकल ठीक नहीं रहती। घर का काम-धन्धा भी अब तुझसे होता नहीं। न हो, हमारी रसोई भी इसी दादी से बनवा ली जाय ?

वृद्धा ने सुदृढ़ स्वर में आपत्ति प्रकट की — ना राधामाधव, पन्द्रह रुपये में सारे कुनबे की रसोई मुझसे नहीं होगी।

–हो जायगी दादी, हो जायगी। पन्द्रह मे नहीं, तो पच्चीस में सही। हो जरूर जायगी।

चौदह :

पैरों में पख बांधे समय गुजरता गया।

और एक दिन राधामाधव की तमाम तकलीफों के बावजूद भी पारो का पीहर जाना जरूरी हो गया। प्रथम-प्रसव तो ससुराल में हो नहीं सकता! फिर यहा कोई नाते-रिश्तेदार की तजुर्बेदार बड़ी-बूढ़ी भी नहीं। गोपाल तथा पति को घर-गृहस्थी से सम्बन्धित अनेकानेक जिम्मेदारीया सौंपती हुई, सावधान रहने के विविध प्रकार के उपदेश देती हुई, पारो-काकी अपने भाई के साथ पीहर चली गयी। जाते-जाते गोपाल से उसने कई बार प्रतिज्ञा करवा ली — चिट्ठी रोज लिखना। भूलना मत। आदि।

दूसरे दिन देर से रसोई बनाने के अपराध में गोपाल, दादी पर भुनभुना रहा था। दादी ने आखिर धूप मे बाल सफेद नहीं किये थे। लिहाजा, अपने अनुभवों के बल पर, उपयुक्त अवसर के लिए उपयुक्त जवाब वह बड़ी आसानी से दे सकती थी। दे रही थी। राम-राम करके खाना तैयार हुआ।

राधामाधव आ गये। दोनों जीमने बैठे। कच्ची रसोई थी। इस कच्ची रसोई के नियम किस विधाता ने बनाये हैं, सो तो अब तक शोध का विषय ही है—लेकिन इन नियमों के पालन की कठोरता सुप्रचलित तथा ख्यातिप्राप्त है, इसमें सन्देह नहीं।

यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, कि राधामाधव की धोती का पल्ला गोपाल की क्यारी (चौकी) से छू ही गया। लेकिन उस वृद्धा की अन्धी-प्राय आखों ने इस भयंकर दुष्काण्ड को देख ही लिया। तुरन्त बोली—अरे-रे-रे, उसे छू ही देगा क्या? उठ रे गोपाल, उठ। देखता क्या है! अरे, उनका पल्ला जो छू गया है। अब भी खाता ही रहेगा क्या?

गोपाल ने गुस्से में आकर थाली मे हाथ धो दिये। बोला—मुझे खाना ही नहीं है। जात जायगी, तो मेरी जायगी। तुम्हे इतना दर्द क्यों हो रहा है? करना हो, तो चुपचाप अपना काम किया करो। नहीं तो यह सब छोड़-छाड़ दो। तुम्हारे बस का नहीं।

-देख लो, राधामाधव। मैं तो तुम्हारा लिहाज कर जाती हूं। तुम्हीं देख लो, इस छोकरे को। दो पैसे की मजदूरी करती हूं, तो धरम-करम भी बेचना होगा? यह मुझसे नहीं होगा भइया। साफ-साफ कहे देती हूं। यह सभालो अपना चौका-चूल्हा।' कहते हुए वृद्धा ने हाथ मे रखा हुआ चिमटा नीचे पटक दिया। चौके में से नीचे कूद आई। हाथ धोने लगी। तवे पर रोटी जल रही थी, जलती रही।

राधामाधव कुछ भी नहीं बोले। उठ खड़े हुए। बोले — इस समय तुम जाओ, दादी। शाम को वक्त पर आ जाना। आज हम दोनों बाहर खा लेंगे।

-कर दो मेरा हिसाब। मैं किसी की गुलाम नहीं। भरपाई तुम्हारी नौकरी।

इतना सुनते ही गोपाल धम्-धम् करता हुआ अपने आले के पास गया। वहां से कुछ रुपये उठा लाया। दादी के सामने फेंकते हुए बोला—ये लो, अब

चली जाओ।' इतना कह कर माधवकाका की ओर देख कर बोला --काका, मैं स्कूल जा रहा हू। देर हो रही है।

राधामाधव एक क्षण तक चुप रहे। इसके बाद हस कर बोले --तुम दोनों का बचपना कब जायगा ?

बुढ़िया आंखें पोंछती हुई बोली — मैंने तो इतना ही कहा था माधवजी, कि भइया रे, पल्ला थोड़ा ऊचा कर लो। दोनों क्यारिया एकाकार हो रही हैं। आपस में इस तरह छूने से क्या लाभ ? इसी छूत-छात की रसोई का प्रसाद श्रीनाथजी को तो चढाया नहीं जा सकेगा ? फिर मैं अन्न मुह में रखूगी कैसे ? अच्छी बात है, इसे ही 'सीर-सस्कार' कहते हैं। कहा सुना माफ करना, राधामाधव। नहीं निभी, सो हरि इच्छा।

इतना कह कर वह कपड़े बदलने चली गयी। फिर अपना झोला उठा कर कुछ इस तरह से राधामाधव के सामने से गुजरी कि वे देख लें कि आसुओं का तीव्र प्रवाह रोकने के लिए उसे सारा ओढना आंखों के सामने करना पड़ा है। अन्यथा जल-प्रलय हो जाता। राधामाधव इस विचित्र तमाशे को देखते रहे। बारम्बार यही कहते रहे—अच्छी बात है। जो जिसके मन में आये, कर लो। राधामाधव तो किसी को कुछ कहनेवाला है नहीं। न तुम्हें, न गोपाल को। जिसकी जो मर्जी हो करे, जो मर्जी हो कहे।

दादी के चले जाने पर राधामाधव ने गोपाल से कहा —क्यों बेटा, समाज-सुधार हो गया न ? चलो अच्छा हुआ। अब यह बता, पेट पूजा कैसे होगी ? तू तो शायद भूखा स्कूल चला भी जाय, लेकिन मुझसे तो रहा नहीं जायगा। मुझे कौन पका कर खिलायेगा ?

गोपाल ने बस्ता नीचे रख कर, दर्प भरे स्वर में कहा —मैं खिलाऊगा।

–होगा यह सब तुझसे ? कभी रसोई बनाई भी थी, कि अभी बना देगा ?'—कहते हुए राधामाधव कुछ सोच में पड़ गये। फिर एक क्षण बाद, गोपाल की ओर देखकर बोले —अच्छा, गोपाल मेरे हाथ की तूं खा लेगा ?

–खा लूंगा।

–किसी से कहेगा तो नहीं ?

–नहीं कहूगा।

–तो फिर जा, दरवाजा बन्द कर आ। ऐसी बढ़िया रसोई बना कर खिलाऊँगा, कि तू भी क्या याद करेगा। जा।

गोपाल दरवाजा बन्द कर आया। इस विशालकाय मकान में इन दो प्राणियों का एकछत्र साम्राज्य स्थापित हो गया। फिर तो राधामाधव ने अपने उत्साह के अनुरूप ही सारी तैयारी की। व्यवस्था के दृष्टिकोण से इससे पर्याप्त हानि भी हुई। मगर रसोई बन जाने पर, भोजन करने से दोनों को जो तृप्ति हुई, वह अपूर्व थी।

गोपाल ने कहा—रोज इसी तरह किया करेंगे, माधवकाका।

–अरे जा। रोज-रोज मुझसे यह गोरखधन्धा नहीं होगा, भइया।

–भले न हो। आपके हाथ की तो खा ही गया हूं। धर्म गया होगा, तो अब तक चला गया होगा। अब हम साथ ही खाना खायंगे। अब यदि किसी रसोईदारिन को रखेंगे भी, तो ऐसी, जो इस तरह के झगड़े न किया करे।

दोनों भोजन कर ही रहे थे, कि किसी ने दरवाजा खटखटाया। राधामाधव ने अपनी थाली पाटे के नीचे सरका दी। गोपाल मुख्य आसन पर प्रतिष्ठित होकर रसोइये की मुद्रा में बेलन लेकर विराजमान हो गया। राधामाधव ने अच्छी तरह से हाथ धो-पोंछ कर दरवाजा खोला।

सब्जीवाला किराया देने आया था। रुपये देकर जब वह चला गया, तो दोनों अपनी इस कायरता पर खिलखिला कर हंस पड़े और वापस भोजन करने बैठ गये।

अन्ततोगत्वा नयी रसोईदारिन की नियुक्ति की समस्या भी हल हो गयी।

पड़ोस में रहनेवाली, मृत-सुगने की मा ने अपनी विधवा पुत्र-वधु की पाक-विद्या की इतनी तारीफ की, कि राधामाधव कोई आपत्ति कर ही नहीं सके। दूसरा एक और कारण भी था। विधवा बहू की सास ने अपनी आर्थिक दुरावस्था का ऐसा करुण चित्र खींचा, कि राधामाधव जैसा आदमी बिना जरूरत भी उसे रख लेता, और फिर इस समय तो सख्त जरूरत भी थी।

नूतन रसोईदारिन की उम्र लगभग १६ साल की होगी। बाल-विधवा है। पीहर में कोई न होने के कारण ससुराल में, एक मात्र सास के पास ही रहती है। दुबली-पतली काया। छरहरा कद। रूप का कोई सवाल नहीं, देखने पर दया

आये। विवाह के ६ महीने बीतते–न–बीतते विधवा हो गयी। राधामाधव को मामा कहती थी। लिहाजा, यहा शर्म–सकोच जैसी कोई वात नहीं थी। गोपाल से कुछ ही बडी होने के कारण उसके सामने कुछ बुजुर्गाना ठाठ भी निभ जाता।

आते ही उसने गोपाल से कहा — तुम सब लोग बहुत गन्दे हो।

गोपाल ने अपने कपडों की ओर देख कर, कुछ लज्जित होकर कहा — नहीं तो।

यहा एक वात स्पष्ट कर देनी होगी। आगन के एक कोने मे मैले–कपडों का विशाल अम्बार लगा हुआ है। इसका मुख्य कारण तो यह है कि पारो यहा नहीं है, इसलिए विराट प्रश्न यह है कि कपडे धोये कौन? जितने कपडे थे, वे सब तो पहन लिये गये, और गन्दे कपडों का ढेर सफाई के लिए एक कोने मे जमा कर दिया गया। काका–भतीजे में से अभी तक किसी का ध्यान इस ओर गया ही नहीं। यद्यपि एक वार राधामाधव को यह सद्‌मति अवश्य सूझी थी, कि अपने धोबी को बुला कर ये तमाम कपडे दे दिये जाय और कह दिया जाय, कि तुरन्त लौटा दे।

लेकिन रोज भूल जाते, और इस तरह घूम–फिर कर उन्हीं गदे कपडों मे से अपेक्षाकृत अधिक उजले कपडे ढूढ कर सतोष कर लिया जाता। मन–ही–मन फिर से सकल्प दुहराया जाता — धोबी को बुलाकर तमाम कपडे दे दिये जाने चाहिए।' फिर पारो के आगमन से होने वाले लाभ की ओर ध्यान देकर, कुछ दिनों के इस कष्ट को भुगत लेने का निर्णय हुआ। एक वार उन्होंने खुद कपडे धोने का अनुष्ठान भी कर डाला। मगर इतना सुदीर्घकालीन गोरखधन्धा उनसे पूरी तरह निभा नहीं। लिहाजा, धोबी का पुण्य–स्मरण करके इस समस्या की ओर से फिर आखें मूद ली गयीं।

नूतन रसोईदारिन—मीनल—ने गोपाल से कहा — जा, ये कपडे इसी समय धोबी को दे आ।

इतनी-सी वात तो राधामाधव जब चाहते, कर सकते थे। सम्भवत उन्होंने अच्छी तरह से चाहा ही नहीं।

अब फिर राधामाधव निश्चिन्त हो गये।

मीनल भली लड़की है। भाग्य रुठ गया, इसलिए विधवा हो गयी। घर में सिवाय बुढिया सास के कोई नहीं। सास के दुख के सामने वह आज तक

किसी से हंस-बोल नहीं सकी। इस छोटे-से परिवार में शामिल होकर आज एकबारगी वह अपना सारा दुख-दर्द भूल कर, इस नूतन घर की पुनर्प्रतिष्ठा में व्यस्त हो गयी। झाड़ू लगाने से लगाकर, रुपये-पैसे का हिसाब रखने तक का सारा काम उसी के जिम्मे आ पड़ा। राधामाधव माथे पर हाथ रख कर, मन-ही-मन बोले — भाग्य की बात है, भाग्य की। स्त्रियों की गुलामी करना ही यहा लिखा है। फिर भी वह मोर-मुकुटवाला बंसीधर ऐसे आदमियों का ख्याल भी खूब रखता है। कोई-न-कोई सुधि लेने के लिए उसकी ओर से ऐन वक्त पर आकर हाजिर हो ही जाता है।

राधामाधव मीनल को प्यार से बाई कहा करते। गोपाल को उचित सम्बोधन ढूंढे नहीं मिला। पूछा —अच्छा, मैं तुम्हे क्या कहूं ?

-मीनल। यही मेरा नाम है।

-मी—न—ल! अच्छा, इसका मतलब क्या होता है ?

-मैं क्या जानूं ? बस, नाम होता है।

नाम बेहद पसन्द है। मीनल भी गोपाल को अच्छी लगती है। इसका सबसे बड़ा कारण तो यह है, कि परम पवित्र जनेऊ पहन कर, पवित्र ब्राह्मण हो जाने के बाद भी, अगर गोपाल राधामाधव के साथ एक ही थाली में खाना खा ले, तो भी इस मीनल को कोई खास आपत्ति नहीं। उसका इससे धर्म नहीं डूबता। किसी अज्ञात धर्म को बचाने के लिए कोई व्यर्थ हाहाकार नहीं। यहा तक कि उसने स्वयं आश्वासन दे दिया था, कि इस बात की चर्चा वह कभी कहीं नहीं करेगी। साथ ही एक विशेष दलील से इसका औचित्य भी उसने सिद्ध कर दिया। बोली —आजकल तो सब चलता है। मैंने देखा है, ब्राह्मणों के बेटे छिप-छिप कर सिगरेट पी लेते हैं। हा!

गोपाल आश्चर्य से चकित-भ्रमित हो उठा। ब्राह्मण-पुत्र मोदी के हाथ का बनाया हुआ खा लें, अथवा उनके साथ एक थाली मे जीम लें—यह तो समाज-सुधार की बात हुई। मगर सिगरेट पीना—इसका तो किसी क्राति अथवा समाज-सुधार में उल्लेख नहीं। फिर इतना बड़ा घृणित काम ? छिः छि, यह कैसे हो सकता है ?

आश्चर्य-चकित गोपाल को समझाते हुए मीनल ने आगे कहा.-रामगोपालजी के बेटे को जानते ही हो-मैंने खुद अपनी आखों से देखा है-बाड़े में जाकर-'शब्दों

की व्याख्या यहां आकर उसने समाप्त कर दी। मुह बना कर सिगरेट पीने के लिए होठों को सिकोड़ कर, दो अगुलियों से उसे पकड़ने की मुद्रा समझा कर, उसने दो-तीन वार इतनी लम्बी सासें खीची, कि सचमुच गोपाल का हृदय इन पापात्माओं की दयनीय दशा पर त्राहिमाम् कर, खिलखिला उठा।

इस मीनल के राज्य में सारे गुनाह माफ हैं। विना नहाये भोजन कर लेने पर भी शास्त्रीय फैसला देने मे वह असमर्थ है। अपनी-अपनी रुचि की अनेक चीजें तैयार करवा लेने पर भी उसे कोई आपत्ति नहीं। कोई देर-अवेर से आये तो किसी तरह की कैफियत नहीं।

इस नवीन घर में वह कुछ दिनों के लिए मालकिन वन गयी है। एक युवा-विधवा के मन में जितनी कामनाए हो सकती हैं, उतनी ही मीनल के मन मे भी हैं। इसलिए यह उसे प्रलोभनीय लगता है। अच्छा लगता है। वेहद पसन्द है। भयमिश्रित एक ही शका मन के किसी अन्तराल मे कभी-कभी उठ खड़ी होती है—यह सारी माया एक दिन विलुप्त हो जायगी। स्नेह का लहराता हुआ यह सागर उसे जीवन मे फिर कभी नहीं मिल सकेगा।

इसलिए वह यथेष्ट सावधान है कि इन दोनों महापात्रों में से कोई, एक पल के लिए भी नाराज न हो जाय। वह भगवान की पूजा-पाठ अधिक नहीं करती। फिर भी उसने मन ही मन जगदीश्वर से प्रार्थना की है—प्रभो, मुझे यहीं दासी वनी रहने दो।

एक दिन गोपाल ने मीनल से पूछा—मीनल, तू विधवा कब हुई?

–वहुत दिन हो गये।

–कितने दिन हुए होंगे?

–चार साल।

–भाग्यदोष? है न?

–सो तो है ही भइया। कर्म-लिखी कोई थोड़े ही मिटा सकता है?

–पुस्तकों में लिखा है मीनल, कि सबके दिन वदलते हैं। जिसको दुख मिलता है, उसे एक दिन सुख अवश्य मिलता है। जिसे सुख मिलता है, उसे दुख भुगतना ही पड़ता है। फिर तुझे भी एक दिन सुख मिलेगा जरूर।

–मिलेगा गोपाल, मिलेगा। जव मैं-श्मशानों तक पहुच जाऊगी। तव।

–अभी तुम थोड़े ही मरोगी ? अभी तुम बूढ़ी कहा हुई ?

मीनल को हसी आ गयी ।

गोपाल ने कहा'— मेरे एक मास्टरजी ज्योतिष जानते हैं । उन्होंने मेरा हाथ देखकर कहा था—मैं बहुत बड़ा ज्ञानी बनूंगा !

–बनोगे क्यों नहीं ? जरूर बनोगे । इस उम्र मे नहीं तो, ऐसी बाते कौन कर सकता है ? अच्छा गोपाल, एक बात बता । तुझे मा–बाप की याद आती है न ?

–नहीं ।

–तूं सब कुछ भूल गया ?

–थोड़ा बहुत भूल गया हूं । एक दिन सब कुछ भूल जाऊंगा । उन बातों को याद करने से क्या लाभ, है न मीनल ? अच्छा, तूं अपने पति के साथ सती नहीं हुई ?

मीनल के कलेजे में यह प्रश्न बर्छी की तरह चुभ गया । सिर नीचा कर रूद्ध स्वर में धीरे से बोली.—नहीं ।

–नहीं क्यों ? पति के साथ सती हो जाती, तो अक्षय पुण्य मिल जाता ।

उसने अब तक दुर्भाग्य के इस अंत के बारे मे कभी सोचा ही नहीं था । जवाब नहीं दे सकी ।

–एक बात पूछूं मीनल, बुरा तो नहीं मानेगी ?

–नहीं । पूछ ।

–तू—अपने पति को बहुत प्यार करती थी न ?

अपने दुर्भाग्य के इस प्रसग से मीनल अत्यन्त व्याकुल हो उठी । यह तो वह कैसे कहे, कि वह भारतीय कन्या पति से प्यार नहीं करती ? लेकिन उससे झूठ भी नहीं बोला गया । कहा.—मैंने उन्हें देखा ही कहा ?

–यही तो कहता हू । तू है बाल–विधवा । तूंने अपने पति को देखा तक नहीं । किताबों मे लिखा है—इसी तरह स्त्रियों के साथ पुरुषों ने अन्याय किया है । सो छोटी उम्र में विधवा हो जाने पर, लड़कियों का दूसरा विवाह अवश्य कर देना चाहिए । स्त्री के मर जाने पर मर्द दूसरी शादी कर लेते हैं कि नहीं ? फिर औरतें क्यों नहीं करतीं ?

–ऐसा कहां होता है क्या ?

–बहुत-सी जातियों में होता है।

–मगर हम तो ब्राह्मण हैं न? हमारे यहा ऐसा नहीं होता।

–हमने पूर्व जन्म में कोई बहुत बड़ा पाप किया होगा मीनल, तभी ब्राह्मण के घर जन्म लेना पड़ा। इतना बड़ा तिरस्कार, दुख भोगना पड़ा। है न?

मीनल सिर झुकाये चुपचाप बैठी सब्जी बघारती रही।

–मीनल, बगाल में एक बहुत बड़े महात्मा हो गये हैं ईश्वरचन्द्र विद्यासागर। उन्होंने वेदों का, शास्त्रों का बड़ा अध्ययन किया। वे कहा करते थे, हिन्दू-धर्म में विधवा विवाह निषिद्ध नहीं है। वह चाहे तो ब्याह कर सकती है। शास्त्रों में मनाई नहीं है।

मीनल इस असभव बात को सुनती रही।

गोपाल कहता गया — एक दिन उनके यहा जवान कन्या विधवा होकर लौट आई। उस दिन समाज के सरपचों ने खूब प्रसन्न होकर कहा — शास्त्र-विरुद्ध जानेवाले को भगवान ने दंड दिया। मगर भगवान तो उनकी तरह दुष्ट नहीं। वह उदार है। सबका प्रतिपालन करता है। सबको क्षमा करता है। भगवान ने ली थी, उनकी परीक्षा। विद्यासागर उसमें उत्तीर्ण हो गये। उन्होंने उस कन्या का पुनर्विवाह कर दिया।

मीनल ने अन्यमनस्क होकर कहा — अच्छा। अब रसोई चढाती हू, तूं बैठ।

गोपाल ने उसका पल्ला खींच कर बिठा दिया। मीनल के सारे शरीर में बिजली-सी कौंध गयी। गोपाल अपना विद्वता-पूर्ण प्रवचन देता रहा —उस दिन सब लोगों ने मिल कर उनका विरोध किया था। लेकिन आज बगाल में उनकी पूजा की जाती है!

–तू अपने हाथ की छाप मुझे देना मीनल। मैं अपने मास्टर-साहब को दिखाऊंगा। एक-न-एक दिन दुख के दिन बीतते ही हैं। सारे दिन सरीखे थोड़े ही रहते हैं?

मीनल उसके पास वापस बैठ गयी। गोपाल कहता रहा — सोच तो मेरे मां नहीं, बाप नहीं, रुपये-पैसे भी नहीं—बिल्कुल कगाल—फिर भी मुझे इसी ससार में रहना है। दुख बहुत भोगा। अब सुख भी तो मिलना चाहिए, कि नहीं?

मा-बाप जो कुछ कर गये हैं, उस कलंक से एक दिन तो मुझे छुटकारा पाना होगा कि नहीं? इतनी बदनामी के बावजूद भी, सच बात तो मीनल यह है, कि यह सब एक दिन बीत ही जायगा। समय बड़ा बलवान होता है। वह सब कुछ खा-पी जाता है। देख ले, मैं पागल का बेटा कहा जाता हूं। फिर भी अपनी क्लास में फर्स्ट-क्लास आया हूं। इसी तरह यदि पास होता गया, तो इक्कीस साल की उम्र में मैं एम ए पास कर लूंगा। यह सबसे ऊंची पढाई होती है। जिस दिन पढ़-लिख कर विद्वान हो जाऊंगा। उस दिन सब लोग मेरा भी सम्मान करेंगे। मेरी भी कीर्ति गाते फिरेंगे। फिर एक दिन ब्याह भी हो जायगा। नयी घर-गृहस्थी बसेगी। अच्छा मीनल, फिर तूं क्या करेगी?

-पता नहीं।

-तुम्हारी सास तो बूढी है, मीनल। एक दिन जब वह मर जायगी, तब तेरा साथी कौन?

ठंडी सास लेकर मीनल ने कहा—कोई नहीं गोपाल!

-अच्छा मीनल, पारो काकी आ जायेगी, फिर भी तूं मेरा खाना बनाती रहेगी? यहीं रहेगी?

-रह जाऊंगी।

-मीनल, मुझे कभी-कभी बड़ा अकेलापन महसूस होता है।

मीनल को तो नित्य ही यही लगता है। वह क्या जवाब दे?

-अच्छा मीनल, काकी आ जायगी तो तुझे नौकरी से निकाल तो नहीं देगी?

-निकाल देंगी, तो चली जाऊंगी।

-फिर मुझसे कभी नहीं मिलेगी?

-मिलूंगी क्यों नहीं? तूं बुलाएगा, तभी चली आऊंगी।

-भूलना मत।

-ठीक।

-जब नौकरी नहीं रहेगी, तब क्या करेगी?

-क्या पता?

-बिना कमाये तो काम चल नहीं सकता। तभी तो तुम्हारी सास नौकरी के लिए इतना कह रही थीं। अच्छा मीनल, क्या सचमुच तुम लोग बहुत गरीब हो?

-बहुत गरीब हैं गोपाल। मुझे स्वीकार करते लज्जा आती है—हम माम बहू को दोनों समय खाना तक नसीब नहीं होता। फिर भी शरीर से प्राण नहीं निकलते। जब यहां काम नहीं मिलेगा, तो फिर कहीं तलाश करेंगे। नहीं मिला, तो हरि इच्छा।

कहते-कहते उसकी आखों मे पानी भर आया। गोपाल ने हाथ आगे बढा कर स्नेह सहित उसके आसू पोंछ दिये। आज पहली बार मीनल ने इतनी आन्तरिक महानुभूति महसूस की थी। जी किया, कि वह दिल खोलकर रोये। लेकिन इस क्षणिक सुख के विलास को भग करने का साहस उनमे नहीं था। अभी तक उसे, पता नहीं, कितने सालों तक इसी तरह दारिद्र्य भोगते हुए जीना है। जहां किसी भी तरह के सुख का कोई अवशेष नहीं। सो अब भविष्य के किसी बडे दुख की कल्पना करके वह अधिक अस्थिर नहीं होती। मगर आज इस अद्भुत अल्प-विराम के प्रति मोह-वश उसकी तृष्णा विकराल रूप धारण करके, उसका पल्ला थाम कर, चिर-काल तक बैठ जाने के लिए व्याकुल हो उठी।

पास बैठे गोपाल को उसने उद्विग्न कठ से पुकारा —गोपाल!' इतना-सा कहने में उसका गला भर्रा गया। जीभ सूख गयी। पसीने से वह तरबतर हो गयी।

गोपाल ने सिर उठा कर जवाब दिया —हा, मीनल।

-यहा आ।

गोपाल उसके पास सरक गया।

मीनल ने उसके कंधे पकड़ कर अपने धड़कते हुए सीने से लगा लिया। आज तक की अतृप्त क्षुब्ध लालसाए, उस एक पल में सन्निहित हो गयीं। एक पल के लिए, सिर्फ इस एक अल्प-विराम के लिए, वह ससारके तमाम विरोधों को भूल गयी। इस एक पल के लिए वह कोई भी कीमत देने को तैयार है। प्यार से इस गोपाल को छाती से लगा लेने की इच्छा, पता नहीं उसके मनमें कितनी बार हुई है। लेकिन मारे संकोच के, कि कोई देख ले तो क्या कहे—अब तक मन की बात मन में ही थी। लेकिन आज बधा हुआ कृत्रिम बांध टूट गया।

गोपाल कह रहा था —मीनल, विद्यासागर कहा करते थे, विधवाओं को अभाग्य के नाम पर इस तरह जिन्दगी भर तरसाये रखना पुण्य नहीं। तो एक दिन हमारे मास्टर साहब कहने लगे —विधवा-विवाह चाहे शास्त्र-सम्मत हो, चाहे न हो। लेकिन विधवा से ब्याह करेगा कौन? अच्छा मीनल, हम यदि ब्राह्मण नहीं होते, तो हम ब्याह कर सकते थे न?

मीनल मारे डर के पीली पड़ गयी।

इस असंभव बात की तो वह कल्पना भी नही कर सकती। लेकिन दूसरे ही क्षण वह आश्वस्त हो गयी, कि कहीं कोई नहीं देख रहा है। आज इस गुप्त प्रेमालाप का कोई साक्षी नही। इस मकान के बाहर चल-फिर रहे संसार को इस छोटी-सी घटना से कोई लेना-देना नही। शास्त्र और समाज की तमाम बातें यहा, इस एकान्त मे कोई विघ्न उपस्थित नही कर सकती। दुख से प्रताड़ित इन दो प्राणियों के लिए यह क्षणिक सुख महाविराट का एक अंश है। चार दीवारों के बीच, सारे समाज और संसार से अलग, इस समय एक किशोर-किशोरी के मिलन के अतिरिक्त इसे कोई सज्ञा दी नही जा सकती। स्त्री-पुरुष के प्रारंभिक मिलन की भूमिका के अतिरिक्त इसे कुछ कहा नही जा सकता।

गोपाल के मन में अनेक महा पुरुषों की वाणी एकत्रित होकर गूंज रही थी। बोला.— लोग विधवा-विवाह के लिए तैयार नहीं होते—न हो—लेकिन एक दिन मै सूर्य-चन्द्र और धर्म की साक्षी देकर यह काम जरूर कर बताऊंगा!

मीनल एक शब्द भी न बोली। सूर्य-चन्द्र और धर्म तीनों तत्काल आकर यदि उपस्थित हो गये, तो क्या होगा—इसकी कल्पना करके ही उसका चेहरा पीला पड़ गया।

गोपालने उस ओर ध्यान नही दिया। वह कहता ही रहा.— अब मुझे छोड़। मीनल मैं सच कहता हूं—एक दिन मैं पढ-लिख कर जरूर विद्वान बनूंगा। तब सारे समाज मे सुधार करूंगा। खाली बाते ही नहीं करूंगा। वह सब कर बताऊगा, जो कह रहा हू। देख लेना।

समाज के नियमो से नितान्त विपरीत इस प्रेम-लीला की महिमा के बारे मे कोई विशेष बात नही कही जा सकती। इसका महत्व इतना ही है, कि किशोर वय मे बराबरी के लड़के-लड़कियों मे जो सहज आकर्षण हो सकता है, सम्भवत यह उसी का परिणाम है।

एक दिन गोपाल ने राधामाधव से पूछाः—माधवकाका, छोटी उम्र मे जो विधवा हो जाती हैं, वे सती क्यों नहीं होतीं?

-सरकार ने बन्द करवा दिया है न? पहले होती थीं।

-जब सती नहीं हो सकतीं, तो फिर अच्छी तरह से जी क्यों नहीं सकती?

–बहुत गरीब हैं गोपाल। मुझे स्वीकार करत
बहू को दोनों समय खाना तक नसीब नहीं होता।
निकलते। जब यहा काम नहीं मिलेगा, तो फिर क
तो हरि इच्छा।

कहते–कहते उसकी आखों में पानी भर आ
कर स्नेह सहित उसके आसू पोंछ दिये। आज पहली
महानुभूति महसूस की थी। जी किया कि
लेकिन इस क्षणिक सुख के विलास को भंग करने व
तक उसे, पता नहीं, कितने सालों तक इसी तरह
जहा किसी भी तरह के सुख का कोई अवशेष न
बड़े दुख की कल्पना करके वह अधिक अस्थिर
अद्भुत अल्प–विराम के प्रति मोह–वश उसकी त
उसका पल्ला थाम कर, चिर–काल तक बैठ जाने

पास बैठे गोपाल को उसने उद्विग्न कठ से
कहने में उसका गला भर्रा गया। जीभ सूख गयी

गोपाल ने सिर उठा कर जवाब दिया —

–यहा आ।

गोपाल उसके पास सरक गया।

मीनल ने उसके कधे पकड़ कर अपने ध
आज तक की अतृप्त क्षुब्ध लालसाए, उस एक
पल के लिए, सिर्फ इस एक अल्प–विराम के लि
भूल गयी। इस एक पल के लिए वह कोई भी
इस गोपाल को छाती से लगा लेने की इच्छा,
हुई है। लेकिन मारे सकोच के, कि कोई देख
की बात मन में ही थी। लेकिन आज वधा

गोपाल कह रहा था —मीनल, विधास
अभाग्य के नाम पर इस तरह जिन्दगी भर त
हमारे मास्टर साहब कहने लगे —विधवा–विव
हो। लेकिन विधवा से ब्याह करेगा कौन ?
होते, तो हम ब्याह कर सकते थे न ?

कुछ, सरे आम कर बताया। कल तक जो नाराज थे, अब वे सब ऐसा चेहरा बनाते हैं, कि मानों किसी को कुछ याद ही नही रहा। कोई कुछ नहीं कहता।

–कहता क्यों नही ?

–पैसा बड़ा बली होता है गोपाल। लक्ष्मी के आगे नारायण की भी नहीं चलती। उससे वे भी बहुत भय खाते है।

–अच्छा माधवकाका, आपके पास कितने पैसे है ?

–बहुत है। इतने सारे। लेकिन तेरे माधवकाका किसी विधवा से व्याह करने वाले नही।

गोपाल को हंसी आ गयी।

मीनल बारह वर्ष की उम्र में व्याह करके ससुराल आई थी। और ६ महीने बीतते–न–बीतते हथेली से सिन्दूर पोंछ कर, सिर नीचा किये, वापस अपने पीहर चली गयी। माता–पिता विहीन भाई–भौजाइयो के बीच अनादृत, तिरस्कृत रह कर, उसने कुछ समय गुजारा। इसके बाद वृद्ध सास ने रो–धो कर बहू को अपने पास बुलवा लिया। तब से वह अपनी सास के पास ही रहती है। पीहर मे दो भाई हैं, जिन्हें अपनी पत्नियों से ही फुर्सत नहीं। बहिन के अभाग्य से वे दुखी न हों, यह बात नही––लेकिन उनकी अपनी मजबूरी––कर कुछ भी नहीं सकते। रुपये पैसे से मदद की जा सकती है, लेकिन वह भी इतना है नहीं––कि घर खर्च चलाने के बाद कुछ उसे भी भेजा जा सके। इसलिए जो सबका भार बिना किसी हिचकिचाहट के सदर्प संभाल लेता है, उसी जगदीश्वर के सिपुर्द मीनल को करके, उन्होंने सुदीर्घ सतोष की सांस ले ली।

चारों ओर छाये हुए इस सूचीभेद अन्धकार मे वैराग्य का संकल्प लेकर मीनल ने सारा जीवन बिताने की बात अनेक बार सोची है। पर अभी तक सिद्धि प्राप्त नहीं हुई। हसती–खेलती सृष्टि चारो ओर अपनी गति मे घूमती ही रही। फलतः सब कुछ देख कर, आख मूंद कर 'नही, नहीं' रटने का अभ्यास करते–करते उसने पिछले चार साल बिता दिये। मगर तृप्ति नहीं हुई। इसलिए इस 'नहीं; नहीं,' के प्रति उसे भी शंका हुई है। पति को उसने अच्छी तरह से देखा नहीं। इसलिए उनका सुमरिन करने के लिए, रास्ते चलते हर नवयुवक के प्रति उसकी नजर उठ जाती। फिर मन ही मन 'छि, छि,' करके वह आखे बन्द कर लेती।

–कैसे ? अभाग्य हो तो फिर सुख कैसे मिले ?

–दूसरा व्याह करने पर सुख मिल सकता है न ?

–कौन जाने, मिले, कौन जाने न मिले ? हमारे हिन्दू धर्म मे यह सव वर्जित है। भारतीय-स्त्री मरते मर जायगी, लेकिन जिस पुरुष का उसने एक वार वरण कर लिया, उसके अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष की वात वह सोच भी नहीं सकती।

–आदमी सोचता तो वहुत रहता है। ऐसी वात भी सोचने लगे तो ?

–तव वड़ा भारी पाप लगता है।

–पाप तो लग ही जाता होगा। फिर व्याह क्यों नहीं होता ?

–मुझसे यह सव वहस मत किया कर, गोपाल। नहीं होता, वस नहीं होता। ऐसा ही नियम है।

–वहस की वात नहीं, माधवकाका, फिर कोई छिप कर व्याह कर ले तो ?

–तो फिर मै क्या करू ? छोटी उम्र की विधवाओं मे पापाचार तो होता ही है। लड़कियां तो विचारी अपना रंडापा काट भी दें, लेकिन—अच्छा, अव तूं यह समाज-सुधार की वाते वन्द कर। स्कूल में जाकर लेक्चर देना। मेरे सामने नहीं।

–नहीं काका, आपने तो वहुत से देश देखे है, वहुत से नगर देखे हैं, वताओ न, दूसरी जातियों मे विधवाओं के व्याह होते हैं कि नहीं ? फिर उनका धर्म नहीं रहता ?

–अव तुझे उनके धर्म की फिकर हो गयी ! अच्छा, तो सुन, धर्म उनका रह जाता है। लेकिन उनका खुद का धर्म रह जाता है। हमारा नही। हम सव के धर्म अलग-अलग होते हैं न ? इसलिए !

–हमारी जाति मे आज तक किसी विधवा ने व्याह नही किया, माधव-काका ?

–व्याह ? नहीं। नहीं किया। कोई पुरोहित व्याह करवाने को राजी नहीं होता, इसलिए नहीं हुआ। लेकिन कोई किसी के घर में जाकर 'वैठ' जाय, तो पुरोहितजी के मन्त्र-जन्त्र पोथी में धरे रह जाय। लछमनदास ने एक विधवा को घर में डाल लिया। कोई पुरोहित व्याह रचाने नहीं गया। फिर भी वाल-वच्चे हुए। वीस साल हो गये। सव कुछ कुशल-मगल है। हिम्मत थी पट्ठे मे। सव

कुछ, सरे आम कर बताया। कल तक जो नाराज थे, अब वे सब ऐसा चेहरा बनाते हैं, कि मानों किसी को कुछ याद ही नही रहा। कोई कुछ नहीं कहता।

–कहता क्यों नहीं ?

–पैसा बडा बली होता है गोपाल। लक्ष्मी के आगे नारायण की भी नहीं चलती। उससे वे भी बहुत भय खाते है।

–अच्छा माधवकाका, आपके पास कितने पैसे है ?

–बहुत है। इतने सारे। लेकिन तेरे माधवकाका किसी विधवा से ब्याह करने वाले नहीं।

गोपाल को हंसी आ गयी।

मीनल बारह वर्ष की उम्र में ब्याह करके ससुराल आई थी। और ६ महीने बीतते–न–बीतते हथेली से सिन्दूर पोंछ कर, सिर नीचा किये, वापस अपने पीहर चली गयी। माता–पिता विहीन भाई–भौजाइयों के बीच अनादृत, तिरस्कृत रह कर, उसने कुछ समय गुजारा। इसके बाद वृद्ध सास ने रो–धो कर बहू को अपने पास बुलवा लिया। तब से वह अपनी सास के पास ही रहती है। पीहर में दो भाई हैं, जिन्हें अपनी पत्नियो से ही फुर्सत नहीं। बहिन के अभाग्य से वे दुखी न हों, यह बात नहीं––लेकिन उनकी अपनी मजबूरी––कर कुछ भी नहीं सकते। रुपये पैसे से मदद की जा सकती है, लेकिन वह भी इतना है नहीं––कि घर खर्च चलाने के बाद कुछ उसे भी भेजा जा सके। इसलिए जो सबका भार बिना किसी हिचकिचाहट के सहर्ष संभाल लेता है, उसी जगदीश्वर के सिपुर्द मीनल को करके, उन्होंने सुदीर्घ संतोष की साम ले ली।

चारों ओर छाये हुए इस सूचीभेद अन्धकार मे वैराग्य का संकल्प लेकर मीनल ने सारा जीवन बिताने की बात अनेक बार सोची है। पर अभी तक सिद्धि प्राप्त नहीं हुई। हंसती–खेलती सृष्टि चारो ओर अपनी गति से घूमती ही रही। फलत. सब कुछ देख कर, आख मूंद कर 'नहीं, नहीं' कहने का अभ्याम करते–करते उसने पिछले चार साल बिता दिये। मगर तृप्ति नही हुई। इसलिए इस 'नहीं; नहीं,' के प्रति उसे भी शंका हुई है। पति को उसने अच्छी तरह से देखा नहीं। इसलिए उनका सुमरिन करने के लिए, रास्ते चलते हर नवयुवक के प्रति उसकी नजर उठ जाती। फिर मन ही मन 'छि, छि,' करके वह आखें बन्द कर लेती।

इस मानसिक पाप के लिये खुद को कोसती, दुखित होती। भगवान से क्षमा-याचना करती।

आज इस गोपाल के प्रति पति, पुत्र और परिवार की तमाम सज्ञाए केंद्रित होकर उसके हृदयाचल मे अमृत-रस वरसा गयीं।

साथ ही नगाड़े की चोट की भाति धम्-धम् की आवाज करता हुआ एक प्रचण्ड तीखा स्वर उसे बारम्बार सुनाई दे जाता -- यह सब कितना क्षणिक है, कितना अस्थायी ? कितना मिथ्या ! साथ ही कितना विशाल, कितना दीर्घ और कितना मधुर !

अवसर मिलने पर मीनल ने गोपाल को फिर छाती से लगा कर, फुसफुसा कर कहा -- मै क्या करूं गोपाल ?

मीनल की इस व्याकुल वाणी का पूरी तरह से अर्थ शायद गोपाल समझ नहीं पाया। उसने भी प्रश्न दुहरा दिया -- मै क्या करू मीनल ?

फिर कुछ देर वाद वोला --काकी आ जायगी, फिर मै अपने घर चला जाऊगा। तू मुझे वहा रोटी वना देगी मीनल ?

—वना दूगी।' मीनल ने हां भर दी।

यह 'हां' कितनी कठिन है, इसे गोपाल समझे या न समझे, मीनल खूब अच्छी तरह से जानती है। एक विकराल प्रश्न सामने आकर उपस्थित हो जाता है लोग क्या कहेंगे ?

नौकर-मालिक का यह सम्बन्ध लोगों की दृष्टि में कब तक निरापद रहेगा ? राधामाधव की ओट होते ही उसे कितनी बड़ी आंधी का सामना नही करना होगा ? लोगों की क्रूरता को सम्भवत वह तो वर्दाश्त भी कर ले। क्योंकि इससे अधिक कोई उसके लिए कुछ कर भी नहीं सकता। लेकिन यह मासूम गोपाल ? यह उसके पीछे वर्वाद हो जायगा।

इस स्नेह-कोष को वह अपने लिए नष्ट कैसे कर दे ?

मीनल ने कहा — गोपाल, तू पढने मे मन लगाया कर। मेरी वात मत सोचा कर।

गोपाल ने जवाव नहीं दिया।

सन्ध्या हो रही थी। राधामाधव आ गये ! कहने लगे — वड़ी जोर से भूख लगी है वाई ! जो कुछ बना सकती है, जल्दी से वना दे।

हाथ-मुंह धोने के लिए जाते वख्त, राधामाधव ने किसी के आगमन का सकेत पाकर, दरवाजा खोल दिया।

तार लेकर डाकिया आया था। राधामाधव ने उस लाल रग के लिफाफे को खोल दिया। भाषा के माध्यम से तो अंग्रेजी में लिखा हुआ सदेश वे समझ नहीं पाये। लेकिन किसी अत्यन्त शुभ समाचार की आशा मे उनका हृदय उछलने लगा। गोपाल को पुकारा — ओ रे गोपाल! आ तो भइया। देख तो, इस तार में क्या लिखा है?

गोपाल ने अपनी समस्त अंग्रेजी-विद्या का उपयोग करके, जो साराश प्रस्तुत किया, वह यह था, कि राधामाधव एक नवजात शिशु के पिता हो गये। पारो काकी की तबीयत बिल्कुल भली-चंगी है।

मीनल ने रसोई में से कहा·— मामा, बधाई!

राधामाधव इस चिर-प्रतीक्षित समाचार से बेहद प्रसन्न थे। कुछ-कुछ शर्माते हुए बोले·— बधाई तो तुम्हें ही है बाई।

–माधवकाका' गोपाल ने कहा.— 'बातों की बधाई, बस? दोगे कुछ नहीं?'

–क्या दूं, बोल?

–मुझे नहीं, मीनल को!

–अच्छा बाई बता, तुझे क्या दूं?

–मैं बताऊं माधवकाका? मीनल को दो नवलखा हार!

–सो तो इस गरीब के पास है नहीं। लेकिन एक छोटा-सा हार जरूर है। ले बाई, अभी लाये देता हूं।

अन्दर जाकर, सन्दूक में से वे सोने का एक छोटा-सा हार निकाल लाये। मीनल इतनी बड़ी बधाई पाने की बात सोच भी नहीं सकती। इसलिए सकोच महसूस करने लगी। राधामाधव ने इतना ही कहा·—ले ले, राजी मन से दे रहा हूं। खुश होकर ले ले।

गोपाल ने प्रसन्न होकर कहा·—हा ले ले।

राधामाधव ने मीनल के पास हार रख दिया।

गोपाल से पूछा —अब तुझे क्या दूं? तेरा तो सारा घर ही है।

गोपाल से एकाएक जवाव देते नहीं वना। थोड़ी देर तक तो वह यही सोचता रहा, कि अपनी इच्छा राधामाधव से कहे कैसे? इत स्तत करके वोला —वचन दो।

–दिया। वोल?

–पारो काकी आ जाये, तो मीनल को नौकरी से मत निकालना।

–तथास्तु। मालिक तो तू है। मत निकालना।

–काकी को मालूम हो जायगा, कि मै आपके हाथ की खा लेता हू, तो फिर वे खुद ही बनाने लगेंगी। फिर इसे निकाल देना पड़ेगा न?

–ना रे ना। अव उसे रसोई वनाने थोड़े ही दूगा? यह काम तो मीनल को ही करना पड़ेगा। हां, मीनल तू इस सेठ को राजी रखना। नौकरी निभ जायगी।

मीनल की छाती धक्–धक् कर रही थी। पता नहीं, गोपाल क्या कह जाय? लेकिन विशेष वात नहीं हुई। उसने सतोष की सांस ली।

पता नहीं क्यों, मीनल को विश्वास-सा था, कि राधामाधव की बहू के आ जाने पर, उसे निश्चय ही नौकरी से निकाल दिया जायगा। डर था, कि पारो की निगाहों से गोपाल के प्रति उसका आकर्षण छिपा नहीं रहेगा। फिर यह क्षुद्र विलास पानी के वुलवुले की भाति पलक झपकते–झपकते बिला जायगा। रसोई के छोटे–मोटे कामों में व्यस्त, मीनल सोच रही थी —गोपाल खुद चाहे, तो मुझे इसी तरह दासी वनाये रख सकता है। लेकिन इसी घर में, वाहर नहीं। उसके साथ अकेले तो रहा नहीं जा सकता। लोग क्या कहेंगे?

दोनों थाली पसार कर वैठ गये। वह परोसने लगी।

दूसरे दिन जव घर में कोई नहीं था, मीनल ने खूब मल–मल कर स्नान की। तेल लगाया। वाल सवारे। टीकी लगाई। धुली हुई स्वच्छ सफेद साड़ी पहनी। गले मे सोने का हार पहना।

उस कान्तिमान श्रृगार–सम्पन्न युवति ने गोपाल से पूछा —मै कैसी लगती हू, गोपाल?

गोपाल चकित, मुग्ध–नेत्रों से उसकी ओर देखता रहा। बोला —वहुत अच्छी।

पन्द्रह :

पुत्र-जन्मोत्सव की खुशी में फिर भैरूंजी की पूजा हुई। पंचमुखे हनुमानजी को हार्दिक धन्यवाद दिया गया। उनकी जयजयकार मनाई गयी। नागणियों जी के प्रति कृतज्ञता प्रकट हुई। राधामाधव की ओर से रोज एक चिट्ठी सुजानदेसर रवाना हो जाती। सारे पत्रों में यही लिखा होता—अब तबीयत ठीक होगी। इस ओर पूरा ध्यान रखना। मुन्ना अच्छा होगा। किसी बातकी तकलीफ मत उठाना। चिन्ता मत करना। यहां सब खूब मजे में हैं।'

एक बार फिर तांगा मंगवाया गया। आसपास के मंदिरों की यात्राएं हुईं। इन धार्मिक विधि-विधानों में मीनल को तो साथ ले जाया नहीं जा सकता। वह बैठी रही घर में। गोपाल और राधामाधव 'जात्राएं' कर आये। रास्ते में गोपाल यही सोचता रहा :—पारो काकी होतीं, तो साथ जरूर चलती। लेकिन मीनल है विधवा। वह साथ नहीं चल सकती। विधवा को घर से बाहर निकलना भी मना है।

प्रसाद की मिठाई देते हुए गोपाल अत्यधिक उत्साह से कहने लगा.—मीनल, रोज तो तू हमें जबर्दस्ती खिला देती है। आज ये तमाम रसगुल्ले नहीं खाये, तो नौकरी से निकाल दूंगा। हां। मैं मालिक हूं! क्यों माधवकाका?

–मैं मिठाई नहीं खाती, गोपाल।

–क्यों?

–विधवा मिठाई नहीं खाती न?

–अरे, तुझे विधवा कौन कहता है? तू विधवा है ही नहीं। बता तो, तूने कभी अपने पति को देखा था? खाली फेरे खा लेने पर ही ब्याह थोड़े ही हो जाता है। किताबों में लिखा है—

राधामाधव पास ही खड़े थे। उन्होंने सुन लिया। बोले.— तू तो अमर सुहागिन हो गयी, बाई। तेरा सुहाग अब जीने मरने के बन्धनों से मुक्त हो गया।

यह बात मीनल ने अनेक बार अनेक लोगों के मुह से सुनी है। विधवा के अनुकुल, उसके दुख के उपयुक्त, गौरवपूर्ण सहानुभूति के लिए प्रचलित यह सूक्ति युग-युग से इसी तरह कही जाती रही है। इसी तरह सुनी जाती रही है। लेकिन इस बात का मर्म स्त्री होकर, बाल-विधवा हुए बिना समझा नहीं जा सकता कि यह कितना बड़ा धोखा, कितना मर्मान्तक उत्पीड़क सिद्धान्त-सूत्र है। जिस 'अमर सुहाग' के प्रति भारत की किसी भी स्त्री का कोई आकर्षण नहीं, उस की जयगाथा गाते जब किसी को आज तक शर्म महसूस नहीं हुई, तो राधामाधव को भी अपराधी घोषित नहीं किया जा सकता।

थोड़ी देर बाद, माधवकाका की ओट होते ही गोपाल ने अपने हाथ से एक रसगुल्ला मीनल के मुह में जबर्दस्ती रख ही दिया। वह मना करती रही। लेकिन गोपाल ने उसकी कोई बात नहीं सुनी। विधवा होने के बाद उसने सम्भवत मिठाई आज पहली ही बार खाई थी। इसलिए स्वाद की भिन्नता से उसका परिचय विशेष न भी हो, लेकिन जिसने खिलाई थी, जिसने आग्रह किया था--जिसने अपने हाथ से दी थी—उससे उस खाद्य पदार्थ का मूल्य बहुत बढ़ गया था। जब तक मनुष्य जिन्दा रहेगा तब तक इस अनुभूति से परे वह हो नहीं सकता।

इन्हीं दिनों शिवबाड़ी के मेले का आयोजन हो गया। सारा शहर शिवबाड़ी के शिव-मन्दिर की ओर उलटा पड़ता था। तांगे, घोड़े, इक्के, बैलगाड़ियां, ऊंट, साइकिल-आदि, में से जिसे जो साधन मिल सका, वह उसी को लेकर इस परम तीर्थ की ओर रवाना हो गया। बैलगाड़ियों में औरतें सज-धज कर बैठीं, गीत गा रही हैं। गीत अत्यन्त सरस हैं। यदि इन्हें अश्लील कह कर वर्जित कर दिया जाय, तो इस मेले की महिमा ही कम हो जाय। इसलिए इन गीतों की मधुरता 'सरसता' विशेषण से, आशा है, पर्याप्त मात्रा में स्पष्ट हो जायगी।

इन गाड़ियों के आसपास चले जा रहे युवक समुदाय की शोभा चिरस्मरणीय है। कुछ ग्रथों में राजा रामचन्द्रजी की बारात का उल्लेख है। लगभग उसी का मूर्तिमान चित्र समझ लीजिये। यह इसलिए, कि उन प्राचीन ग्रथों के लेखक महोदय राजा रामचन्द्र की बरात में मौजूद नहीं थे। उन्होंने कल्पना का

सहारा ही लिया था। कल्पना की मूल-प्रेरणा उन्हें संभवतः इसी तरह के किसी मेले से मिली हो। जो हो, उन्हें फिर एक वार अति विस्तार से यहा लिख देने पर कोई विशेष लाभ नहीं होगा।

इसलिए साराश में इतना ही—कि अति धूमधाम है। वैलगाड़ियों मे वैठी स्त्रिया, उन पर फेंके जाने वाले निंबुओं को एकत्रित कर रहीं है, जो कि ताक कर, विशेष लक्ष्य की ओर ही फेंके जाते है। पता नहीं, इस विद्या-कौशल को सीखने का अभ्यास इन लोगों ने कितने दिनों मे किया होगा। अस्तु। चारों ओर मेले के अनुकूल उमग है, उत्साह है, शोरगुल है, भीड़-भड़क्का है। मौज मस्ती है।

गोपाल अपनी साइकिल लेकर, अकेला ही इन मेले मे चला आया था। लोगों की चहल-पहल, किलोल-क्रीड़ा, सुरीले स्वर मे गाये जाने वाले गीतों की सरसता देख-सुन लेने पर उसे लगा कि जैसे दुख नाम की कोई चीज, मानों कहीं रह ही नहीं गयी हो।

दिन भर लोगों के नाना-प्रकार के रूपों को देखता हुआ, वह शिववाड़ी मे इधर से उधर चक्कर लगाता रहा। माधवकाका ने जो पैसे दिये थे, उसने वे सव खर्च कर डाले। अन्त मे थक कर, वह तालाव के किनारे जाकर वैठ गया। साइकिल पेड़ के सहारे खड़ी कर दी। थोड़ी देर तक तालाव मे वड़ी ऊचाई से कूदने वाले पराक्रमी नर-वीरों को निहारता रहा, इसके वाद अन्यमनस्क-सा होकर एक ओर देखता हुआ, चुपचाप मीनल की वात सोचते-सोचते खो-सा गया।

यद्यपि सारे मेले मे गोपाल अकेला ही घूमता रहा है, फिर भी आज का दिन उसने वड़ी प्रसन्नता से विताया। नये कपड़े पहने, नई साइकिल पर सवार, अपने ऐश्वर्य पर मुग्ध, इतनी भीड़ मे मस्त होकर वह दिन भर घूमता रहा है। अव वह थक गया था। इसलिए वापस लौटने के लिए उठ खड़ा हुआ। एक वार उसने फिर आत्म-गौरव सहित अपनी साइकिल की ओर देखा।

माधवकाका की दूकान पर यह साइकिल अभी-अभी ही आई है। इसलिए इस का सम्मान भी खूब है। दो-दो घंटिया हैं। कैरियल है, चेन-कवर है, इधर-उधर पीछे देखने का काच लगा हुआ है। पैसे खर्च करके साइकिल के पहियों में उसने फुग्गे डाल रखे है। फुग्गों से साइकिल के पहियों की ताड़ियों

के टकराने पर एक विचित्र किस्म की आवाज निकलती है। सारे लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो जाता है। वह एक हाथ छोड़ कर, यहां तक कि दोनों हाथ छोड़कर, उपस्थित तमाम लोगों के सामने दर्प सहित साइकिल पर घूमता रहा है। साइकिल को बड़े प्यार से उठाकर वह चलने को तैयार हुआ। जिस प्रकार कोई अश्व अपने घोड़े का जतन करता है, उसी तरह गोपाल भी अपनी साइकिल की पीठ सहला रहा था। इधर-उधर भरी हुई धूल झाड़ पोंछ कर उसने साफ कर दी।

इसी समय उसने देखा कि साइकिल के पिछले पहिये के पास एक नवीन मशीन लगी हुई है। यह क्या है?'—इस सहज कुतूहल के वशीभूत होकर उसने उक्त यंत्र को उलट-पलट कर देखा। उसकी इस जिज्ञासा का नतीजा यह हुआ, कि उस यंत्र में से 'खट्' की आवाज निकली, और उसमें से लोहे की एक पतली-सी डंडी निकल कर, दूसरी ओर जम कर बैठ गयी। साइकिल का यह ओटोमेटिक-लाक बीकानेर में राधामाधव की इसी साइकिल में पहली बार लगा था। जानकारी के अभाव में, व्यर्थ के कौतूहल में यह ताला बन्द हो गया था।

गोपाल इस अचिन्त्य दुर्घटना से स्तब्ध-सा हो गया। दिन भर में उसने जेब के तमाम पैसे खर्च कर दिये थे। बन्द ताले की साइकिल लादे-लादे वह घर कैसे जायेगा—इस चिन्ताजनक समस्या का उसे कोई समाधान नहीं मिला। बिना ताला खोले तो साइकिल को एक कदम भी चलाया नहीं जा सकता। सर पर लाद कर, पाच मील का सफर तय करना, किसी महाबली के लिए भी चिन्तनीय प्रश्न होता, फिर गोपाल की सामर्थ्य तो अत्यन्त सक्षिप्त है।

साइकिल का ताला खोलने के लिए वह किसके पास मदद लेने के लिए जाय? यह बन्द कैसे हुआ—इसका क्या जबाव दे? वह पास ही खड़ा-खड़ा यही सोच रहा था। दुखी हुआ, लज्जित भी हुआ—कि उसने बिना जाने इस ताले को छूआ ही क्यों? अथवा साइकिल लाते वक्त इस ताले की चाबी लेकर क्यों नहीं आया?

शाम हो रही थी। लोग मेले से लौटने की तैयारिया कर रहे थे।

गोपाल साइकिल का ताला तोड़ने के प्रयास में व्यस्त, सोच रहा था—सारी रात यदि उसे यहां इसे ठीक करते हुए बैठे रहना पड़ा तो?

पास ही कुछ स्त्रियों का दल भोजन कर रहा था। गोपाल डरता-डरता उनके पास चला गया। नम्रता से पूछा—आपके पास चाविया है? मेरी साइकिल का ताला वन्द हो गया है। देखूं, यदि आपकी किसी चावी से खुल जाय तो। रात हो रही है। घर पहुंचना है।

उपस्थित सारी महिलाओं का ध्यान गोपाल की ओर आकर्षित हो गया। एक प्रौढ स्त्री ने अपनी चावियों का वड़ा-सा गुच्छा उसे देते हुए कहा—देख तो भइया, इससे खुल जाय तो!

गोपाल चावियों के गुच्छे के साथ उस 'ओटोमेटिक लाक' को खोलने की कोशिश करने लगा। लेकिन सहज ही उसे मालूम हो गया, कि घर गृहस्थी में ये ताले प्रचुर मात्रा में प्रचार नहीं पा सके हैं—इसलिए ये तमाम चाविया वेकार हैं। साइकिल का यह ताला खोलने के लिए उपयुक्त चावी की व्यवस्था करना असम्भव है। चाविया लौटाते हुए उसने कहा—नहीं खुलता!

इतना कहते-कहते उसकी आखों मे विवशता के मारे आसू छलछला आये। सुना है, हिरन जव अपनी तमाम कोशिशों के वावजूद भी देख लेता है कि अव शेर से वचाव का कोई उपाय नहीं रहा, तो वह आखें मूंद कर खड़ा हो जाता है—जैसे मन ही मन कह रहा हो—आओ भाई, तुम मुझे खा डालो। मै कोई आपत्ति नहीं करूंगा।—कुछ इसी किस्म की दशा गोपाल की थी।

एक स्त्री को गोपाल पर दया आई। पूछाः—वन्द कैसे हो गया रे?

-पता नहीं। वन्द हो गया।

-अव तो यह चलेगी ही नहीं। घर कैसे जायेगा?

गोपाल मुड़कर साइकिल की ओर जाने लगा। उसने जवाव नहीं दिया।

उस स्त्री ने उसे अपने पास वुलाकर पूछा—कहा रहता है रे तू?

उसने पता वता दिया।

फिर पूछा गया—किसका लड़का है?

-भीखमचंदजी का।

तभी किसी ने पूछा—इसी की मा सती हुई थी?

-हा, वही। उसी का लड़का है। तेरा नाम गोपाल है न?

-जी हा।

-तू ने कुछ खाया-पीया कि नहीं?

–खा–पी तो लिया ।

–अच्छा साइकिल इस बैलगाड़ी मे रख दे । तू भी गाड़ी मे बैठ जाना । घर पहुचा दूगी ।

इतनी बड़ी समस्या का इतना सुगम निदान निकल आते देख कर, गोपाल सचमुच भगवान शिवजी की शक्ति के प्रति विनम्र होकर भक्ति से सारोबार हो गया । जय भोले–बाबा, तूने आज लाज रख ली ।

बैलगाड़ी चलने के लिए तैयार हो गयी । सारी औरतें किसी तरह उसमे समा गयीं । कुछ बच्चे सो गये थे, लिहाजा उनके लिए भी जगह निकालनी पड़ी । लज्जा और सकोच से गड़ा हुआ-सा गोपाल उस प्रौढ–स्त्री की गोद में बैठ गया ।

यह हैं बसीलालजी की बहू । पहली ही दृष्टि मे गोपाल उन्हें बेहद पसन्द आ गया । किसी विशेष योजना की सफलता की आशा में उन्होंने बैठे–बिठाये अनेक सवाल पूछ डाले ।

–क्यों गोपाल, तू अभी तक पढता है न ?

–हा ।

–कौनसी क्लास में है ?

–नवीं क्लास में । फर्स्ट–क्लास पास हुआ हू ।

–राधामाधव के यहा बच्चा होने वाला था न ? क्या हुआ ?

–लड़का हुआ है ।

–वे तो तुझे बहुत ही प्यार करते हैं न ? सगे काका से भी ज्यादा ?

–हा ।

थोड़ी देर में ही ये 'हा–हू'के प्रश्नोत्तर घनिष्ठता मे परिणीत हो गये । पूरे लाड़–जतन के साथ गोपाल घर तक पहुचा दिया गया । जाते वख्त बहुत 'ना–ना' करने पर भी उसके हाथ में 'मेले का रुपया' बसीलालजी की बहू ने रख ही दिया ।

मीनल ने पूछा —गोपाल, मेले से मेरे लिए क्या लाया ?

–कुछ भी नहीं । वहां मिलते हैं—बच्चों के खिलौने, फुग्गे और इसी तरह की चीजें । इन सबका तू क्या करती ?

–और मेले में क्या होता है, गोपाल ?

अरे, तो इसने कभी मेला देखा ही नहीं ? गोपाल आसन जमा कर बैठ गया। विस्तार सहित मेले का वर्णन करने लगा। किस तरह लोग सज-धज कर वहा जा रहे थे। कितनी भीड़ थी। कैसी धूमधाम थी। कितने प्रकार के वाहन आये। महाराजा के आते ही लोगों ने किस तरह नारे लगाये। बैलगाड़ियों मे बैठी औरतें कैसे गीत गा रही थीं। कितनी ऊंचाई से लोग तालाब मे कूद रहे थे। भगवान शकर की पूजा कितने जोरशोर से हुई। आदि।

मीनल तन्मय होकर सुनती रही।

गोपाल ने पूछा.—मीनल, यदि किसी गाड़ी मे घूंघट निकाल कर, तूं भी बैठ जाती, तो किसी को क्या पता चलता ?

–ऐसा कहीं होता है ? मुझे मेले से क्या लेना-देना ?

–मै भी यही सोचता रहा, मुझे मेले से क्या लेना-देना ? तुम तो घर मे इस तरह चुपचाप बैठी रहो और मै वहा इस तरह व्यर्थ भटकता रहूं। अच्छा नहीं किया, तभी तो वहा जाकर कष्ट भुगतना पड़ा।

मीनल ने व्याकुल होकर पूछा — कष्ट क्यों भुगतना पड़ा ?

गोपाल ने साइकिल सम्बन्धी दुर्घटना का पूरा किस्सा सुना दिया।

मीनल कहने लगी.— गोपाल तू साइकिल मत चलाया कर ?

–क्यो ?

–गिर जाय तो ?

–गिर क्यों जाऊं ? साइकिल चलाना आता है मुझे। चाहूं तो दोनों हाथ छोड़ कर चला सकता हूं। हा।

इसी समय राधामाधव आ गये। आते ही पूछा — गोपाल, तूं बिलकुल गधा है। तालेवाली साइकिल ले गया था तो उसकी चाबी भी ले जानी थी। बता तो, फिर यहां तक आया कैसे ?

गोपाल ने सारी दास्तान सुना दी। बंसीलालजी की बहू का नाम सुन कर अत्यन्त प्रसन्न भाव से वे कहने लगे·— भगवान जो कुछ करता है, ठीक ही करता है। बंसीलालजी कोई आदमी है ? अजी हीरे हैं, हीरे! लोग कहते हैं श्रापभ्रष्ट दिग्पाल हैं। इतना रुपया-पैसा है, इतनी कीर्ति है! सब कुछ तो है। बस लड़का नहीं है। एक लड़की ही है। हा मीनल, देखता हूं चारों ओर से शुभ समाचार ही आ रहे हैं। भगवान बड़ा दयावन्त है। बंसीलालजी की लड़की बड़ी

हो रही है कि नहीं ? बारहवां पार करके तेरहवें में पैर रख रही है। मैंने तो उसे अपनी गोद में खिलाया है। लड़की क्या है—बिल्कुल गुड़िया। इतनी-सी थी। अब तो बड़ी हो गयी होगी। कहते हैं, तीसरी में पढ़ती भी है! अच्छा गोपाल, तूने उस गुड़िया को देखा कि नहीं ?

राधामाधव के इस वक्तव्य से गोपाल चिन्तित हो उठा। अरे, तो इस परिचय, इस कृपा, इस स्नेह का मूल-कारण यह था।

मन ही मन उसने निश्चय किया था, कि सारे समाज से महाभारत करके एक दिन वह विधवा-विवाह करके, समाज के सामने एक आदर्श की प्रतिष्ठा कर देगा। मन के किसी अन्तर्भाग में मीनल के दुर्भाग्य को समाप्त करने की कामना भी थी। इस बात को सुनते ही उसका वह सुनहला स्वप्न जैसे तिरोहित हो गया। उसके सबल विद्रोही जीवन के प्रारमिक काल पर, हीरे की जाति के, श्रापभ्रष्ट दिग्पाल, बसीलालजी द्वारा यह गदा-प्रहार! उनसे बचने का, निस्तार पाने का कोई उपाय ही नहीं।

गोपाल को चुप देख कर, राधामाधव हंसते हुए कहने लगे — देखा, कैसे शर्मा रहा है!

गोपाल ने धीरे से कहा — मुझे ब्याह नहीं करना है, माधवकाका।

—मत करना। मैं कर दूंगा।

—यह भी यज्ञोपवित की तरह जरूरी है, माधवकाका ? इससे बचने का कोई उपाय नहीं ?

—तो तू इतना घबरा क्यों रहा है ? बसीलालजी की बेटी इतनी झगड़ालू थोड़े ही है।

—मैं ब्याह नहीं करूंगा! छोटी उम्र में ब्याह नहीं करना चाहिए—देश के तमाम नेता, अग्रज यही तो कहते हैं।

—तो कहने दे। वे अपने बाल-बच्चों का बिना ब्याह किये ही चले जाय। मैं तो उनमें हू नहीं।

मीनल चुपचाप काके-भतीजे की बातचीत सुनती रही।

जिस दिन माधवकाका के साथ बसीलालजी के यहा भोजन करने जाना अनिवार्य हो गया, उस दिन गोपाल ने मीनल से कहा —मै कोई स्त्री हू मीनल, कि जिसके साथ चाहा, बाध कर ब्याह कर दिया। देख लेना, मैं अपनी मर्जी के बिना ब्याह ही नहीं करूंगा।

–क्यों ?

–मैं करूंगा समाज का सुधार। मैं विधवा से व्याह करूंगा।

–किसके साथ ?

गोपाल एक मिनट तक सोचता रहा। अभी तक व्याह के लिए उसने किसी योग्य पात्री का निश्चित निर्णय नहीं किया था। लेकिन इसी एक पल में उसने फैसला कर लिया, कि आगे चल कर समाज के प्रति विद्रोह व्यक्त करने के लिए किस लड़की का व्यूह बनाना चाहिए। बोला —तेरे साथ !

–लेकिन मैं तो राजी नहीं।

–तुम जरूर राजी हो। समाज के बन्धनों से डरती हो ? है न यही बात ?

पुस्तकों में पढ़ी, समाज की इस क्रांतिवादी रूपरेखाओं के विषय में गोपाल सम्भवतः बहुत अधिक नहीं जानता। लेकिन अपनी अल्प-आयु और बुद्धि के अनुसार देश के महाप्राण नेताओं की बातों को जिस रूप में उसने अंगीकार किया था, उसी की प्रतिक्रिया स्वरूप वह सुदृढ स्वर में वे तमाम दलीलें दुहरा गया।

मीनल गोपाल का मुंह ताकती रही। उसका इस तरह से बोलते रहना, उसे बहुत भला लगता है !

•

बंसीलालजी के घर जाकर, भोजन के उपरान्त जब राधामाधव घर की औरतों के साथ वाणी-विलास में व्यस्त थे, तो गोपाल अपने भावी श्वसुर के साथ उनके कमरे में चला गया। एकान्त देखकर उसने नम्रता से कहा.— आप मेरा व्याह करना चाहते हैं ?

बंसीलालजी इस प्रश्न से आश्चर्य-चकित हो गये। गोपाल की ओर देखते रहे। बोले नहीं।

–आप तो जानते ही हैं।' गोपाल ने कहा — मेरे पिता पागल थे।

–हां, हां जानता क्यों नहीं ? जानता हूं। मुझे सब मालूम है।

–पागल आदमी का बेटा पागल भी हो सकता है ?

–यह तुमसे किसने कहा ? नहीं भी होते।

–जरूर होते हैं।

–होते होंगे, फिर ?

–इसीलिए हाथ जोड़कर आपसे प्रार्थना करता हू, आप मेरा ब्याह मत कीजिये। अभी मेरी उम्र ही क्या है ? मुझे पढ-लिख लेने दीजिये।

बसीलालजी कुछ देर तक चिन्तामग्न बैठे रहे। इसके बाद सिर उठा कर गोपाल की ओर देख कर बोलेः— तुम्हारी मर्जी ब्याह करने की नहीं है ?

–नहीं !

–यही तुम्हारा निश्चय है ?

–हां, यही। लेकिन आपके सामने जिद् नहीं कर सकता। आप चाहे, तो मेरी बात निबाह सकते हैं। जीवन भर मैं इस एहसान को भूलूगा नहीं।

–अच्छी बात है। ऐसा ही होगा। मैं आशीर्वाद देता हूं कि तुम खूब पढो-लिखो, फलो-फूलो। अभी से तुम में निश्चय करने का बल है। यह बहुत अच्छी बात है। एक बात का ख्याल रखना, कि पागल का बेटा होने पर ही कोई पागल नहीं हो जाता। इसलिए इस बात की चर्चा आगे से और किसी के सामने मत करना। खूब मन लगा कर पढ़ो। एक दिन तुम जरूर बीकानेर का नाम रोशन करोगे !

गोपाल को कुछ हिम्मत महसूस हुई। बोला — बात यह है, कि मैं समाज में सुधार करना चाहता हूं। जिस दिन विवाह करना पड़ा—उस दिन किसी विधवा से ब्याह करूंगा। इस काम के लिए लड़कों को सामने आना ही होगा। तभी देश का उद्धार होगा !

–विधवा से ब्याह करोगे ?

–हा, यही मेरा अटल निश्चय है।

–अपनी जात में ही ?

–हो सका, तो अपनी जात में ही, अन्यथा कहीं और।

–ठीक है। इस तरह की बात वही कह सकता है बेटा, जिसका सवा हाथ का सीना हो। यह भाग्य की ही बात है कि तुम पागल के बेटे कहे जाते हो। लेकिन समझदारों के बेटों में इतनी हिम्मत नहीं होती, यह मुझे मालूम है। मैं आशीस देता हू, कि तुम ऐसा ही कर सको। यदि कभी मेरी मदद की तुम्हें जरूरत हो, तो तुम मेरे पास जब चाहो, तब चले आना। यहा तुम्हारा कोई निरादर नहीं करेगा।

इसी समय राधामाधव ऊपर आ गये। बोले'— वाह, वंसीलालजी, अकेले-अकेले ही ? कहीं इस गरीब को ठग तो नहीं लिया। लोभ बहुत बुरी चीज होती है, रे गोपाल ? झट से मत फंस जाना।

–राधामाधव !' वंसीलालजी ने इस परिहास की ओर ध्यान दिये बिना कहा'— यह लड़का होनहार है। इसकी पढ़ाई-लिखाई का ध्यान रखना। मैं इसे विलायत तक भेजूंगा। यह एक दिन जरूर बीकानेर का नाम रोशन करेगा।

–हो गया वंसीलालजी, यह नाटक अब तो खत्म कर दो। शादी करके एक तो आप विलायत जा आये और एक यह जा आयेगा !

–इसके ब्याह की इस समय कोई जरूरत नहीं।

–वाह, जरूरत कैसे नहीं ? जरूरत है।

–नहीं राधामाधव, यह बात अब यहीं तक रहे।

–राधामाधव चुप हो गये। उन्हें बुरा लगा। थोड़ी देर तक सोचते रहे। इसके बाद उठते हुए बोलेः— अच्छा तो चलता हूं। कोई कोर-कसर, ऐब ?

–नहीं।

–फिर ?

–ऐसे लड़कों का ब्याह करके उनके भविष्य को चौपट करना ठीक नहीं। बस, इतनी-सी बात है। बुरा मत मानना। मैं यह सब इस गोपाल के भले के लिए ही कह रहा हूं।

–बुरा मानने की ही बात है वंसीलालजी। बात आपने ही चलाई थी। आपने ही बुलाया। दस लोगों तक खबर पहुंच गयी है। आपसी दोस्ती में इस तरह अपमानित करने से क्या फायदा ?

गोपाल चुपचाप पास ही बैठा था। राधामाधव का हाथ पकड़ कर बोला.— माधवकाका, पराये होकर भी इन्होंने मेरी बात मान ली। आप नहीं मानेंगे ?

–अच्छी बात है। मान लेता हूं। जब तुम्हारी ही इच्छा नहीं है, तो मेरे लिए कहने की बात ही क्या रह गयी ? ठीक है, चलता हूं। चलो चलें।

आज पहली बार गोपाल के इस व्यवहार से राधामाधव दुखित हो गये।

बात आई-गई हो गयी। गोपाल को विश्वास-सा हो गया, कि शादी-ब्याह की बात अब अधिक नहीं उठा करेगी।

एक दिन मीनल के हाथ की छाप लेकर वह ज्योतिष विद्या मे पारगत मास्टरजी को दिखा लाया।

मास्टरजी ने पूछा — यह किसका हाथ है, रे ?

–मीनल का है'—यह कहते हुए गोपाल को शर्म महसूस हो रही थी। इसलिए झूठ बोल गया —मेरी काकी का है !

–अच्छा।' कह कर खुर्दबीन के जरिये स्याही से पुते हुए उस कागज की रेखाओं को बारीकी से अध्ययन करने में वे डूब–से गये। गोपाल पास ही बैठा रहा।

मास्टरजी बोले —गोपाल, यह हाथ तो अपनी राजकुमारीजी के हाथ से बिलकुल मिलता–जुलता है। हां सच्। देख, यह लाइन ठीक वैसी ही है। यह लाइन भी वैसी ही है। है न ?

गोपाल हां में हां मिलाता रहा।

मास्टरजी कहते रहे —अगले महीने की शुरूआत में राजकुमारीजी का ब्याह होने वाला है। ठीक ऐसी ही कोई खुशी की बात इस हाथ वाले के साथ होनी चाहिए।

मास्टरजी ने और भी बहुत कुछ बताया। पर गोपाल मीनल की इस आगत खुशी की बात से अत्यन्त प्रमुदित होकर धीरज खो बैठा। बोला —अच्छा, मास्टरजी मैं जाता हू।

घर आकर, हांफते हुए उसने मीनल से कहा —तेरा हाथ अपनी राजकुमारी-जी के हाथ से बिलकुल मिलता है मीनल। सच्। मास्टरजी ने कहा है। अपनी राजकुमारीजी का ब्याह हो रहा है—अगले महीने। मास्टरजी कहते थे, ठीक ऐसी ही कोई बहुत बड़ी खुशी की बात इस हाथ वाले के साथ भी होने वाली है।

मीनल स्तब्ध होकर गोपाल की इस अदम्य खुशी को देखती रही। इस भविष्य वाणी से एकबारगी वह डर–सी गयी। अपनी के भागी की इन सेवाओं को बड़े से बड़ा ज्योतिषी भी नहीं जान सकता, यह बात सही है। फिर भी मीनल नीलाकाश में व्याप्त अदृष्ट भविष्य को देखती हुई, चुपचाप बैठी रही।

लोगों को भविष्य के प्रति कितनी उत्सुकता है ? मगर यह मीनल बैठी सोच रही है, कि किसी ऐसे सुनहले भविष्य के अचानक आ उपस्थित होने पर वह उसे अंगीकार कैसे करेगी ?

उस दिन काफी दिन चढ आने पर भी गोपाल सोता रहा। राधामाधव ने उसे उठाते हुए कहा —अरे गोपाल, उठ भाई। देख, कितना दिन निकल आया है।

गोपाल तकिये में मुह छिपा कर कुछ देर और सोने के आग्रह के साथ भुनभुन करता हुआ बोला — आज रविवार है, माधवकाका। सोने दो।

–चल उठ, आज तेरी काकी का घर तुझे दिखा लाऊं। मुन्ने को देख आवें।

–मुझे नींद आ रही है काका। आप जा आईये न ? आते वक्त मुन्ने को ले आना। यहीं देख लूंगा।

–अरे वाह ! बिना बुलाये मै अकेला ससुराल थोड़े ही जा सकता हू ?

गोपाल उठ बैठा। माधवकाका की ओर देखकर मुसकरा कर बोला — अच्छा, फिर मेरे साथ चलने पर न्योता कैसे मिल जायगा ?

–अरे, कह देंगे; तूं जिद् कर रहा था। इसलिए चले आये।

–बिलकुल झूठ। मै कह दूंगा, मैं जिद् करता ही नहीं। कभी नहीं करता।

–इसमें झूठ की कौनसी बात है रे ? यही तो कहने की रीत है।

–अच्छा ? फिर मैं क्या कहूं—यह रीत भी बता दीजिये।

–तूं ? तूं चुपचाप मेरी बात सुनते रहना। मेरी हा में हा मिलाते रहना। भई, अब मेरा मन तो यहा बिलकुल नहीं लगता।

–अच्छी बात है। चलिये। सामान कुछ नहीं लेंगे साथ मे ?

–ऊह। कोई खास सामान नहीं लेना है। ससुराल जा रहे हैं। वे अपने आप इन्तजाम करेंगे। ओ मीनल, जरा हमारे कपडे तो सन्दूक में रख दे। हम दोनों सुजानदेसर जा रहे हैं।

मीनल झाड़ू-बुहारी मे व्यस्त थी। सुनकर, आज्ञानुसार तैयारी में लग गयी।

दैनिक कार्यक्रम मे व्यस्त, माधवकाका जब नजरों की ओट हुए, तो गोपाल ने मीनल से पूछा।—मै जा आऊ मीनल ?

–जा आओ।

–जल्दी ही आ जाऊंगा।

–अच्छा।

–तुझे मेरी बहुत याद आवेगी न ?

–ना ।' मीनल मुसकरा दी ।

–जरूर आयेगी ।

–क्यों ?

–तभी तो तू हसी ।

–जा रे । मामाजी आ रहे हैं ।

जाते समय मीनल को आश्वासन देते हुए गोपाल ने कहा —मैं जल्दी ही आ जाऊगा, मीनल । तू चिन्ता-फिकर मत करना ।

मीनल देख रही थी, अनुराग का यह प्रदर्शन । इसके बाद सब कुछ मौन में विलीन हो जायगा । गोपाल अब बड़ा हो गया है । सब-कुछ समझता है । जानता है, बहुत-सी ऐसी बातें हैं, जो सबके सामने कही नहीं जा सकतीं । लिहाजा, पारो-काकी के आ जाने के बाद सब कुछ खामोश हो जायगा । रह जायगी यही निविड़ नि'स्तब्ध शून्यता । इस गोपाल को दूर ही दूर से देख कर कभी कहीं मन का कोई तार झकृत हो उठेगा । इसके बाद फिर शाति । किसी तरह का शोरगुल नहीं । किसी तरह का कोलाहल नहीं ।

राधामाधव किसी काम से कुछ देर के लिए बाहर गये हुए थे । गोपाल अपने आले में से कुछ रुपये निकाल लाया । मीनल के हाथ में देते हुए बोला —मीनल, ये तेरे पास रख ।

–मैं इनका क्या करूंगी ?

–रुपयों के लिए कोई नाही कहता होगा । जरूरत के वक्त काम आयेंगे । रख ले ।

–नहीं गोपाल । किसी दिन मालूम हो गया, तो लोग कहेंगे मीनल ने चोरी कर ली ।

–कौन कहेगा ? मैं जवाब दूंगा—रुपये मेरे थे । मैंने दिये ।

–लोग पूछेंगे, क्यों दिये ?

–मेरी मर्जी ।

–नहीं गोपाल । यह सब तुझे कहना नहीं होगा । हो सके, तो मुझे यहीं नौकरानी बनाये रहना । इससे अधिक कभी, किसी से कुछ भी मत कहना । मुझे नौकरानी से अधिक कभी कुछ मत समझना ।

–मीनल, तुझे मालूम है, मैं तुझे नौकरानी नहीं समझता ।

–अब समझना ।

–क्यों ?

–नहीं तो मैं जी नहीं सकूंगी, गोपाल ।

–तू रो रही है, मीनल ?

–मेरी आदत ही ऐसी है । जाने–अनजाने आखों में पानी आ जाता है ।

–तूं रो मत, मीनल । तेरे दुख के ये दिन भी अब अधिक नहीं रहेंगे । अगले महीने राजकुमारीजी का ब्याह हो रहा है । मास्टरजी कहते थे, इस हाथ वाले के लिए भी कोई बहुत बड़ी शुभ घटना होने वाली है । भगवान पर भरोसा रख, मीनल । रो मत ।

मीनल ने आसू पोंछ लिये ।

राधामाधव ने दोनों को इस तरह आसपास बैठे देख कर, एकबारगी कुछ संदेह महसूस किया । लेकिन 'भाई–बहिन मे प्रेम नहीं होता क्या ?' इस तर्क से मन को संतुष्ट कर, बोले —अरे मीनल, तू रो क्यों रही है ? हम तो दो ही दिनों मे लौट आयेंगे ।

सोलह :

पारो काकी का पीहर बीकानेर से अधिक दूर नहीं है । सुबह की गाड़ी में बैठने पर दोपहर तक बड़े मजे मे वहां पहुंचा जा सकता है ।

राधामाधव को मालूम था, कि ससुराल वालों मे से किसी से भी उनके आने का उद्देश्य छिपा नहीं रहेगा । व्यंग्य-बाणों से बचने के लिए गोपाल को ढाल बना कर वे अपने साथ ले आये थे । साथ ही मन ही मन सोच रहे थे कि सालियों की बातों का वे क्या जवाब देंगे । पारो क्या कहेगी, तब मुन्ने को चूम कर, वे अन्ततः किस प्रकार स्वीकार कर लेंगे, कि पत्नी की गुलामी से मुक्ति का अब कोई उपाय नहीं रहा ।

ससुराल पहुचते ही दुर्गाजी से साक्षात्कार हो गया। ये मबसे बड़ी साली है। राधामाधव को देखकर, दरवाजे पर दोनों हाथ फैला कर उमने रास्ता रोक लिया। कहा — हम तो सोच रहे थे। तार पहुचते ही आप आ जायगे। बड़ी देर कर दी। कुछ भी हो, पारो ने अच्छी नथ पहनाई।

राधामाधव कुछ शर्मा कर, स्पष्टीकरण देने लगे —क्या कर, गोपाल कहने लगा-चलें ही चलें। सो मैंने भी सोचा, तेरी मर्जी भइया। जा आवे।

–अब ये बहाने बाजी रहने दो। हम कोई नासमझ है?

–यह तो मैंने कहा नहीं। आपकी बुद्धि की बलिहारी है। तभी तो अन्दर घुसने का रास्ता नहीं मिल रहा है। द्वार पर ही स्वागत ग्रहण कर रहा हू।

–अन्दर तो तब जाने दिया जायगा बहनोईजी, जब आप हाथ जोड़ कर कह देंगे कि 'भई, मै खुद ही मुन्ने को देखने चला आया।' यों पराये-लड़के के कारण औरतों के पास नहीं जा सकते।

गोपाल को 'पराया लड़का' सम्बोधन अखर गया। अब तक वह माधवकाका के पास भले लड़के की तरह चुपचाप खड़ा था। बात काट कर बोला — आपके लिए मैं पराया हू। लेकिन मुन्ने की मा से पूछ आओ, यदि वे भी ऐसा कह दें तो मैं माधवकाका को लेकर वापस चला जाऊगा।

–क्या नाम है रे तेरा? गोपाल! तू चुप रह। यह साली बहनोई की बात है।

–तो अन्दर तो जाने दो कि दरवाजे पर ही झगड़ा करती रहोगी।

–तू अन्दर आ जा गोपाल। लेकिन इनको नहीं। माधवजी, पहले कहिये, कि जी नहीं माना, इसलिए चला आया। तब अन्दर जगह मिलेगी।

राधामाधव इस सशक्त साली के सामने पराजय का भाव बताते हुए बोले —दुरगाजी, बड़ी गलती हो गयी। यहां आकर एक दिन भीख माग गया हू। उस दिन गलत चीज हाथ लगी, तो भी उसे ग्रहण कर गया था। बड़ी भूल हुई। नहीं तो आज इस तरह मुकाबला नहीं करना पड़ता। भगवान ने मेरी प्रार्थना अभी तक सुनी नहीं। नहीं तो इस तरह खाली गोद के आप यहा खड़ी नहीं रहती। आगे-पीछे बच्चों की फौज भी होती।

अनजाने में राधामाधव ने साली-साहिबा का ऐसा मार्मिक स्थल छू लिया, कि वे परास्त हो गयीं। उनसे जवाब देते नहीं बना। वे अन्दर भाग गयीं।

सारे घर मे कोलाहल-सा मच गया। जवाई पाहुने आये हैं। घर के तमाम लोग आकर राधामाधव को घेर कर बैठ गये। अनेक प्रकार के सवाल पूछे जाने लगे। गोपाल चुपचाप एक ओर खड़ा, यह सारा कौतुक देखता रहा।

अन्दर बैठी पारो सकोचभरी प्रसन्नता से भींग-सी गयी।

बड़ी साली माहिवा नन्हे से बच्चे को गोद मे लिये बाहर चली आयीं। पहले गोपाल को बता कर बोलीं — देख गोपाल, यह है मुन्ना। कैसा है? ले, गोद मे ले।

गोपाल ने दोनो हाथ आगे बढा कर धीरे से मुन्ने को गोद मे ले लिया। शिशु रोने लगा।

दुर्गाजी बोली — अजी माधवजी, आप ही सभालिये अपनी धरोहर। आप आ गये हैं, अब तो यह किसी की गोद मे जाना ही नहीं चाहता।

राधामाधव ने मीठी हंसी हंसते हुए कहा — शकुन फल जायं।

पास खड़ी साली की भावजें हंसने लगीं। वे चुप हो गयीं।

बच्चे को नजदीक से देखने के लिए राधामाधव व्याकुल हो उठे। सारी रीत-व्यवहार भूल कर गोपाल से कह बैठे — अरे, वह देख, उसका हाथ ऊपर उठा। लटक रहा है न?

गोपाल ने बच्चे को अच्छी तरह से सभाल लिया।

उपस्थित सब लोगों मे हंसी का ऐसा फव्वारा फूटा, कि घर के अन्तर्भाग मे बैठी पारो ने एकान्त मे होते हुए भी लाज से मुह फेर लिया।

गोपाल नन्हे से शिशु को देखता रहा।

छोटे-छोटे हाथ-पाव, छोटा सा चेहरा, चिड़ियों की चोंच जैसा छोटा-सा मुह फाड़े वह बड़े हलके मधुर स्वर मे रो रहा था। गोपाल ने कहा — माधवकाका, यह तो बिलकुल आप पर गया है।

—उधर मत देखिये माधवजी, पहले बधाई लाइये। हमारी पारो ने सोने जैसा रतन दिया है।

परास्त दुर्गाजी का जवाब देने मे राधामाधव को असीम आनन्द प्राप्त हो रहा था। बोले — पूरी बधाई तो तब मिलेगी, जब कि यह गोद भी भर जाय। यों जिद करके मत बैठिये।

—बधाई से कोई इस तरह कतराता होगा?

–सच कहता हूं, सोने के गहनों से लाद दूंगा।' कहते कहते–राधामाधव ने इक्कीस रुपये निकाल कर साली साहिबा के हाथ में रख दिये।

साली ने नवजात बालक को राधामाधव के सामने कर दिया। लाल रंग के कुर्ते में शिशु इतना अच्छा लग रहा था, कि क्या कहा जाय!

कुछ देर तक बड़ी तृप्ति के साथ बालक को निहारने के बाद नजर उठा कर राधामाधव ने ज्योंहि साली–साहिबा की ओर देखा, कि उस मौन भाषा का पता नहीं क्या अर्थ समझ कर वे अन्दर भाग गयीं।

ससुराल के तमाम लोग राधामाधव के स्वागत-सत्कार में व्यस्त हो गये।

साली साहिबा को दिये हुए इक्कीस रुपयों ने बड़ा काम किया। राधामाधव सारे रीति–रिवाजों के बन्धन तोड़ कर पारो तक पहुंचा दिये गये।

पत्नी के पास कुर्सी पर बैठते हुए राधामाधव ने हौले से पूछा — पारो, घर कब चलोगी?

–अभी चल दूं?

लज्जित होकर राधामाधव ने कहा --अभी नहीं। चालीस दिन होते ही चली आना।

–एक बात बताओ? गोपाल यहां आना चाहता था, या तुम?

–दोनों ही। क्यों गोपाल?

गोपाल ने हां भर दी। पारो ने पूछा --ठहरोगे?

–चाहता तो हूं। लेकिन तुम्हारी बहिनें टिकने नहीं देंगी। भागना पड़ेगा। शाम की गाड़ी से चला जाऊंगा।

–गोपाल को मेरे पास छोड़ जाओ। यहां कुछ दिन रह लेगा। यहां कुछ खायेगा–पीयेगा तो शरीर सुधर जायगा।

–स्कूल भी जाना पड़ता है न? वैसे अन्न का प्रबन्ध वहां भी है।

–क्यों गोपाल मेरे पास रहेगा?

–नहीं। यहां मेरा जी नहीं लगेगा।

–यह मुन्ना है न? इसे खिलाना।

–इतना-सा तो है। बड़ा हो जाय। फिर खिलाऊंगा।

राधामाधव ने कहा --यहां काकी की सेवा करना रे?

सचमुच गोपाल के मन मे वच्चे के प्रति इस समय कोई वहुत प्यार उमड़ा भी नहीं। माधवकाका का द्वितीय प्रस्ताव और भी अधिक दुरूह था। उसने जवाव दिया.-- यहा काकी के घर कौनसी कमी है? जो मेरी सेवा के विना इनका काम नही चलेगा? फिर दिन भर औरतों के पास वैठा क्या करूगा?

-सुना भगवती, यह अव मर्द हो गया है।

पारो ने हंस कर कहा .--दाढी-मूंछे कहा है गोपाल?

-सफाचट्ट। देख लो माधवकाका की मूंछें कहा गयीं?

तीनों की सम्मिलित हंसी से गोपाल की वात प्रमाणित हो गयी।

खा-पी कर, ससुरालवालों का आदर-सत्कार ग्रहण कर, दिन भर इधर-उधर के लोगों से मिलकर, वधाई एकत्रित करके, धन वाटते हुए, राधामाधव अपने गोपाल की अगुली पकड़े दूसरे दिन वीकानेर मे 'वहुत जरूरी काम होने के कारण' लौट आये। आते वक्त पारो से उन्होंने फिर एक वार कह दिया था --पारो, अव तेरे विना तो शायद काम चला भी लू, लेकिन मुन्ने की वहुत याद आयेगी। उसे जल्दी ही भेज देना।

तव पारो ने कहा था —अभी ले जाओ।

-इसके साथ एक नौकरानी भी तो चाहिए!

-अच्छी वात है। थोड़े दिन वाद चाकरी पर हाजिर हो जाऊंगी। सुनो, इसका नाम क्या रखोगे?

-तूं वता?

-मुझे क्या मालूम?

-इसका नाम रखेंगे राजकुमार।

पारो पति की ओर देख कर हसती हुई वोली —जी तो करता है, अभी ही तुम्हारे साथ चल दूं। वहा तो तुम्हें खाने पीने की वड़ी तकलीफ होती होगी! दादी कैसी हैं?

-दादी को छुट्टी मिल गयी। गोपाल से झगड़ा कर वैठी। इसके वाद सुगने की वहू को रखा है। अच्छी लड़की है। घर का सारा काम-धाम सभाल लेती है। कभी किसी काम के वारे मे कहने की जरूरत नहीं पड़ती। गोपाल के साथ

भी उसकी अच्छी पट जाती है। अच्छा, अब चलू ? लोग बाहर बैठे इन्तजार कर रहे होंगे कि अन्दर से कब निकलू। दुर्गति किये बिना छोड़ेंगे थोड़े ही ?

–अब जाओ !

बीकानेर पहुचे, तो रात हो गयी थी। इसलिए बाजार की पूड़ियों से काम चल गया। सुबह गोपाल मीनल को बुलाने गया।

मीनल की तबीयत ठीक नहीं थी। उसकी सास ने आकर दरवाजा खोल दिया। गोपाल ने पूछा —दादी, मीनल को भेज देना।

–वह तो अन्दर बुखार में तप रही है।

गोपाल ने कोई चचलता नहीं बताई। धीर-भाव से वही खड़ा रहा। पूछा —बुखार कब आया ?

–जिस दिन से तुम लोग गये हो, उसी दिन से उसकी तबीयत खराब है।

–दवा दी दादी ?

–गरम उकाली दी थी। आज फिर दे दूगी।

–अभी बुखार है ?

–देख तो ?' दादी के इस आह्वान से गोपाल को कुछ तसल्ली मिली। वह मीनल के पास चला गया।

गोपाल दरिद्रता में ही पला है। धन का अभाव बहुत बुरा होता है, यह वह जानता है। लेकिन इस समय मीनल को इस प्रकार सामने चित्त पड़ी देख कर उसे मालूम हुआ कि पैसे के बिना वस्तुत हालत क्या होती है ?

मीनल आखें बन्द किये सो रही थी। नीचे कुछ भी नहीं--सिर्फ एक टाट का टुकड़ा। ऊपर काले रंग का कम्बल, वह भी जगह-जगह से फटा हुआ। इसके सिवाय कमरे में कुछ भी नहीं। ऊपर के आले में कुछ चिड़ियों ने घोंसले बना रखे हैं--वे निर्विघ्न अपने गोरखधन्धे में व्यस्त हैं।

वह मीनल के पास जाकर बैठ गया। शरीर छू कर देखा। बुखार से तप रहा था। आर्त्त स्वर में पुकारा —कौन, गोपाल ?

–हा, मीनल, मैं हू।

–तू आ गया ?

–आ गया मीनल।

–सुजानदेपर नहीं गया ?

–गया था। कल लौट आया।

–मुन्ना कैसा है गोपाल ?

–बहुत अच्छा। बिलकुल माधवकाका पर गया है।

–तूं कल क्यों नहीं आया, गोपाल ?

–बाजार से पूड़िया ले आया था। खा लीं।

–यहा आ जाता।

–आ जाता, पर रात बहुत हो गयी थी। इसलिए नहीं आया।

–अच्छा चल। चलूं !' कहते हुए मीनल उठ बैठी।

–तुझे बुखार है मीनल। तुझसे चला नहीं जायगा।

–चला जायगा, गोपाल खूब चला जायगा। तूं आ गया है, अब क्यों नहीं चल सकूंगी ? जरूर चल सकूंगी।' कहते हुए उसने अपनी सास से कहा·—मां उकाली का एक प्याला और दे दो। जा आती हूं।

–तबीयत ठीक नहीं है, तो मत जा। राधामाधव ऐसा आदमी नहीं, कि जिसमें दया-माया न हो। कह कर, वे कालीमिर्च की तिक्त कड़वी दवा बनाने चली गयीं।

सास के चली जाने पर, मीनल ने गोपाल का हाथ अपनी छाती पर रख कर कहा —गोपाल, अब तूं आ गया है न ? मैं बिलकुल ठीक हो जाऊंगी। तूं चला गया, तो यहा मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगा। उसी से तो सिर भारी हो गया था। तबीयत खराब हो गयी थी। हे सिरजनहार, भूलचूक माफ करना।

–तूंने ऐसी कौनसी गलती की है मीनल ? फिर किस बात की माफी ?

–इतनी बड़ी दुनिया में इतने सारे आदमियों के बीच अकेला तूं ही पता नहीं कहा से आकर मेरे पास बैठ गया। हाथ जोड़कर, इसीलिए प्रार्थना करती हूं प्रभु से, कि मेरा इतना सुख बना रहे। इसीलिए कह रही हूं, कि भूलचूक माफ कर देना। दंड मत देना।

सास दवा बना लायी। मीनल ने पी ली।

गोपाल ने कहा·—दादी, इसे अस्पताल तक ले जाता हूं। दवा दिला लाऊं ?

पुत्र-शोक के कारण वे तो घर से बाहर निकल नहीं सकतीं। बहू से कहने लगीं —जा बेटा, दिखा ला डाक्टर साब को। गोपाल, तूं आ गया।

लाख वरस की उमर हो तेरी। वैसे इस घर मे तो कहीं कोई पानी की बूद देनेवाला भी नहीं रहा।

कहते-कहते ओढने के फटे हुए पल्ले से वह अपने आसू पोंछने लगी। क्षणमात्र में इस घर का हसता-खेलता पुत्र याद आया। याद आया पति, जिसके साथ इसी घर में उसने जिन्दगी का लम्बा अर्सा गुजार दिया था।

और अव रह गया है यही खण्डहर, जिसमें दो विधवा औरतें कबूतरों तथा उल्लुओं की नजदीक-दूर की आवाज सुनती हुई, करवटें वदल कर रात काट देती हैं। एक माला फेरते हुए, दूसरी शून्यवत् जड़वत् वनी हुई, सन्ध्या से सुवह होने की प्रतीक्षा करती हुई।

गोपाल के साथ-साथ मीनल अस्पताल गयी। दोनों चुपचाप चले जा रहे थे। गोपाल इस स्वल्प समय के अन्तराल के वाद मीनल से वहुत कुछ कहना चाहता था। लेकिन समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वोला —मीनल, मुन्ना वहुत ही अच्छा है।

–अच्छा

–हा, वहुत ही प्यारा।

–अच्छा।

–मीनल, काकी ने मुझसे कहा, 'वहीं ठहर जाऊ।' लेकिन मेरा मन वहा नहीं माना। सो चला आया।

–अच्छा।

–एक वात कहूं?

–वोल।

–उस मुन्ने को देख कर मुझे वड़ी ईर्ष्या-सी हुई मीनल।

–ऐसा नहीं कहते गोपाल।

–तुझसे झूठ नहीं वोलूगा। मुझे डर लगता है, एक दिन पारो-काकी और माधवकाका की आखे वदल जायगी। देख लेना।

–ऐसा कहीं होता है?

–मुन्ना मुझे भी वहुत अच्छा लगा है। लेकिन उसके कारण—

–ऐसी ओछी वात नहीं कहते, गोपाल। ऐसी वात मन में भी नही लाते। वह तेरा सगा भाई ही है।

-तूं ने ध्रुव की कथा नहीं पढ़ी, मीनल ? सौतेले लड़के का अपमान करके उसे निकाल दिया गया था।

-छि आज तूं कैसी पागलपन की बात कह रहा है, रे गोपाल ?

-मैं पागल हूं, मीनल ?

-और नहीं तो, ऐसी बातें कोई करता होगा ?

-अच्छी बात है। पागल ही सही। सभी यही कहते हैं कि पागल का बेटा हूं---इसलिए पागल ही रहूंगा। लेकिन मीनल तूं भी यही कहेगी ?' इतना कहते हुए उसने मीनल का हाथ अपनी मुट्ठी में बन्द करके जोर से दबा दिया। बोला --- आगे से तू कभी यह मत कहना।

मीनल चकित होकर गोपाल की ओर देखती रह गयी।

मोहता-अस्पताल की दवा अत्यन्त चमत्कारपूर्ण मानी जाती है। मीनल का बुखार भी दो-एक खुराक लेते ही हवा हो गया, लिहाजा, यह बात सत्य सिद्ध हो गयी।

एकान्त मिलने पर राधामाधव से गोपाल ने कहा ---माधवकाका, मीनल के पास ओढने-बिछाने तक को कुछ भी नहीं। वह बहुत गरीब है न ?

-हा गोपाल। उन लोगों की हालत बड़ी तंग है।

-अपने पास तो कितने बिस्तर पड़े हैं। एकाधा उन्हें दे दें, तो हमारे यहा कौनसी कमी आ जायगी।

-हूं ? हा। दे दे।

रसोई तैयार हो गयी थी। मीनल ने पुकारा। दोनों थाली सामने रख कर बैठ गये।

भोजन करते हुए राधामाधव ने कहा ---मीनल, आज जरा दादी को यहा भेज देना।

-क्यों ?

-काम है।

-मैं बहुत बड़ा सेठ हूं मीनल। राजा कुबेर की तरह। राजा कर्ण की तरह दान दूंगा। मैं तेरे घर जाकर देख आया हूं---तेरे पास तो ओढने बिछाने तक को कुछ भी नहीं। हमारे यहा पड़े हैं बिस्तरों के ढेर। बर्त्तनों का अम्बार। दादी को भेजना, कि जितना उठा सके, उठा ले जाय।

राधामाधव गोपाल को मना नहीं कर सके, कि दान की बात भी इस तरह कही नहीं जाती। छोटे से दान पर इतना घमण्ड अच्छा नहीं होता। वे जीमने में व्यस्त थे। बीच-बीच में जरूरत की चीजें मांगने के सिवाय उन्होंने कुछ भी नहीं कहा।

मीनल ने कोई जवाब नहीं दिया। लेकिन मन-ही-मन सोचती रही, यह सब बहुत अच्छा नहीं दीखेगा। जो 'नहीं' है, उसे बदला कर 'है' तो बनाया नहीं जा सकता। लेकिन यह प्रयत्न गोपाल ने किया है, यह जान कर स्पष्टत 'नहीं' भी उससे कहा नहीं गया। राधामाधव से मनुहार वह कैसे करवाये? गोपाल के स्नेह को, उसकी आतुरता को वह समझती है। वह अबोध है, उसके दिल को वह चोट नहीं पहुंचा सकती।

मीनल की सास के आने पर राधामाधव ने कहा —सुगने की मां। सुगना तो हम सबको रुला कर चला गया। जगदीश्वर ने उसे अपने पास बुला लिया। उस बड़े हाथवाले के सामने अपना कोई जोर नहीं। लेकिन मांजी, हम सब तो बैठे ही हैं। तूं हमें सुगना ही समझ। उस दिन गोपाल, मीनल को धरती पर सोते देख आया है। घर की हालत क्या है--यह तो जानता ही हूं। लेकिन बिना कुछ बताये, बताओ, तो हम कैसे कुछ कर सकते हैं? देखो तो, यहा इतने सारे बिस्तर, बर्त्तन, भांडे व्यर्थ पड़े हैं। गोपाल ने कहा, कि उनमें से कुछ तुम्हारे काम आ जायगे। सो ले जाओ।

'गोपाल मीनल को कितना चाहता है! दोनों में बड़ा प्रेम है। वही तो कह रहा है कि मीनल का कष्ट उससे देखा नहीं जाता। सो मैंने थोड़ा-सा सामान निकाल रखा है। ले जाओ। आशीस दो कि ये बालगोपाल बड़े होकर इसी तरह परोपकार में मन लगाये रहें।

हा, राधामाधव ने कुछ भी झूठ नहीं कहा। लेकिन यदि झूठ-सच शब्दों द्वारा ही जाचा जा सकता हो, तो एक प्रश्न उठता है, शब्द के मर्म को लोग कितना समझते हैं? राधामाधव ने स्पष्टत कह दिया—'गोपाल मीनल को कितना चाहता है।' दोनों का आपस में बड़ा प्रेम है। 'चाहना' और 'प्रेम' इन दो शब्दों के कितने अर्थ-अनर्थ हो सकते हैं, इसका विश्लेषण करके तो लोग सत्य को जाचने जायगे नहीं। इसके आधार पर झूठ का पता भी नहीं लगेगा। 'नरो वा

कुंजरो' की जो बात कही जाती है, वह ऐतिहासिक घटना है या नहीं, तथा इसके लिए राजा युधिष्ठर को कितने पल नर्क भुगतना पड़ा—इस कथा की सत्यता को भी जाने दें। लेकिन सचमुच मे 'नरो वा कुंजरो' की मर्म-पद्धति, जान-बूझ कर न सही, अनजाने मे पता नही कितने अर्से से चली आ रही है। इसीलिए तो 'गोपाल मीनल से प्रेम करता है' यह कह कर भी लोग सत्य के नाम पर झूठ बोलेंगे।—कि यह प्रेम है शुद्ध सात्विक! बहिन-भाई का प्रेम है। इसके अतिरिक्त प्रकार का प्रेम ससार मे है, इस तथ्य को जानने के बावजूद भी 'नरो वा कुजरो' की भाषा मे अपने अनुकूल अर्थ निकालने वालों की कमी ससार मे कभी नहीं रही।

तभी तो राधामाधव ने सच कहा। तभी तो मीनल की सास ने सच ही समझा।

तभी तो गोपाल ने मन-ही-मन इस झूठ का पता लगा लिया।

दर-असल मीनल की सास अपनी वहू को अन्त करण से प्यार करती है। पुत्र शोक से भी अधिक उसे इस बात का दुख है, कि इस बिचारी की जिन्दगी कटेगी कैसे? पुत्रहीन इस मा के दुख का तो एक दिन अन्त हो ही जायगा। लेकिन इस दुखियारी का अन्त कैसे होगा? जिसकी लम्बी आयु अभी तक बाकी है; हाथ मे रुपये पैसे न होने के कारण वह इस वहू के लिए कुछ भी नहीं कर सकती। लेकिन यदि होते, तो लोक-मर्यादा की परवाह किये बिना वह इस वहू को अभाव के दुख मे नहीं रहने देती। उसे पहनने-ओढने देती। खेलने-कूदने देती। लेकिन किया क्या जाय, चारों ओर के रास्ते बन्द है। कहीं से किसी तरह का सहारा नहीं।

लिहाज़ा, उसने राधामाधव के इस तुच्छ उपहार को सहज रूप से स्वीकार कर लिया।

उस दिन, जब राधामाधव नीद मे खर्राटे भरने लगे, तो गोपाल धीरे से अपने बिस्तर से नीचे उतर कर धरती पर लेट गया। उसे नींद नहीं आई। वह रात भर यही सोचता रहा—मीनल, इसी तरह रोज-रोज, जाने कितने अर्से से धरती पर ही सोती रही है।

गोपाल को अचानक ख्याल आया, कि वह इतने दिन से पढ-लिख नहीं रहा है। फिर भी माधवकाका उसे कुछ नहीं कहते। कहीं मन-ही-मन नाराज तो नहीं हैं? अथवा उन्हे मेरी ओर ध्यान देने की जरूरत ही महसूस नहीं होती?

इस बात का ख्याल आते ही वह पोथी-पत्रे झाड़-पोंछ कर ले आया। माधवकाका के कमरे मे बैठ कर पढने लगा। निश्चय यह किया गया, कि जब तक छुट्टिया हैं, तब तक वह महापुरुषों की तमाम सुलभ जीवनिया पढकर समाप्त कर देगा।

महात्मा विवेकानन्द की एक पुस्तक खोल उसने पढना आरभ किया ही था, कि नीचे से किसी चीज के गिरने और टूट जाने की आवाज आई। पोथी वहीं छोड़ कर नीचे जाकर, उसने देखा, मीनल के हाथ से काच की एक बड़ी-सी बर्नी टूट गयी है। उसमें रखा हुआ सारा घी चारों ओर फैल गया है।

बिचारी मीनल घबरा गयी। गोपाल ने नीचे आकर पूछा — यह क्या किया ?

वह रो दी। बोली —फूट गयी। हाथ से छूट गयी थी।

–आजकल तू बहुत लापरवाह होती जा रही है, मीनल। किसी बात का ध्यान नहीं रखती। पारो काकी आयेंगी तो जरूर डाटेंगी। रोज-रोज इस तरह माफ नहीं किया जा सकता।

मीनल ने कोई जवाब नहीं दिया।

गोपाल ने कहा —अब गयी इस महीने की तनख्वाह ! इस तरह नुकसान करोगी, तो कितने दिन निभेगा ?

मीनल ने गोपाल का यह रुख कभी नहीं देखा था।

हाय, इसी पगले लड़के की हर बात का गूढतम अर्थ निकाल कर, वह अब तक अपने आप को सुरक्षित और आश्वस्त मान रही थी।

एक हाथ से आंसू पोंछती हुई, वह चुपचाप घी बुहारने लगी।

गोपाल बाहर चला गया।

दूसरे दिन रात के अन्धकार में, राधामाधव की अनुपस्थिति में, तकरीबन वैसी की बर्नी गोपाल छिपकर ले आया। घी भी आ गया। मीनल को देते हुए वह बोला —किसी से कहना मत। हर वक्त रोया मत कर। अच्छा मीनल, तुझे कोई तकलीफ होगी, तो तू मुझे नहीं कहेगी ?

उसने कोई जवाब नहीं दिया।

कल तेरे हाथ से जब बर्नी फूट गयी, तो मैं यही सोचता रहा, कि तू ने मुझसे पूछा क्यों नहीं, कि क्या करूं ? मैं उपाय नहीं बताता ? जरूर बताता।

लेकिन तू तो कुछ पूछती ही नही। मैं ही दिनरात तेरे बारे मे सोचता रहूं? तुझे तो मेरी बिल्कुल परवाह ही नहीं?

स्त्रियों का सहज कौशल आज अचानक मीनल के हाथ आ गया; उसने सिर उठा कर, गोपाल की ओर देख कर, मुसकरा दिया। गोपाल अभी तक किशोर वय मे है। लेकिन इस मुसकान का अस्पष्ट अर्थ सम्भवत: वह भी समझ गया। उसे अपनी बात का जवाब मिल गया।

—यदि किसी दिन मेरे साथ तुझे रहना पड़ा, तो इस तरह से हर बार तुझे माफ थोड़े ही कर दूंगा? तूं कुछ तो जवाब दे? बोलती क्यों नही?

मीनल ने मुंह फेर कर आचल में अपनी हंसी छिपा ली।

इस स्वल्प नाटक की चरम-सीमा के आते-न-आते यवनिका गिर पड़ी।

सत्रह :

मुन्ने के साथ पारो के आगमन के समाचार से आज गोपाल, राधामाधव और मीनल बहुत खुश हैं। राधामाधव खूब सज-धज कर स्टेशन जाने के लिए तैयार हो रहे हैं। दो दिन से मीनल घर की साफ-सफाई मे लगी हुई है। आज की सुघड़ व्यवस्था के कारण, मालकिन उसकी सेवाओं से अवश्य सतुष्ट हो जायगी, ऐसा उसे विश्वास है। नवागत अतिथि के सम्मान में अपनी प्रसन्नता जाहिर करने के लिए, उसने आज धुली हुई स्वच्छ साड़ी पहन रखी है। बधाई मे प्राप्त हार भी गले मे है।

गोपाल ने सोउल्लास कहा.—मीनल, आज हमारी राजकुमारीजी का ब्याह है। आज है खुशी का दिन। आज ही काकी आ रही हैं। मुन्ना आ रहा है।

राधामाधव कहने लगे—और आज चूल्हे मे औघड़बाबा भी आ रहे है गोपाल!

—वाह, तब तो चारों ओर से अच्छे समाचार ही मिल रहे हैं। मास्टरजी कहते थे मीनल, कि आज का दिन तेरे लिए भी बड़ा शुभ होगा।

मीनल इस समय सारे व्यतीत और भविष्य से परे प्रस्तुत खुशी में मगन थी। उसने कोई जवाब नहीं दिया। मन ही मन कहा —खुशी का ही तो दिन है। इससे अधिक शुभ दिन कब होगा?

पारो के आते ही मीनल ने आगे बढ कर, नन्हे से शिशु को गोद मे ले लिया। बच्चे को गोद में लेते ही एक अजीब-सी सिहरन उसके सारे शरीर मे फैल गयी —यह शिशु यदि उसके पेट का जाया होता तो? 'फिर मन को बहला कर उसने इस प्रश्न का समाधान भी ढूढ निकाला।—अपनी ही कोख का समझ लो। कितना अच्छा है।

जैसे बहुत दिनों के बाद अपने आधीन राज्य की ओर किसी नरेश का आना हो जाय तो उसका प्राथमिक कर्तव्य यही है, कि सारी व्यवस्थाओ के बीच वह अव्यवस्था को ढूढ निकाले। उसी तरह पारो की नजर सारे घर मे दौड़ गयी। लेकिन चारों ओर सुव्यवस्थित घर-गृहस्थी को देख कर अचानक उसे महसूस हुआ कि उसकी अनुपस्थिति ने यहां तिल भर भी अभाव उत्पन्न नहीं किया। कहीं किसी तरह का चिह्न नहीं, जिसे देख कर कहा जा सके, कि पारो के बिना राधामाधव को किसी तरह का कष्ट हुआ है। इससे उसके अभिमान को चोट पहुची। अभी तक उसे यही विश्वास था कि आलसी राधामाधव को सभालना सिवाय उसके, किसी से सभव नहीं। परिणामस्वरूप राधामाधव पूरी तरह से पारो के अधिकार मे हैं। लेकिन अब इस सारी व्यवस्था को देख कर, वह अपने पति के प्रति क्या तो सहानुभूति प्रकट करे, और पिछले दिनों के कष्ट के लिए माफी भी कैसे मागे? पीहर में बैठी-बैठी, पति के कष्ट की फिक्र करते-करते उसने बड़ी बेचैनी से दिन गुजारे थे। लेकिन आज मालूम हो गया, कि सहज प्रवाह में बहने के अभ्यासी राधामाधव की नैया उसके बिना भी गहरे गभीर पानी में आराम से चलने लगी थी।

शिशु को खिलाती हुई प्रसन्न चित्त मीनल की ओर उसने देखा। उसे महसूस हुआ कि यही है वह स्त्री, जिसने उसके एकछत्र अधिकार पर अप्रत्यक्ष रूप से आक्रमण किया है। साथ ही उसकी नजर गयी उस हार पर, जो अब तक उसके

गले में शोभा पाता रहा है। इस अपरिचित तरुण लड़की के गले में उसे देख कर मारे ईर्ष्या और दुख के उसका अंग-प्रत्यंग जल-सा उठा। जब्त न कर पाने के कारण पारो पूछ ही बैठी —यह हार तुम्हारा है?

मीनल इस भयंकर प्रश्न का आन्तरिक अर्थ या तो समझ नहीं पाई। अथवा उसका ध्यान उस ओर नहीं था। इसलिए उसने हंस कर यही कहा:—आपकी गोद भरी है। राजा मुन्ना इस घर में आया है। मुझे भी बधाई तो मिलनी ही।

कुछ तिक्त स्वर में पारो ने कहा:—ऐसी बधाई तो मैंने कहीं सुनी नहीं।

राधामाधव पत्नी के साथ आये हुए सामान को व्यवस्थित रूप से रखने में लगे हुए थे। यह बात उनके कानों तक पहुंच गयी। बोले:—मैंने दिया है, भगवती। हमारे घर राजकुमार आ गया है न? ऐसे मौके पर इस बिचारी को बधाई नहीं मिलेगी तो कब मिलेगी? अजी, तुम्हारे इस साहब-जादे के आते ही चार सौ रुपये इस धरती से उठ गये। हा!

मीनल की उपस्थिति में पति से तर्क-वितर्क करने का साहस पारो को नहीं हुआ। एकान्त मिलते ही उसने पूछा—उस बुढ़िया को छोड़ कर, इसे रसोई बनाने क्यों रखा था? मैं सब समझती हूं।

—क्या समझी?

—तुम दूध-पीते बच्चे नहीं हो।

—नहीं हूं।

—उस बुढ़िया को क्यों छोड़ दिया?

—गोपाल से झगड़ा कर बैठी। उसने उसे निकाल दिया।

—हर बात में गोपाल को बीच में मत लाया करो। मैं सब समझती हूं। छि: लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे?

—बता दो। क्या कहेंगे?

—यही, कि घर की लुगाई दो दिन के लिए बाहर गयी थी, कि मर्द से रहा नहीं गया। घर में किसी जवान विधवा को रख लिया।

राधामाधव साधारणतया क्रोधित नहीं हुआ करते। लेकिन इस कुत्सित आरोप से वे अस्थिर हो उठे। आज पारो शिशु को लेकर पहली बार घर आई है। इसलिए वे कोई कठोर बात कहना नहीं चाहते थे। बोले:—सुनो, आज के शुभ दिन में कोई कड़वी बात कहना नहीं चाहता। लेकिन लगता है, कि तुम

खींच-खींच कर मेरे मुह से यही निकलवाना चाहती हो। तुम्हारे यहा मामा-भाजी का रिश्ता होता है कि नहीं ? आज के दिन झगड़ा मत कर। किसी दुखिया विधवा को इस तरह कहने से पाप लगता है।

–और किन-किन भांजियों को सोने का हार बधाई मे दिया है ?

–किसी को नहीं।

–सिर्फ इसी को न ?

–हा, उसी को। वापस ले लू ?

–मुझे क्या मालूम ?' कहते हुए वह जाने लगी। पति ने उसका हाथ पकड़ कर रोक लिया। कहा — पारो, सुन। तुझे आज हो क्या गया है ? तुझे तो मालूम है, कि तेरे बिना मेरी कोई गति नहीं। दो दिन हुए न हुए, भागा-भागा तेरे पास चला आया था। रही हार की बात, सो तू कहेगी, उतने बनवा दूंगा।

पारो ने कठोर होकर कहा — इस साप को तो मै छाती पर नहीं रख सकती !

–नौकरी से निकाल दू ?

–हा। आज ही।

–गरीब है। तुम्हें तो मालूम है, इसके आगे-पीछे कोई नहीं। गोपाल किसके हाथ की खायेगा ?

–रसोई बनानेवालियों की कमी नहीं। बहुत मिल जायगी।

–अच्छी बात है। ऐसा ही करूगा। देखता हू, मीनल सचमुच अभागी ही है। उसकी जरा-सी खुशी भी किसी से देखी नहीं गयी। तुम्हारे मुह से इतनी ओछी बात सुन कर, जानती हो लक्ष्मी, आज क्या करने को जी चाहता है ?

पारो ने पूछा नहीं।

राधामाधव ने जब्त कर लिया। पारो को छोड़ कर, बाहर निकल आये। अपने कमरे से बाहर कदम रखते ही उन्होंने देखा, मीनल दरवाजे पर खड़ी है। उसने सब कुछ सुन लिया था।

गले का हार उतार कर, हथेली में रख कर, भर्राए हुए कठ से, आगे बढ कर उसने कहा — भांजी कह कर बधाई में जिसे यह हार दिया था, मामा कह कर उसे यों-का-यों लौटा रही हू।

इस अपमान से राधामाधव की आंखों में आंसू छलक आये। बोले:—यही घर-संसार है, मीनल। इसी सुख के लोभ में एक दिन वैराग्य छोड़ कर मैं यहां चला आया था!

मीनल के खुले हाथ में हार पड़ा रहा। दांत भींच कर राधामाधव बाहर निकल आये।

इसी समय गोपाल हांफता हुआ आकर कहने लगा:—माधवकाका राजकुमारीजी के ब्याह में दो मील लम्बा जलूस निकला आज। ये हाथी, ये घोड़े, ये सिपाही। ऐसी बारात...

घर के शान्त, खामोश, स्तब्ध वातावरण में उसकी बात को किसी ने उत्साह से नहीं सुना। राधामाधव बिना उसकी पूरी बात सुने ही बाहर चले गये।

मीनल ने हार पारो के चरणों के पास रख दिया। हाथ जोड़कर प्रणाम किया। बोली.—मैं जाती हूं। भूल-चूक माफ करना।' इतना कह कर बिना किसी ओर देखे, वह जाने लगी।

पलक झपकते ही गोपाल किसी भयंकर दुष्काण्ड की चिन्ता के मारे, परिस्थिति की विषमता को समझ गया। उसकी समस्त शिराओं का रक्त मस्तिष्क में एकत्रित हो गया। उसे लगा, कि उसकी इस मीनल का जरा-सा सुख भी किसी से बर्दाश्त नहीं होता। मेरा थोड़ा-सा सुख किसी से सहा नहीं जाता। इसीलिए पारो काकी ने आते ही इसे निकाल दिया है। क्षण मात्र में ही किसी घटना विशेष के घटित हो जाने का आभास भी उसे मिल गया। इसी पल में उसने अपने कर्त्तव्य का निश्चय कर लिया।

उसने दोनों भुजाएं फैला कर रास्ता रोक लिया। चीख कर बोला:— काकी ने तुझे निकाल दिया? मैं जानता था, यही होने वाला है। यह घर मेरा नहीं है, यहां तुझे जोर जबर्दस्ती से नहीं रख सकता। अभी तक मेरा अपना घर सही सलामत मौजूद है। क्या हुआ जो टूटा-फूटा है, इतना बड़ा नहीं, क्या हुआ जो मेरे पास पैसे नहीं? मैं गरीब सही, फिर भी तेरा पालन-पोषण मैं कर सकता हूं। मुझे अपने धन का इतना अभिमान नहीं। आज भी हर महीने मेरे पास चालीस रुपये आते हैं। हम दोनों का उसमें गुजारा हो

जायगा। चल मीनल, रहने दे इनका धन, ऐश्वर्य, सुख सब इन्हीं के पास! देखता हू, वहा से तुझे कौन निकालता है?

मारे उत्तेजना के मीनल का हाथ पकड़ कर, उसे घसीटता हुआ वह अपने घर की ओर चला।

यह सारी बात पारो की समझ में किसी तरह से नहीं आ रही थी। मारे घृणा के उसका चेहरा पीला पड़ गया।

रास्ते में बहुत से लोगों ने देखा, कि गोपाल एक तरुण स्त्री को घसीटता हुआ, बक-झक करता हुआ, अपने घर की ओर उसे ले जा रहा है। आश्चर्य-चकित से सब लोग उसकी ओर देखते रहे। सोचते रहे — गोपाल भी, कहीं पागल तो नहीं हो गया है?

गोपाल के घर में चारों ओर कूड़ा-कचरा पड़ा है। धूल जमी हुई है।

हत्-बुद्धि किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी मीनल गोपाल के साथ-साथ चली आई।

अपने घर लाकर गोपाल ने उससे कहा —यह मेरा घर है। मेरा! यहां से तुझे कोई नहीं निकाल सकता। किसी समय मेरे माता-पिता यहा रहते थे। आज उनका कोई नामो-निशान नहीं। वे चले गये वैकुण्ठ। तेरा भी पति तुझे छोड़ कर चला गया। लेकिन इससे क्या हुआ? आज यहा है शाति। अब कोई चीखता-चिल्लाता नहीं। आज यहां मेरा एकछत्र राज्य है। यह घर मेरा है। तूं किसी बात की फिकर मत कर। मुझे रोटी बना कर देना। इस घर को सभालना ।

'मैं किसी की परवाह नहीं करता। सूर्य-चन्द्र और धर्म की साक्षी देकर मै तुझ विधवा से ब्याह करूंगा! मैं किसी से नहीं डरता। न माधवकाका से, न न्यातगंगा से, न और किसी से!

जोश में वह और भी बहुत कुछ कहता रहा। मीनल को अब होश आया। गोपाल उसे घसीटते हुए पूरा रास्ता पार कर आया है। उसे याद आया, गली-मुहल्ले के लोगों ने अब तक सब कुछ जान लिया होगा। जिस प्रचण्ड लाछना की कल्पना के मारे, वह आज तक घुलती रही है, वही दुर्दान्त घटना आज सबके सामने प्रत्यक्ष होकर गुजर गयी।

गोपाल को उसी तरह बड़बड़ाते हुए छोड़ कर वह जाने लगी।

गोपाल ने पूछा —मीनल, तुम कहां जा रही हो?

मीनल ने दृढ स्वर में कहा —घर !

–फिर मेरा क्या होगा ?

मीनल ने कोई जवाब नहीं दिया।

–तुम मुझे इस तरह छोड कर चली जाओगी, मीनल ?' कहते हुए उसने मीनल का रास्ता रोक लिया।

–रास्ता छोड़ दो। मुझे जाने दो।

–मीनल, तुम्हारा सारा प्यार झूठा था ? तुम्हारा सारा दुख झूठा था ?

–गोपाल, मैं कहती हूं, रास्ता छोड़ दो।

–मैं तुझसे ब्याह करूंगा मीनल। तेरे लिए मैं सारे समाज से लड़ने को तैयार हूं। मुझे किसी की परवाह नहीं। तुम मत जाओ।

मीनल आगे बढ़ी।

वह चीखा —मीनल !

उसे कोई प्रत्युत्तर नहीं मिला। मीनल दरवाजा खोल कर बाहर निकल गयी।

अठारह :

जिसके लिये वह माधवकाका और पारो–काकी को छोड़ कर इतना बड़ा काण्ड करके इस घर में चला आया था, उस मीनल को इस तरह जाते देख कर, वह चुप हो गया। अब किसी से क्या कहे ?

उसे मालूम हुआ, कि कितना बडा पागलपन वह कर गुजरा है।

–अब वह किसी को कैसे मुंह दिखायेगा ?

–ओह, उससे कितनी बड़ी भूल हो गयी !

–अरे, तो ये समाज–सुधार और विधवा–विवाह की तमाम बातें झूठी हैं ?

–पागल का लड़का क्या हमेशा पागलपन ही करता रहेगा ?

–छि इसी मीनल के पीछे वह सारे समाज से लड़ना चाहता था! इसी मीनल के पीछे? जो उसे इस अथाह समुद्र में डूबने के लिए अकेला छोड़कर चुपचाप चली गयी?

–अब वह लौट कर किसके पास जाय?

वह घुटनों में मुह डाल कर वहीं बैठ गया। आज उसे अपना सारा व्यतीत याद आया। मां याद आई। पिता याद आये। सारा इतिहास याद आया। कहीं किसी तरह की राहत नहीं। मुक्ति का कोई उपाय नहीं।

इसी समय पास से वाजे वजने की आवाज सुनाई दी। राजकुमारीजी के भाग्य में तो दुल्हा लिखा हुआ था, उसे वह मिल गया। राधामाधव का भी भाग्य प्रतापी था, इसलिए औघड़वावा उनके शहर में ही नहीं, उनके घर पधार रहे थे।

एक अभागा था वह, जिसके हाथ कुछ भी नहीं लगा—और उसे आज इस दुर्भाग्य के लिए सबसे ज्यादा कीमत अदा करनी पड़ी।

मीनल नहीं चढा सकी, अर्ध्य अपने भाग्य के सुप्रभात को।

चराचर जगत की इस छोटी-सी घटना में पिस कर यदि गोपाल नष्ट हो जाय, तो यह उसकी नादानी है, मूर्खता है—पागलपन ही तो है!

गोपाल के घर के पास से औघड़वावा अपने दल-वल सहित राधामाधव के घर की ओर जा रहे हैं। आगे-आगे राधामाधव चल रहे हैं। पीछे झाझ-करताल-नगाड़े वजाते हुए, भक्तों का समुदाय उनके साथ-साथ चल रहा है।

गोपाल अपनी छत से इस अद्‌भुत व्यक्ति को देखता रहा। नंग-धड़ंग आदमी वड़े मजे में निर्लज्ज-सा चला जा रहा है। औरत-मर्द सब झुक-झुक कर उसे प्रणाम कर रहे हैं। चरणधूलि ले रहे हैं।

जलूस के गुजर जाने के बाद भी गोपाल थोड़ी देर तक अपनी छत पर खड़ा रहा।

औघड़वावा राधामाधव के घर आकर मृगछाला पर विराजमान हो गये। वोले—माधव, घर तो काफी अच्छा मालूम होता है।

–आपकी दया है, प्रभु।

इस माया से मुक्ति ही परम पद प्राप्ति का साधन है, राधामाधव। मनुष्य इसी में भरमाया रह कर, सारा जीवन व्यतीत कर देता है। अन्त में उसके हाथ कुछ भी नहीं लगता।

-यही बात है, बाबा।

इसी समय भीड़ चीर कर गोपाल वहां उपस्थित हो गया। एक क्षण के लिए वह इस सन्तशिरोमणी की ओर देखता रहा—इसी तरह अस्त-व्यस्त, नंगधड़ग, विचित्र बातचीत करने पर उसके पिता को बांध कर बिठा दिया गया था।

और एक यह आदमी है, जिसके प्रति प्रदर्शित की जानेवाली भक्ति सीमाहीन है। इसके प्रति किसी को कोई शिकायत नहीं।

साथ ही उसे अपना पागलपन याद आया। अब तक सब लोगों को मालूम हो गया होगा कि मैं मीनल का हाथ पकड़ कर जबर्दस्ती उसे अपने घर ले जा रहा था। उसके पाप की कथा का इतिहास मालूम होते ही उसे पागल कह कर ये सब फिर बांध कर बिठा देंगे।

-तो क्या सारे जीवन, पिता की तरह उसे भी बंध कर रहना होगा?

इस कल्पना से भयभीत गोपाल औघड़बाबा के सामने घुटने टेक कर बैठ गया। उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। बाबा के सामने उपस्थित लोगों का गुस्सा खामोश ही रहा।

बाबा कहने लगे :—इस माया-मोह के कारण ही हमें अच्छे-बुरे का डर-भय बना रहता है। नहीं तो अच्छा-बुरा कुछ भी नहीं। हम तो सिर्फ निमित्त मात्र हैं। जिस चतुर्भुज मुरलीमनोहर को हमने अपने सारे कर्म-काण्ड सौंप दिये, वही आकर उनका फलाफल ग्रहण कर लेता है।

सब लोग ध्यान लगाकर बाबा का प्रवचन सुन रहे थे। ऐसा शुभ अवसर बारम्बार थोड़े ही मिलता है?

गोपाल अपनी स्थिति पर विचार कर रहा था —उसने जो कुछ किया है, अपनी आत्मा की आवाज सुन कर। यदि भगवान श्रीकृष्णचन्द्र की इच्छा का निमित्त बनने के कारण उससे कोई अपराध हो गया है—तो फिर उनसे कह दो बाबा—कि मुझे माफ कर दें।

लेकिन प्रस्तुत अगम अन्धकार में अपने भयंकर अपराध के लिए क्षमा की गुंजाइश उसे कहीं दिखाई नहीं दी।

वावा कहते रहे :—वेटा, तभी तो भगवान ने गीता मे कहा है—योगियो की समस्त कर्म-लीला न्यारी होती है। सव लोग वस्त्र-सज्जा में मगन है—तो योगी नग-धड़ग घूमता फिरता है। सव लोग आहार-विहार के नाना प्रकार के सुखों मे व्यस्त रहते हैं, तो योगी आत्मा के उत्थान के प्रयत्न में लगा रहता है। जो सवके लिए दिन है, वही सवके लिए रात है।

गोपाल मन ही मन व्याकुल होकर कहने लगा —यह पागलपन नहीं तो और क्या है ?

वावा का उपदेश चलता रहा। राधामाधव पुजापे की फिक्र में लगे रहे। नन्हे शिशु को लाकर वावा के चरणों के पास सुला दिया गया। वावा ने उसकी ओर देख कर परम प्रसन्न होकर, मुसकरा कर आन्तरिक आशीर्वाद दिया।

उनका उपदेश चलता रहा — योगी दूसरे का दर्द अपना दर्द समझता है। वह दूसरों के सुख से स्वय सुखी होता है। वह जो कुछ कर सकता है, वह सर्वोदय के लिए सवके लिए। सकल ससार के कल्याण की कामना से !

गोपाल अव तक चुपचाप वैठा था।

अचानक वह जोर-जोर से रोने लगा। उसने अपने तमाम कपड़े फाड़ डाले। वावा के चरणों में सिर पटक-पटक कर कहने लगा — मुझे अपनी शरण में ले लो। मुझे अपनी शरण में ले लो !

इस अप्रत्याशित घटना से सब चौंक उठे। पारो अन्दर वैठी थी, वह उठ कर वाहर चली आई।

गोपाल वावा के चरणों में लोट गया। माथा धुन कर विलाप करने लगा — वावा, तुमने जो कुछ कहा है, वही सव मैंने किया है। लेकिन उसे ही ये सव पागलपन कहते हैं। मुझे इसके लिये ये सब वाध कर विठा देंगे। मैं वध कर, निर्जीव रहना नहीं चाहता। आज मैंने सव कुछ कृष्णार्पण किया। अपनी तमाम महत्वाकाक्षाए, अपने तमाम शेष-स्वप्न आपके श्रीचरणों में विसर्जित करता हू।

उपस्थित जन-समुदाय में कुछ हलचल हुई। लेकिन कहीं-से किसी तरह का विरोध दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

गोपाल रोता जाता और चीखता जाता — मुझे दीक्षा दो वावा, मुझे दीक्षा दो।

बाबा ने उसे उठाते हुए कृपापूर्ण स्वर में कहा — तेरा कल्याण हो बेटा। तू बहुत दुखी मालूम पड़ता है। आ, तुझे महाप्रभु के श्रीचरणों में जरूर स्थान मिलेगा।

गोपाल के इस बाल्य-सन्यास की घटना के कुछ साक्षी आज भी सुलभ हैं। उस दिन उसके उस करुण वक्तव्य को सुन कर लोगों ने कहा.— कहा था न, ऐसा एक दिन होगा ही। होकर ही रहा।

उन सबको इस सभाव्य की बात मालूम थी। तभी अन्तरिक्ष में स्थित भगवान को बीच में लाकर एक स्वर में सबने कहाः— भाग्य किसी का इतना न रूठे। बिचारा भीखमचंद निर्वंश हो गया।

राधामाधव ने आंसू पोंछ कर, इस अचिन्त्य घटना से दुखित होकर किसी तरह इतना ही कहा — आज से तुझे श्रीवल्लभ के चरणों में सौंपा गोपाल। वे ही तेरी रक्षा करें।

पारो आगे बढ़ कर, गोपाल को जबर्दस्ती उठा लाना चाहती थी। लेकिन इतनी भीड़ में, सारे मर्दों के बीच वह जा नहीं सकी।

मीनल अपने घर में सिर पीट-पीट कर व्यर्थ ही रोती रही।

बाबा अपने दल-बल के साथ जब जाने लगे, तो सिर झुकाये गोपाल द्वारा उनका अनुसरण किये जाने पर किसी ने उसे रोका नहीं।

इति शुभ श्री :

यह

है

एक

सोहम्-प्रकाशन

[श्रेष्ठ और मौलिक साहित्य के प्रकाशक]

पुस्तक खरीद कर पढ़ने का अर्थ है:—
साहित्य और उसके स्रष्टा का सम्मान।